Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

3905

41
F9M

* धर्मो रक्षति रक्षितः *

3136

मन्त्र [illegible]हिमा

Q2:417
152F9M

पं० मदनमोहन मालवीय ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मक ग्रन्थ
लाल शर्मा
लाल श
तथा वे
अशोक
प्रसाद
परमे

Q2:417
152F9M

Q2:417 31
152F9M
Malaviya, MM
... ahima.

VARADHYA
MANDIR
Varanasi

शास्त्री १२
शास्त्री १
२
झा १२
७

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

Q2:417
152 F9M

A.17
3136
Acc. No. 3905

SHRI JAGADGURU VISHWARADHYA JNANAMANDIR
(LIBRARY)
JANGAMAWADIMATH, VARANASI

*****

Please return this volume on or before the date last stamped
Overdue volume will be charged 1/- per day.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

...त्मक ग्रन्थ
...लाल शर्मा
...ी लाल श...
...तथा वे...
...अशोक...
...न्द्रप्रसाद...
...ीपरमे...

Q2:417
152F9M

Q2:417 31
152F9M
Malaviya, MM
...ahima.

...VARADHYA
...MANDIR
...anasi

...२
...ड़ शास्त्री १२...
शास्त्री १...
२...
...झा १२...
७...

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मन्त्र-महिमा।

वेद सब धर्मों का मूल है।

जैसा महाभारत में लिखा है—

सत्यान्नास्ति परो धर्मो नानृतात्पातकं परम्।
न च वेदात्परं शास्त्रं नास्ति मातृ समो गुरुः॥

सत्य से बड़ा कोई धर्म नहीं, झूठ से बड़ा कोई पाप नहीं।
वेद से बड़ा कोई शास्त्र नहीं, माता के समान कोई गुरु नहीं॥

यह बात सभी विद्वान् जानते हैं कि पृथ्वी मंडल पर वेद के समान प्राचीन कोई ग्रन्थ नहीं है। वेद सब धर्मों का मूल है और वह जगत के समस्त प्राणियों के हित के लिये है। यह विदित है कि वेद की चारों संहिताओं में एक २ अक्षर के उच्चारण करने के उदात्त, अनुदात्त अथवा स्वरित स्वर नियत हैं। पूर्व काल में द्विजों की कन्याओं का उपनयन संस्कार होता था और वेद उनको पढ़ाया जाता था। किन्तु वर्तमान कल्प में यह प्रथा बन्द कर दी गई और चिर प्रचलित मर्यादा के अनुसार विधि पूर्वक ब्रह्मचर्य के साथ शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष इन छः अङ्गों के साथ स्वर संयुक्त वेद उन्हीं द्विजाति अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के बालकों को पढ़ाया जाता था, जिनका शास्त्र रीति से उपनयन संस्कार किया

Acc. No. 3905

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जाता था और जिनको कठोर नियमों का पालन कराया जाता था। और न केवल शूद्रों को किन्तु ब्रह्मवादिनियों को छोड़ कर सामान्यतया ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य स्त्रियों को भी वेद नहीं पढ़ाया जाता था। किन्तु ऋषियों को यह इष्ट था कि सब प्राणियों को वेद के उपदेश का लाभ प्राप्त हो। इस लिये ऋषियों ने वेदों का अर्थ लोक भाषा में प्रकाश करना अपना कर्त्तव्य समझा और महर्षि वेद व्यास जी ने लोक के हित के लिये एक वेद को ऋक्, यजुः, साम, अथर्व नाम चार विभागों में बांट कर पीछे वेद का अर्थ अपने समय की लोक भाषा संस्कृत में 'श्रीमन्महाभारत' में सब प्राणियों के हित के लिये और विशेष कर स्त्री और शूद्र तथा उन और लोगों के लिये जिनको वेद नहीं पढ़ाया जाता था, बहुत उत्तम रूप में प्रकाशित किया।

श्रीमद्भागवत में लिखा है—

द्वापरे समनुप्राप्ते मुनिर्दिव्येन चक्षुषा।
सर्व वर्णाश्रमाणां यद्दध्यौ हित ममोघटृक्॥

द्वापर युग के आने पर महर्षि वेद व्यास ने दिव्य दृष्टि से यह बात विचारी जिससे चारों वर्णों और आश्रमों के प्राणियों का हित हो, और जैसा महाभारत ही में लिखा है—

तपसा ब्रह्मचर्येण व्यस्य वेदं सनातनम्।
इतिहासमिमं चक्रे पुण्यं सत्यवती सुतः।
लोकानां च हितार्थाय कारुण्यान्मुनि सत्तमः॥

तपस्या से, ब्रह्मचर्य से, एक वेद को चार भाग में बांट कर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सत्यवती के पुत्र मुनियों में श्रेष्ठ वेद व्यास जी ने दया के भाव से लोक अर्थात् जगत के प्राणियों के हित के लिये इस महाभारत नाम इतिहास को रचा। भागवत में भी लिखा है—

स्त्री शूद्र द्विज बन्धूनां त्रयी न श्रुति गोचरा।
कर्म श्रेयसि मूढ़ानां श्रेय एवं भवेदिह।
इति भारतमाख्यानं कृपया मुनिना कृतम्॥

इस बात को सोचकर कि स्त्री शूद्र और अन्य जातियों के प्राणियों को जिनको वेद सुनने में नहीं आता, अपने धर्म कर्म का ज्ञान इसी प्रकार से (लोक भाषा के द्वारा) हो, इस दया के भाव से महामुनि ने भारत की कथा लिखी।

उसी भागवत में दूसरे स्थल पर स्वयं वेद व्यास भगवान् का वचन है—

धृत व्रतेन हि मया······
भारत व्यपदेशेन ह्याम्नायार्थश्च दर्शितः।
दृश्यते यत्र धर्मादि स्त्री शूद्रादिभिरप्युत॥

कि मैंने व्रत लेकर महाभारत के नाम से वेद का अर्थ भी प्रकाश कर दिया, जिसमें स्त्री शूद्रादि भी सब लोग धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पदार्थों का उपदेश प्राप्त कर सकते हैं। महाभारत में, भागवत में, विष्णु पुराण में, शिव पुराण में तथा अन्य पुराणों में वेद का अर्थ विपुलता के साथ लिखा गया है। इसके अनेक उदाहरण हैं, किन्तु इसका एक बहुत उज्जवल उदाहरण विष्णु पुराण में है। वेदों में पुरुष सूक्त प्रसिद्ध है। प्रायः प्रत्येक विद्वान् ब्राह्मण को वह कंठ रहता है। वह पुरुष

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सूक्त उसके शब्दों को थोड़ा ही बदल और घटा बढ़ा कर विष्णु पुराण में पूरा दिया हुआ है। उसमें का प्रधान अंश नीचे लिखते हैं:—

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
सर्व व्यापी भुवः स्पर्शादत्यतिष्ठद्दशांगुलम् ।
यद्भूतं यच्च वै भाव्यं पुरुषोत्तम तद्भवान् ॥
त्वत्तो विराट् स्वराट् सम्राट् त्वत्तश्चाप्यधि पूरुषः ।
अत्यरिच्यत सोऽधश्च तिर्यक् चोर्ध्वं च वै भुवः ॥
त्वत्तो विश्वमिदं जातं त्वत्तो भूत भविष्यती ।
त्वद्रूप धारिणश्चान्त र्भूतं सर्वमिदं जगत् ।
त्वत्तो यज्ञः सर्व हुतः पृषदाज्यं पशुर्द्विधा ॥
त्वत्तो ऋचोऽथ सामानि त्वत्तश्छन्दांसि जज्ञिरे ।
त्वत्तो यजूंष्य जायन्त त्वत्तोऽश्वाश्चैक तोदतः ।
गावस्त्वत्तः समुद्भूतास्त्वत्तोऽजा अवयो मृगाः ॥
त्वन्मुखाद्ब्राह्मणास्त्वत्तो बाह्वोः क्षत्रमजायत ।
वैश्यास्तवोरुजाः शूद्रास्तव पद्भ्यां समुद्गताः ॥
अक्ष्णोः सूर्योऽनिलः श्रोत्राच्चन्द्रमा मनसस्तव ।
प्राणेन सुषिराज्जातो मुखादग्निरजायत ॥
नाभितो गगनं द्यौश्च शिरसः समवर्तत ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दिशः श्रोत्रात् क्षितिः पद्भ्यां त्वत्तः सर्वमभूदिदम् ॥
व्यक्त प्रधान पुरुष ! विराट् सम्राट् स्वराट् तथा।
विभाव्यतेऽन्तः करणैः पुरुषेष्वक्षयो भवान् ॥
सर्वस्मिन् सर्व भूतस्त्वं सर्वः सर्व स्वरूप धृक्।
सर्वं त्वत्तस्ततश्च त्वं नमः सर्वात्मनेऽस्तुते ॥

इसी रीति से प्राणियों के हित में निरत ऋषियों ने संपूर्ण वेद का अर्थ उस समय की प्रचलित सरल लोक भाषा संस्कृत में लिख कर जगत का असीम उपकार किया।

इतिहास पुराण वेद के समान हैं।

इसी कारण वाल्मीकीय रामायण और महाभारत तथा भागवत आदि पुराणों को पांचवां वेद कहते हैं।

छान्दोग्य-उपनिषद् में लिखा है—

'ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद चौथा आथर्वण वेद और इतिहास पुराण पाँचवां वेद हैं'।

भागवत में भी लिखा है—

"इतिहास पुराणं च पंचमो वेद उच्यते।"

'इतिहास पुराण को पांचवां वेद कहते हैं'।

महाभारत के विषय में उसी में ऋषियों का वचन है कि यह कृष्ण द्वैपायन व्यास रचित वेद है और उन्होंने इसको "नाना शास्त्रोपबृंहिता' 'वेदैश्चतुर्भिः संयुक्ता' 'पुण्या' 'पाप भयापहा' 'ब्राह्मी संहिता' अर्थात् अनेक शास्त्रों से बढ़ाई गई, चारो वेदों के अर्थ से युक्त, पुण्य बढ़ाने वाली, पाप और भय

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

को दूर करने वाली ब्राह्मी (वेद की) संहिता कह कर वर्णन किया है।

इसी प्रकार भागवत के विषय में लिखा है कि उसमें श्लोक श्लोक में पद पद में वेद का अर्थ भरा है। पुराणों में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि पुराण चारों वर्णों के लिये कल्याणकारी हैं, किन्तु स्त्री और शूद्रों के लिये विशेष कर मंगलकारी हैं। भविष्य पुराण में लिखा है कि राजा शतानीक ने सुमन्तु ऋषि से पूछा कि महाराज! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन तीन वर्णों के लिये तो वेद, वेदांग, और मनु आदि धर्मशास्त्र प्राप्त हैं, दीन शूद्र लोग धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का साधन कैसे करें? इनके चतुर्वर्ग के पाने के लिये तथा चारों वर्णों के कल्याण के लिये कौन से शास्त्र हैं? यह आप मुझे बताइये। इस के उत्तर में सुमन्तु ऋषि ने कहा—

साधु साधु महाबाहो शृणु मे परमं वचः।
चतुर्णामपि वर्णानां यानि प्रोक्तानि श्रेयसे॥

धर्म शास्त्राणि राजेन्द्र शृणु तानि नृपोत्तम।
विशेषतस्तु शूद्राणां पावनानि मनीषिभिः॥

अष्टादश पुराणानि चरितं राघवस्य च।
रामस्य कुरु शार्दूल धर्म कामार्थ सिद्धये॥

तथोक्तं भारतं वीर पाराशर्येण धीमता।
वेदार्थं सकलं योज्य धर्मशास्त्राणि च प्रभो॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कृपालुना कृतं शास्त्रं चतुर्णामिह श्रेयसे ।
॥ वर्णानां भव मग्नानां कृतं पोतो ह्यनुत्तमम् ॥

हे महाबाहो, आपने अच्छा पूछा—आप मेरे सब से उत्तम बचन को सुनिये। जो चारों वर्णों के कल्याण के लिये धर्म शास्त्र कहे गये हैं और विशेष कर जो शूद्रों को पवित्र करने वाले हैं, उनको सुनिये। सब वर्णों के धर्म, अर्थ, काम की सिद्धि के लिये अठारहों पुराण और रामायण लिखे गये और इसी प्रकार सब वेदों के अर्थ और धर्म शास्त्र को मिला कर वेद व्यास जी ने महाभारत को रचा। वे कृपालु थे। उन्होंने चारों वर्णों के प्राणियों के कल्याण के लिये यह शास्त्र लिखा। जो जो चारों वर्णों के लोग संसार सागर में गोता खा रहे हैं। उनके लिये उन महर्षि ने सब से उत्तम यह नौका रच दी।

इन बचनों से स्पष्ट है कि—

इन ग्रन्थों के पढ़ने का सब को अधिकार है।

तथापि कुछ विद्वानों को यह भ्रम है कि स्त्रियों और शूद्रों को इन ग्रंथों के पढ़ने का अधिकार नहीं है, केवल सुनने का अधिकार है। यह भ्रम सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है।

बाल्मीकीय रामायण में जिसको 'वेदैश्च संमितं' वेदों के बराबर मानते हैं, आदि के अध्याय में लिखा है—

पठन् द्विजो वागृषभत्वमीयात्,
स्यात्क्षत्रियो भूमि पतित्वमीयात्।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वणिग्जनः पण्य फलत्वमीयात्,
जनश्च शूद्रोऽपि महत्वमीयात् ॥

कि उसको पढ़ने वाला—ब्राह्मण, बोलने वालों में श्रेष्ठ होता है।
क्षत्रिय भूमि का स्वामी होता है।
वैश्य व्यापार में लाभ उठाता है।
और शूद्र भी बड़प्पन पाता है।

ऐसा ही रामायण के अन्त में भी लिखा है—

एतदाख्यान मायुष्यं पठन् रामायणं नरः।
स पुत्र पौत्रो लोकेऽस्मिन् प्रेत्य चेह महीयते॥

जो प्राणी इस रामायण की कथा को पढ़ता है, वह इस लोक में पुत्र पौत्र और सुख और परलोक में आदर पाता है। महाभारत के भी पहले ही अध्याय के अन्त में लिखा है कि जो कोई पवित्र होकर श्रद्धा भक्ति सहित इस अध्याय को पढ़े वा सुने वह यहां दीर्घायु और कीर्ति और अन्त में स्वर्ग को पावे। और अन्त के पर्व में भी लिखा है कि जो कोई सावधान होकर इस भारत की कथा को पढ़ेगा, वह निःसन्देह सब से बड़ी सिद्धि को पहुँचेगा।

महाभारत के शान्ति पर्व में विष्णु सहस्र नाम के अंत में स्पष्ट कह दिया है कि जो मनुष्य इसको सुने और जो इसका पाठ करे उसका इस लोक में और परलोक में भी कोई अमंगल नहीं होगा।

वेदान्तगो ब्राह्मणः स्यात् क्षत्रियो विजयी भवेत्।
वैश्यो धन समृद्धः स्याच्छूद्रः सुखमवाप्नुयात् ॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थात्—ब्राह्मण सुने या पढ़े तो वेदांत का जानने वाला हो।
क्षत्रिय सुने या पढ़े तो विजयी हो।
वैश्य सुने या पढ़े तो धनसंपन्न हो।
शूद्र सुने या पढ़े तो सुख पावे।

भगवद्गीता के अन्त में भगवान् ने अपने श्रीमुख से अर्जुन से कहा है कि जो कोई मुझ में भक्ति कर मेरे भक्तों के बीच में इसको सुनावेगा और जो कोई मेरे और तुम्हारे इस धर्मयुक्त सम्वाद को पढ़ेगा उसने ज्ञान-यज्ञ से मेरी पूजा की; ऐसा मैं मानता हूं।

भगवद्गीता के माहात्म्य में भी लिखा है कि इस गीता शास्त्र को जो कोई पुरुष पवित्र होकर पढ़ेगा, वह भय और शोक से रहित होकर विष्णु पद को पहुँचेगा।

भीष्मस्तवराज के अन्त में लिखा है कि जो इस स्तोत्र को पढ़ेगा या सुनेगा, वह सब पाप से मुक्त होकर देह त्याग करने पर विष्णु भगवान में मिल जायगा।

अनुशासन पर्व में शिव सहस्र नाम के अन्त में भगवान् कृष्ण का वचन है कि जो इन्द्रियों को वश में रख कर पवित्र होकर बिना व्रत भंग, नियम से एक महीना इस स्तोत्र का पाठ करेगा वह अश्वमेध यज्ञ का फल पावेगा। और वहीं यह भी लिखा है कि:—

वेदान् कृत्स्नान् ब्राह्मणः प्राप्नुयात्तु,
जयेन्नृपः पार्थ महीं च कृत्स्नाम्।
वैश्यो लाभं प्राप्नुयान्नैपुणं च,
शूद्रो गतिं प्रेत्य तथा सुखं च॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थात्—ब्राह्मण पाठ करे तो सब वेदों का ज्ञान पावे।
क्षत्रिय करे तो पृथ्वी को जीते।
वैश्य करे तो लाभ और निपुणाई पावे।
शूद्र करे तो यहाँ सुख और परलोक में सुगति पावे।

श्रीमद्भागवत में लिखा है—

विप्रोऽधीत्याऽप्नुयात्प्रज्ञां राजन्यो दधि मेखलाम्।
वैश्यो निधि पतित्वं च शूद्रः शुद्ध्येत पातकात्॥

अर्थात्—ब्राह्मण भागवत पढ़े तो बुद्धि पावे।
क्षत्रिय पढ़े तो सागर पर्यन्त पृथ्वी पावे।
वैश्य पढ़े तो बहुत धन पावे। और
शूद्र पढ़े तो पाप से शुद्ध हो जाय।

इसी प्रकार से विष्णु पुराण, नारदीय पुराण, शिवपुराण, स्कन्द पुराण, मार्कण्डेय पुराण, वायु पुराण, ब्रह्म पुराण, अग्नि पुराण, पद्म पुराण में स्पष्ट लिखा है कि जो मनुष्य उनको पढ़े या सुने वह सुख, सम्पत्ति, दीर्घायु, विजय, भक्ति, मुक्ति आदि पाता है। इससे स्पष्ट है कि ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र, पुरुष और स्त्री सब केपुराणों के पढ़ने का अधिकार है। किसी २ पुराण में कहीं २ यह लिखा है कि इस कथा या अध्याय को द्विजों को सुनावे। इससे कुछ विद्वानों का यह मत है कि उन अंशों को पढ़ने का अधिकार द्विजों ही को है, और अन्य लोगों के लिये वे अंश निषिद्ध हैं। किन्तु ऐसे अंश बहुत थोड़े हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अन्त्यजों को भी इन ग्रन्थों के पढ़ने का अधिकार है।

मनु जी के वचन के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, ये तीन वर्ण द्विजाति कहे जाते हैं। चौथा शूद्र, वर्ण एक जाति है। पांचवाँ वर्ण नहीं है। उन्हीं मनु जी के अनुसार 'शूद्राणांतु स धर्माणः सर्वेऽपध्वंसजाः स्मृताः' इसकी टीका में मेधातिथि लिखते हैं कि—'ये पुनरपध्वंसजाः संकरजास्ते शूद्राणां सधर्माणः समानाचारास्तद्धर्मैर्रांध क्रियन्त इत्यर्थः'। अर्थात् जो प्रति लोम संकर जाति के लोग चांडाल आदि हैं वे शूद्र के सधर्मा हैं, अर्थात् जो धर्म शूद्रों का है वही धर्म उनका है। इससे यह सिद्ध होता है कि जैसा शूद्रों को इतिहास पढ़ने सुनने का अधिकार है वैसा ही सब अपध्वंसजों को जिनमें अन्त्यज तक हैं, इतिहास पुराण पढ़ने सुनने का अधिकार है। इसका सारांश यह निकलता है कि जिस मनुष्य को पुरुष हो वा स्त्री और किसी वर्ण वा जाति का हो वेदार्थ से भूषित पुराणों के पढ़ने की श्रद्धा और भक्ति हो, वह उनको पढ़ने का अधिकारी है।

स्त्री शूद्रों को ॐकार सहित मन्त्रों के उच्चारण का अधिकार है।

यदि पूर्वोद्धृत वचनों से यह सिद्ध है कि स्त्री शूद्रों को पुराणों के पढ़ने, का अधिकार है तो यह भी आप ही सिद्ध है कि उन पुराणों के अंतर्गत मंत्रों के उच्चारण करने का उनको अधिकार है। पुराणों में जो अनेक मंत्र आये हैं, उनका आरम्भ ॐकार से

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

होता है, इस लिये सब पुराण के पढ़ने के अधिकारियों को ॐकार सहित मंत्रों के उच्चारण करने का अधिकार है। इसमें भी पुराण ही प्रमाण हैं। विष्णु सहस्रनाम के पढ़ने का शूद्रों को अधिकार है। यह उसी के अंत में स्पष्ट लिखा है। उसको वेद व्यास जी ने सर्व प्रहरणायुध ॐ मिति इन शब्दों में समाप्त किया है।

श्री मद्भागवत के पढ़ने का शूद्रों को अधिकार है। उसमें आदि से अंत तक ओंकार सहित अनेक मंत्र भरे हैं। प्रायः सब स्कन्धों के प्रारंभ में 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' यह मन्त्र गर्जता है। पांचवें स्कंध में अनेक ॐकार सहित मंत्र हैं। 'ॐनमो भगवते उत्तम श्लोकाय' इत्यादि। छठें स्कन्ध में 'ॐनमो भगवते वासुदेवाय' 'ॐनमो नारायणाय' ये दोनों मंत्र नारायण कवच में आये हैं। उसी स्कंध में 'ॐनमो नारायणाय पुरुषाय महात्मने विशुद्ध सत्व धिष्णाय महाहंसाय धीमहि' यह मन्त्र आया है। उसी स्कन्ध में स्त्रियों के पुंसवन व्रत विधान में लिखा है कि जिस स्त्री को अच्छे पुत्र पाने की कामना हो वह पति की अज्ञा लेकर पुंसवन व्रत करे और उसमें प्रतिदिन नहा कर लक्ष्मी सहित विष्णु की पूजा इस मंत्र से करे—

'ॐनमो भगवते महापुरुषाय महानुभावाय महाविभूतिपतये सह महाविभूतिभिर्बलिमुपहराणि' इति, और 'ॐनमो भगवते महापुरुषाय महाविभूति पतये स्वाहा' इस मंत्र से आहुति दे।

आठवें स्कन्ध में भगवान् कश्यप ने पयोव्रत के विधान में अदिति देवी को उपदेश किया कि स्त्री 'ॐनमो नारायणाय' इस मूल मंत्र से होम करे।

पद्म पुराण में वासुदेवाभिधान नाम स्तोत्र है, जिसमें 'ॐ

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नमो भगवते वासुदेवाय' इस मंत्र की महिमा वर्णित है उसमें लिखा है कि उस स्तोत्र को जो ब्राह्मण पढ़ेगा उसकी सब इच्छा पूरी होगी। क्षत्रिय पढ़ेगा तो जय पावेगा। वैश्य पढ़ेगा तो धन धान्य से पूरा होगा और शूद्र पढ़ेगा तो सुख पावेगा।

विष्णु धर्मोत्तर में द्विजों का वैदिक पुरुष सूक्त और श्रीसूक्त से हवन करने की विधि बतला कर लिखा है—

एतत्प्रोक्तं द्विजातीनां स्त्री शूद्रेषु च यच्छृणु।
द्वादशाष्टाक्षरौ मंत्रौ तेषां प्रोक्तौ महात्मनाम्॥
हितौ तौ च द्विजातीनां मंत्र श्रेष्ठौ नराधिप।
तेभ्योप्यधिक मंत्रोपि विद्यते न हि कुत्रचित्॥

अर्थात् यह कि यह वैदिक विधि तो द्विजातियों के लिये कही। स्त्रियों और शूद्रों के लिये जो विधि है वह अब सुनो। उनके लिये द्वादशाक्षर 'ॐनमो भगवते वासुदेवाय' और अष्टाक्षर 'ॐनमो नारायणाय ये मंत्र कहे गये हैं। हे राजन्! ये मन्त्र द्विजातियों के लिये भी कल्याणकारी हैं, अर्थात् चारों वर्णों को इन मंत्रों को जपना चाहिये इनसे बड़ा कोई मंत्र नहीं।

ब्रह्म पुराण में विष्णु पूजन विधि नाम की ६१ अध्याय में लिखा है कि—

ॐकारादि समायुक्तं नमःकारान्त दीपितम्।
तन्नाम सर्वसत्वानां मंत्र इत्यभिधीयते॥

ॐ नमः युक्त परमात्मा का नाम जैसा 'ॐ नमो नारायणाय' प्राणी मात्र का मंत्र है। अर्थात् उसके जपने के सब

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अधिकारी हैं। उसी पुराण में उसी अध्याय में लिखा है कि जो लोग और किसी मन्त्र से विष्णु की पूजा करना नहीं जानते वे 'ॐ नमो नारायणाय' इसी मूल मंत्र से आवाहन, स्नान, गंध, पुष्पादि षोडश उपचार से पूजन करें और इसी का जप करें।

नृसिंह पुराण में ६२वें अध्याय में वैदिक पुरुष सूक्त से विष्णु की पूजा विधि वर्णन की गई है। उसको सुनकर राजा सहस्त्रानीक ने मार्कण्डेय ऋषि से कहा कि इस विधि से तो पूजा वे ही लोग कर सकते हैं जो वेद के जानने वाले हैं। इस लिये वह पूजा विधि बताइये जो सर्व हित हो, अर्थात् जिसके अनुसार सब प्राणी विष्णु का पूजन कर सकें। उसके उत्तर में मार्कण्डेय जी ने कहा—

अष्टाक्षरेण मंत्रेण नरसिंहमनामयम् ।
गंध पुष्पादिभिर्नित्यमर्चयेदच्युतं नरः॥
राजन्नष्टाक्षरो मंत्रः सर्व पाप हरः परः ।
समस्त यज्ञ फलदः सर्व शांतिकरः शुभः॥

मनुष्य 'ॐ नमो नारायणाय' इस अष्टाक्षर मन्त्र से विष्णु भगवान नरसिंह की पूजा करे। इसी से गंध पुष्पादि सोलहों उपचार से पूजन करे। हे राजन! यह अष्टाक्षर मन्त्र सब पापों का हरने वाला सब यज्ञों के फल का देने वाला, सब दुख और दोष की शांति करने वाला है।

उसी पुराण में १८वें अध्याय में शुकदेव जी के इस प्रश्न पर कि—

Acc. No. 3905

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

किं जपन् मुच्यते तात सततं विष्णु तत्परः ।
संसार दुःखात्सर्वेषां हिताय वद मे पितः ॥

हे पिता जी विष्णु भगवान् का भक्त किस मन्त्र को जपता हुआ संसार सागर के दुःख से छुटकारा पाता है ।

उत्तर में भगवान वेद व्यास जी ने कहा है कि—

अष्टाक्षरं प्रवक्ष्यामि मंत्राणां मंत्रमुत्तमम् ।
यं जपन् मुच्यते मर्त्यो जन्म संसार बंधनात् ॥
एकान्ते निर्जन स्थाने विष्णवग्रे वा जलान्तिके ।
जपेदष्टाक्षरं मंत्रं चित्ते विष्णुं निधाय वै ॥

अष्टाक्षर मन्त्र सब मन्त्रों में उत्तम है । कोई मनुष्य हो, मर्त्यः-मर्त्तु वा—जिस जिसको एक दिन मरना अवश्य है—इसको जप कर जन्म और संसार के बंधन से छूट जाता है । एकांत में निर्जन स्थान में, विष्णु के आगे वा नदी वा जल के पास-भगवान विष्णु को मन-मन्दिर में चिठा कर इस मंत्र को जपे ॥

ॐनमोनारायणायेति मंत्रः सर्वार्थ साधकः ।
भक्तानां जपतां तात स्वर्ग मोक्ष फलप्रदः ॥
सर्व वेद रहस्येभ्यः सार एष समुद्धृतः ।
विष्णुनां वैष्णवानां हि हिताय मनुजां पुरा ॥
एतत्सत्यं च धर्म्यं च वेद-श्रुति निदर्शनात् ।
एतत्सिद्धि करं नणां मंत्र रूपं न संशयः ॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अष्टाक्षरमिमं मंत्रं सर्व दुःख विनाशनम् ।
जप पुत्र महाबुद्धे यदि सिद्धिमभीप्ससि ॥

'ॐ नमो नाराणाय' यह मन्त्र सब कामनाओं को पूरा करने वाला है, भक्ति से जपने वालों को स्वर्ग और मोक्ष तक का देने वाला है। निश्चय करके वैष्णवों के और सब मनुष्य मात्र के लिये प्राचीन काल में भगवान विष्णु ने सब वेदोपनिषदों में से दूध में से मक्खन की भांति सार रूप इस मन्त्र को निकाला। यह मन्त्र निश्चय करके मनुष्य मात्र के लिये-नृणां-सब दुःखों का नाश करने वाला है। और सब सिद्धि का देने वाला है। हे मेरे महा बुद्धिमान पुत्र! यदि तुम सिद्धि चाहते हो तो इस मन्त्र को जपो ॥

ॐ नमः शिवाय।

इसी प्रकार 'ॐ नमः शिवाय' इस मन्त्र को जिसको श्रद्धा हो, उसको जपने का अधिकार है। 'ॐ नमः शिवाय' यह ६ अक्षर का मन्त्र है। इसी को लोक में पंचाक्षर कहते हैं। यह बात स्कंद पुराण, शिवपुराण और लिंग पुराण के वचनों से स्पष्ट है।

स्कंद पुराण मे लिखा है—

शैवं षडक्षरं दिव्यं मंत्रमाहुर्महर्षयः।
देवानां परमो देवो यथा वै त्रिपुरांतकः।
मंत्राणां परमो मंत्रस्तथा शैवः षड़क्षरः ॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एष पंचाक्षरो मंत्रो जप्तृणां मुक्ति दायकः।
संसेव्यते मुनिश्रेष्ठैरशेषैः सिद्धि कांक्षिभिः॥
भव पाश निबद्धानां देहिनां हितकाम्यया।
आहों नमः शिवायेति मंत्रमाद्यः शिवः स्वयम्॥
मंत्र राजाधिराजोऽयं सर्व वेदांत शेखरः।
सर्व ज्ञान निधानं च सोऽयं चैव षडक्षरः॥
तस्मात्सर्व प्रदो मंत्रः सोऽयं पंचाक्षरः स्मृतः।
स्त्रीभिः शूद्रैश्च संकीर्णैर्धार्यते मुक्ति कांक्षिभिः॥

अर्थात् यह कि जो ६ अक्षर वाला शैव मन्त्र है, उसको महर्षि लोग दिव्य मन्त्र कहते हैं। जैसे देवताओं में सब से बड़े देव त्रिपुरासुर को मारने वाले महादेव हैं, वैसे ही यह ६ अक्षर वाला शिव मन्त्र सब मन्त्रों से बड़ा है। यही पंचाक्षर मन्त्र अर्थात् लोक में पंचाक्षर इस नाम से प्रसिद्ध मन्त्र जपने वालों को मुक्ति का देने वाला है। जो मुनि श्रेष्ठ सिद्धियों की आकांक्षा करते हैं वे सब इसी मंत्र से उपासना करते हैं। संसार के फांस में जितने प्राणी बंधे हैं, उनके लिये स्वयं आदि देव महादेव ने 'ॐ नमः शिवाय' इस मन्त्र को अपने मुख से कहा। यह सब मन्त्रों का राजाधिराज है। सब वेदांत का शिरोमणि है। सब ज्ञान इसमें भरा हुआ है। सो यह ६ अक्षर वाला मन्त्र है। इसलिये सब मनोरथों के पूरा करने वाले इस मन्त्र को, जो यह पंचाक्षर कहके प्रसिद्ध है, स्त्री, शूद्र और संकर जाति के लोग जो मुक्ति चाहते हैं, जपते हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शिवपुराण में वायवीय संहिता के उत्तर भाग में ११वें अध्याय में शिव जी ने अपने श्री मुख से शैव धर्म का उपदेश किया है। उसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यासी, सधवा और विधवा स्त्रियों का—

"अथ वक्ष्यामि देवेशि भक्तानामधिकारिणाम् ।
विदुषां द्विजमुख्यानां वर्णा धर्मं समासतः" ॥

इस श्लोक से आरम्भ कर "इति संक्षेपतः प्रोक्तं ममाश्रम निषेवणम्" अर्थात् इस प्रकार से मैंने संक्षेप में मेरे आश्रम निषेवण करने की विधि कही (यहां तक २३ श्लोकों में सब वर्ण और आश्रम वालों का विशेष २ धर्म अलग अलग वर्णन कर उसके आगे उन सब वर्ण और आश्रम वालों का सामान्य धर्म नीचे लिखे श्लोकों में बताया है :—

ब्रह्मक्षत्रविशांदेवि यतीनां ब्रह्मचारिणाम् ।
तथैव वानप्रस्थानां गृहस्थानां च सुन्दरि ॥
शूद्राणामथ नारीणां धर्म एष सनातनः ।
ध्येयस्त्वयाहं देवेशि सदा जाप्यः षडक्षरः ॥

हे देवी ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्व, यती, ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ, गृहस्थ, शूद्र और स्त्री सबों का (सर्व सामान्य) यह सनातन धर्म है कि—तुम्हारी मूर्ति से युक्त मेरी मूर्ति का ध्यान किया करें और सदा 'ॐनमः शिवाय' इस षडक्षर मंत्र का जप किया करें।

शिव पुराण में उसी संहिता की १२ के अध्याय में लिखा है

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कि भगवान श्रीकृष्ण ने महर्षि उपमन्यु से कहा कि आप पंचाक्षर का माहात्म्य मुझे सुनाइये ! इस पर उपमन्यु जी बोले—

पंचाक्षरस्य माहात्म्यं वर्ष कोटि शतैरपि ।
अशक्यं विस्तराद्वक्तुं तस्मात्संक्षेपतः शृणु ॥

पंचाक्षर का माहात्म्य कोटि वर्ष में भी विस्तार के साथ कहना संभव नहीं है । इस लिये संक्षेप से सुनिये ।

वेदे शिवागमे चायमुभयत्र षडक्षरः ।
मंत्रस्थितः सदा मुख्यो लोके पंचाक्षर स्मृतः ॥
सर्व मंत्राधिकश्चायमोंकाराद्यः षडक्षरः ।
सर्वेषां शिवभक्तानामशेषार्थ प्रसाधकः ॥
मंत्रं सुखमुखोच्चार्य मशेषार्थ प्रसिद्धये ।
प्राहोंनमः शिवायेति सर्वज्ञः सर्वदेहिनाम् ॥
अन्त्यजो वाऽधमो वाऽपि मूर्खो वा पण्डितोऽपि वा ।
पंचाक्षर जपे निष्ठो मुच्यते पाप पंजरात् ॥
इत्युक्तं परमेशेन देव्या पृष्टेन शूलिना ।
हिताय सर्व मर्त्यानां तिष्यजानां विशेषतः ॥

वेद और शैव आगम दोनों में यह मन्त्र छः अक्षर का सदा से स्थित है और सब मन्त्रों में मुख्य है। लोक में यही पंचाक्षर इस नाम से प्रसिद्ध है । ॐकार है आदि में जिसके ऐसा यह मन्त्र सब मन्त्रों में बड़ा है और जिनको आदि देव महादेव में

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भक्ति है, उनकी सब कामनाओं को पूरा करने वाला है। सर्वज्ञ शिव जी ने सब प्राणियों के सब अर्थ की सिद्धि के साधन 'ॐ नमः शिवाय' इस मन्त्र को, जिसको सब लोग सुख से उच्चारण कर सकते हैं, अपने श्रीमुख से कहा। अन्त्यज हो या नीच हो, मूर्ख हो या पंडित हो जो पंचाक्षर का जप नित्य श्रद्धा से करता है वह पाप के पंजर से छूट जाता है।

परमेश्वर शिव जी ने सब प्राणियों के हित के लिये विशेष कर कलियुग में उत्पन्न प्राणियों के हित के लिये पार्वती जी के पूछने पर ऊपर लिखा वचन कहा।

शिव पार्वती सम्वाद

का संक्षेप नीचे लिखते हैं। पार्वती जी ने शिव जी से पूछा कि—

कलौ कलुषिते काले दुर्जये दुरतिक्रमे।
अपुण्यतमसाच्छन्ने लोके धर्मे पराङ्मुखे॥
क्षीणे वर्णसमाचारे संकरे समुपस्थिते।
सर्वाधिकारे संदिग्धे निश्चिते वा विपर्यये॥
तदोपदेशे विहते गुरुशिष्य क्रमे गते।
केनोपायेन मुच्यन्ते भक्तास्तव महेश्वर॥

कलियुग में विकराल काल के आने पर जब पाप रूपी अंधकार फैल जाय और लोग धर्म से विमुख हो जांय, जब वर्णाश्रम धर्म क्षीण हो जाय और वर्ण शंकर बढ़ने लगे, जब सब लोगों को सब ही धर्म विषयों में संदेह होने लगे, और

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गुरु और शिष्य के क्रम से उपदेश देने का क्रम न रहे तो महेश्वर ! आपके भक्त किस उपाय से पाप से छूटते हैं ?

शिव जी बोले—

आश्रित्य परमां विद्यां हृद्यां पंचाक्षरीं मम ।
भक्त्या च भावितात्मानो मुच्यंते कलिजा नराः॥
मनो वाक्कायजै र्दोषै र्वक्तुं स्मर्त्तु मगोचरैः ।
दूषितानां कृतघ्नानां निर्दयानां खलात्मनाम् ॥
लुब्धानां वक्रमनसामपि मत्प्रवणात्मनाम् ।
मम पंचाक्षरी विद्या संसार भयतारिणी ॥
मयैवमसकृद्देवि प्रतिज्ञातं धरातले ।
पतितोऽपि विमुच्येत मद्भक्तो विद्ययानया ॥

इत्यादि

कलियुग में उत्पन्न प्राणी मेरी पंचाक्षरी विद्या का आश्रय लेकर अर्थात् पंचाक्षर मन्त्र को नित्य श्रद्धा से जप कर और मेरी भक्ति से अपनी आत्मा को पवित्र कर पाप से छूटते हैं। मन से बचन से और काया से किये हुये ऐसे पापों से दूषित प्राणियों को जिन पापों का मुख से वर्णन करना और सुमिरन करना भी कठिन हो और जो किये हुये उपकार को नहीं मानते ऐसे कृतघ्नों को, दया रहित क्रूर प्राणियों को, और दुष्ट आत्माओं को, लोभियों को, और कुटिल मन वालों को भी यदि वे मेरी ओर अपनी आत्मा को झुकावें तो मेरा पंचाक्षर मंत्र उनको संसार के सब डरों से छुटा देता है। हे देवी ! मैंने पृथ्वी तल

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पर बार २ प्रतिज्ञा पूर्वक यह कहा है कि यदि पतित भी हो तो इस मन्त्र के साधन से पाप से छूट जाता है।

अरुद्रो वा सरुद्रो वा सकृत् पंचाक्षरेण यः ।
पूजयेत् पतितो वापि मूढ़ो वा मुच्यते नरः ॥
षडक्षरेण वा देवि तथा पंचाक्षरेण वा ।
सब्रह्मांगेण मां भक्त्या पूजयेत् यदि मुच्यते ॥
पतितोऽपतितो वापि मंत्रेणानेन पूजयेत् ॥

चाहे उसने विधि से शिव मन्त्र का उपदेश लिया हो, चाहे उपदेश न लिया हो, पतित हो वा मूर्ख हो, जो एक बार भी श्रद्धा भक्ति से पञ्चाक्षर का जप करता है वह पाप से छूट जाता है। हे देवी ! ६ अक्षर 'ॐ नमः शिवाय' से या ५ अक्षर 'नमः शिवाय' से जो भक्ति से मेरा पूजन करे वह मुक्ति को पाता है। चाहे पतित हो या अपतित हो सब को इस मन्त्र से पूजन करना चाहिये। शिव जी ने कहा—

'किमत्र बहुनोक्तेन भक्ताः सर्वेऽधिकारिणः ।
मम पंचाक्षरे मंत्रे तस्माच्छ्रेष्ठतरो हि सः ॥

अर्थात् इस विषय में बहुत कहने से क्या, जिन प्राणियों को मुझ में भक्ति है, वे सब इस पञ्चाक्षर मन्त्र के जपने के अधिकारी हैं। इसी लिये यह सब मन्त्रों में श्रेष्ठ है। हे देवी ! यह रहस्य मैं तुमको बताता हूं। इसको तुम रक्षित रखना। हर एक से इसको न कहना। विशेष कर किसी नास्तिक से न कहना।

सदाचार विहीनस्य पतितस्यांतजस्य च ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पंचाक्षरात्परं नास्ति परित्राणं कलौ युगे ॥
अन्त्यजस्यापि मूर्खस्य मूढ़स्य पतितस्य च ।
निर्मर्यादस्य नीचस्य मंत्रोऽयं न च निष्फलः ॥
सर्वावस्थां गतस्यापि मयि भक्तिमतः परम् ।
सिद्ध्यत्येव न संदेहो नापरस्य तु कस्यचित् ॥

अर्थात् यह कि सदाचार से विहीन जो पतित है, अर्थात् घोर कुकर्म करने से या अपना धर्म छोड़ कर किसी दूसरे मत को मान लेने के कारण जो धर्म से गिर गया है अथवा अन्त्यज (चांडाल आदि) है, उसका इस कलियुग में पञ्चाक्षर से परे कोई रक्षा करने वाला नहीं। मूर्ख अन्त्यज भी हो और दुर्बुद्धि पतित भी हो जो सब मर्यादा से गिर गया है और सब प्रकार से नीच है; वह भी इन मन्त्र को जपे तो उसका इस मन्त्र का जपना निष्फल नहीं जाता। किसी अवस्था में प्राणी हो, उसकी मुझमें भक्ति है तो उसका पञ्चाक्षर मन्त्र जपना उसको सब पापों से छुड़ा देता है और सब सुख का साधन बन जाता है।

उपमन्यु ऋषि ने श्रीकृष्ण भगवान् से कहा कि इस प्रकार से साक्षात् महादेवी पार्वती जी से महादेव शिव जी ने सारे जगत के हित के लिये इस पञ्चाक्षर मन्त्र की विधि को कहा ॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लिंग पुराण।

लिंग पुराण में भी ८५वें अध्याय में पार्वती जी के पूछनेपर शिव जी ने पंचाक्षर मंत्र की महिमा और उसका स्वरूप वर्णन किया है।

श्री भगवानुवाच।

पंचाक्षरस्य माहात्म्यं वर्ष कोटिशतैरपि।
न शक्यं कथितुं देवि तत्स्मात्संक्षेपनः शृणु॥
पंचाक्षर प्रभावाच्च लोका वेदा महर्षयः।
तिष्ठन्ति शाश्वता धर्माः देवाः सर्व मिदं जगत्॥
तदिदानीं प्रवक्ष्यामि शृणु चावहिताऽखिलम्।
अल्पाक्षरं महार्थं च वेद सारं विमुक्तिदम्॥
आज्ञासिद्धमसंदिग्धं वाक्यमेतच्छिवात्मकम्।
नाना सिद्धियुतं दिव्यं लोक चित्तानुरंजकम्॥
सुनिश्चितार्थं गंभीरं वाक्यमेतच्छिवात्मकम्।
मन्त्रं सुख सुखोच्चार्य मशेषार्थ प्रसाधकम्॥
तद्बीजं सर्व विद्यानां मंत्रमाद्यं सुशोभनम्।
अति सूक्ष्मं महार्थं च ज्ञेयं तद्वट बीजवत्॥
वेद स त्रिगुणातीतः सर्वज्ञः सर्व कृत् प्रभुः।
ओमित्येकाक्षरे मंत्रे स्थितः सर्व गतः शिवः॥
मंत्रे षडक्षरे सूक्ष्मे पंचाक्षर तनुः शिवः।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वाक्य वाचक भावेन स्थितः साक्षात्स्वभावतः ॥
वेदे शिवागमे वापि यत्र यत्र षडक्षरः ।
मंत्रः स्थितः सदा मुख्यो लोके पंचाक्षरो मतः ॥
किं तस्य बहुभि मंत्रैः शास्त्रैर्वा बहुविस्तृतैः ।
यस्यैवं हृदि संस्थोऽयं मंत्रः स्यात् पारमेश्वरः ॥
तेनाधीतं श्रुतं तेन तेन सर्वमनुष्ठितम् ।
यो विद्वान् वै जपेत् सम्यगधीत्यैव विधानतः ॥
एतावद्धि शिव ज्ञानमेतावत् परमं पदम् ।
एतावद्ब्रह्म विद्या च तस्मान्नित्यं जपेद्बुधः ॥

॥ इत्यादि ॥

इस लिंग पुराण में भी लिखा है कि शिव जी ने अपने श्री मुख से पार्वती जी से कहा कि जिस पंचाक्षर विद्या का माहात्म्य तुम मुझसे पूछती हो वह वेद में भी और शैव आगम में भी दोनों ही स्थान में षडक्षर ६ अक्षर का मंत्र है लोक में लोग उसको पंचाक्षर इस नाम से कहते हैं। और यह भी कहा कि—

पंचाक्षरैः सप्रणवो मंत्रोऽयं हृदयं मम ।
गुह्याद् गुह्यतरं साक्षान्मोक्ष ज्ञानमनुत्तमम्॥

ॐकार सहित पांच अक्षरों से युक्त यह मंत्र मेरा हृदय है। सब गुह्य अर्थात् बहुत जतन से रक्षित के रखने योग्य वस्तुओं से भी अनमोल है और साक्षात् मोक्ष का देने वाला है। आगे चल-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर भगवान शिव जी ने मंत्र का विनियोग बताने में स्पष्ट 'ॐ नमः शिवाय' के ओंकार से आरंभ कर मकार तक एक एक अक्षर का ऋषि छन्द, स्वर, आदि अलग अलग बताया है। इससे अधिक इस बात का प्रमाण क्या हो सकता है कि जिस को लोग पंचाक्षर मंत्र कहते हैं, वह षडक्षर अर्थात ६ अक्षर का मंत्र है। शिव पुराण, स्कंद पुराण, लिंग पुराण तीनों ही शैव पुराण एक स्वर से कहते हैं कि जो पंचाक्षर इस नाम से प्रसिद्ध है उस मंत्र का रूप 'ॐ नमः शिवाय' यह है। तीनों ही कहते हैं कि शिव जी ने मनुष्य मात्र के हित के लिये 'ॐ नमः शिवाय' इस मंत्र को अपने श्री मुख से कहा और पार्वती जी से यह कहा' कि कोई भी प्राणी हो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अन्त्यंज, पतित-पुरुष या स्त्री जो इस मंत्र को जपे उसका यह कल्याण करेगा।

'षडक्षरेण वा देवि तथा पंचाक्षरेण वा'

चाहे ॐ नमः शिवाय इन ६ अक्षरों से जपे, चाहे 'नमः शिवाय' इन पांच अक्षरों से जपे। इससे यह स्पष्ट है कि श्रुति-स्मृति पुराण प्रतिपादित सनातन धर्म के अनुसार श्रेष्ठ से श्रेष्ठ ब्राह्मण से लेकर चांडाल पर्यन्त सब मनुष्यों को जिनको परमेश्वर में भक्ति हो 'ॐ नमो नारायणाय और ॐ नमः शिवाय इन मंत्रों के जपने का और इनके द्वारा ईश्वर की उपासना करने का पूरा अधिकार है।

नित्य की उपासना

ध्येयः सदा सवितृ मंडल मध्यवर्त्ती
नारायणः सरसिजासन संनिविष्टः।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रतिदिन सूर्य के उदय और अस्त होने के समय प्रत्येक पुरुष और स्त्री को प्रातःकाल स्नान कर और सायंकाल हाथ मुंह पैर धोकर सूर्य के सामने खड़े होकर सूर्य मन्डल में विराजमान सारे जगत के प्राणियों के आधार परमेश्वर परब्रह्म नारायण को ॐ नमोनारायणाय इस मन्त्र से अर्घ देकर और जल न मिले तो यों ही हाथ जोड़ कर मन को पवित्र और एकाग्र कर श्रद्धा भक्ति पूर्वक १०८ बार या २८ बार या कम से कम १० बार प्रातःकाल ॐ नमोनारायणाय इस मन्त्र को और सायंकाल नमः शिवाय इस मन्त्र को जपना चाहिये और जप के उपरान्त परमात्मा का ध्यान कर नीचे लिखी प्रार्थना करनी चाहिये।

ॐ नमोनारायणाय

सब देवन के देव प्रभु सब जग के आधार।
दृढ़ राखौ मोहि धर्म में विनवौं बारम्बार॥
चन्दा सूरज तुम रचे रचे सकल संसार।
दृढ़ राखौ मोहिं सत्य में विनवौं बारंबार।
घट घट तुम प्रभु एक अज अविनाशी अविकार।
अभय दान मोहिं दीजिये विनवौं बारम्बार॥
मेरे मन मन्दिर बसौ करौ ताहि उजियार।
ज्ञान भक्ति प्रभु दीजिये विनवौं बारम्बार।
सत चित आनन्द घन प्रभु सर्व शक्ति आधार।
धनबल जनबल धर्मबल दीजै सुख संसार॥
पतित उधारन दुख हरन दीन बन्धु करतार।
हरहु अशुभ शुभ दृढ़ करहु विनवौं बारम्बार॥
जिमि राखे प्रहलाद को ले नृसिंह अवतार।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तिमि राखौ अशरण शरण विनवौं बारम्बार ॥
पाप दीनता दरिद्रता और दासता पाप ।
प्रभु दीजे स्वाधीनता मिटै सकल संताप ॥
नहि लालच बस लोभ बस नाहीं डर बस नाथ ।
तजौ धरम बर दीजिये रहिये सदा मम साथ ॥
जाके मन प्रभु तुम बसौ सो डर कासों खाय ।
सिर जावे तो जाय प्रभु मेरो धरम न जाय ॥
उठौ धर्म के काम में उठौं देश के काज ।
दीन बन्धु तव नाम लै नाथ राखियो लाज ॥

सनातन धर्म की रक्षा और प्रचार चाहने वाले समस्त सत्पुरुष और सत्स्त्रियों से विनय पूर्वक मेरी प्रार्थना है कि जो लोग वैदिक दीक्षा पा चुके हैं उनको भी इन सार्वजननि मंत्रों का जप करना चाहिये और प्रत्येक हिन्दू संतान को इन परम कल्याणकारी मंत्रों की दीक्षा लेकर तथा अपने और सब भाई और बहिनों को दिला कर अपना और उनका धार्मिक जीवन पवित्र और प्रकाशमय करना चाहिये, जिससे धर्म में उनकी श्रद्धा बढ़े और दृढ़ रहे। वे अपने देश और समाज में सुख, सन्मान और स्वतंत्रता से रहें तथा दिन दिन ऊपर उठें और संसार के अन्य मतों के मानने वाली जातियों की दृष्टि में भी सन्मान के योग्य हों। इससे हमारा आत्मा भी प्रसन्न होगा और सारे जगत् का पिता सब का सुहृद सब को शरण देने वाला घट घट व्यापी परमात्मा भी प्रसन्न होगा। ॥ इति ॥

शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

प्रयाग
माघ कृ० ११ सं० १९८६

मदनमोहन मालवीय

1929
Acc. No. 3905

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS
3133

नाटक, आख्यान, काव्य, स्तोत्र, परिहास, पुराण, इतिहास आदि भिन्न भिन्न विषयों पर इनकी लेखनी जीवन के अन्तिम दिनों तक बराबर चलती रही और भारतेन्दु ने छोटे-बड़े स्वरचित और अनुवाद किये हुए १७५ ग्रन्थों की निधि द्वारा हिन्दी और राष्ट्र की सेवा की।

भाषा साहित्य और जीवन की दृष्टि से समाज प्रेम और देश-भक्ति इनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी। देशभक्ति की भावना को रचनाओं में प्रस्तुत करने के कारण इनको अंग्रेज सरकार का कोप भाजन भी होना पड़ा और अत्यधिक आर्थिक क्षति भी उठानी पड़ी, किन्तु इसकी इन्होंने जरा भी परवाह न की। ये बड़े स्वाभिमानी और अपने सिद्धान्त के पक्के थे अपने गुरु शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' के सामने भी ये भाषा के प्रश्न पर कभी न झुके। यही कारण था कि जब सरकार ने बाबू शिवप्रसाद को 'सितारे हिन्द' की पदवी दी तो भारत की कोटि कोटि जनता ने बाबू हरिश्चन्द्र जी की सेवाओं के उपलक्ष में उन्हें संवत् १९३७ (सन् १८८०) में 'भारतेन्दु' की उपाधि दे डाली। इसी समय से हरिश्चन्द्र जी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कहे जाने लगे।

अपने साहित्य-जीवन में भारतेन्दु ने ग्रन्थों की रचना ही केवल नहीं की किन्तु नये-नये लेखक और कवि भी पैदा किये। गोष्ठियों और पत्रों द्वारा कितनों को प्रोत्साहन दिया। उपाध्याय पंडित बदरीनारायण चौधरी, पं० प्रतापनारायण मिश्र, बाबू तोताराम, ठाकुर जगमोहनसिंह, लाला श्रीनिवासदास, पं० बालकृष्ण भट्ट, पं० केशवराम भट्ट, प० अंबिकादत्त व्यास, पं० राधाचरण गोस्वामी इत्यादि कई प्रतिभाशाली और गंभीर साहित्यिकों का एक मंडल भारतेन्दु ने तैयार किया जो निरंतर साहित्य सेवा करता रहा।

भारतेन्दु को देश के भिन्न-भिन्न भागों में यात्रा करने, वहाँ की रीति-रस्म जानने, भिन्न भिन्न लोगों के भावों और विचारों से परिचित होने और देश का अधिकाधिक ज्ञान प्राप्त करने का बड़ा शौक था। इन्होंने संवत् १९३६ में श्रीनाथद्वार के दर्शनों की इच्छा से मेवाड़ की यात्रा की संवत् १९४१ में ये बलिया गये जो इनकी अंतिम यात्रा थी। केवल ३५ वर्ष की अवस्था में माघ कृष्ण ६ सं० १९४१ के दिन भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का देहावसान हो गया।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रचनाएँ—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने १७ वर्ष की अवस्था से काव्य रचना और १८ वें वर्ष से नाट्य-रचना का प्रारम्भ किया। इनके अनुवादित और स्वरचित ग्रंथों की संख्या १७५ है जिसे खड्गविलास प्रेस ने छः भागों में प्रकाशित किया है।

मौलिकनाटक—वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, चन्द्रावली, विषस्य विषमौषधम्, भारत दुर्दशा नीलदेवी, अंधेर नगरी, प्रेमजोगिनी, सती प्रताप (अधूरा)

अनुवाद—विद्यासुंदर, पाखंड विडम्बन, धनंजय विजय, कर्पूरमंजरी, मुद्राराक्षस, सत्यहरिश्चन्द्र, भारत जननी।

इतिहास—काश्मीर कुसुम, बादशाह दर्पण, चरितावली आदि।

काव्य—विभिन्न १२ ग्रन्थ।

प्रेम व भक्ति काव्य—प्रेमप्रलाप, प्रेमफुलवारी, प्रेममालिका, कृष्णचरित्र आदि १८ ग्रंथ।

निबन्ध—विभिन्न निबन्ध तथा चुटकुले आदि।

भाषा और शैली—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के पहले के लेखकों में से शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' की भाषा में फारसी, उर्दू और हिन्दी के शब्दों की खिचड़ी है जब कि राजा लक्ष्मणसिंह के अभिज्ञान शाकुन्तलम् की भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों की भरमार है। अतः हिन्दी गद्य की भाषा का सर्वप्रथम निर्माण बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की भाषा के रूप में हुआ है। भारतेन्दु ने सबसे पहले अपने स्वतन्त्र भावों को स्वतन्त्ररूप में व्यक्त करके एक नवीन शैली को जन्म दिया। इनकी भाषा इतनी सबल है कि इनके भाव सहज में व्यक्त हो जाते हैं। यह बड़ी रोचक, सरल, स्वाभाविक, मधुर और प्रबल है। इसमें बनावटीपन का नाम नहीं यही कारण है कि भारतेन्दु में उर्दू के वे शब्द भी मिलते हैं जो बहुत घुल-मिल गये हैं और जिनका पहिचानना आज कुछ कठिन है। भारतेन्दु की भाषा बोलचाल की भाषा है, कहीं-कहीं लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग भी बड़े स्वाभाविक ढंग से होता है। हरिश्चन्द्र की भाषा शैली के सम्बन्ध में शुक्लजी ने कहा है—

"उनकी भावावेश की शैली दूसरी है और तथ्य निरूपण की शैली दूसरी।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भावावेश की भाषा में वाक्य बहुत छोटे-छोटे होते हैं, पदावली सरल बोलचाल की होती है, जिसमें बहु प्रचलित साधारण अरबी फारसी के शब्द भी कभी-कभी, पर बहुत कम, आ जाते हैं। जहाँ चित्त के किसी स्थायी क्षोभ की व्यंजना और चिंतन के लिए कुछ अवकाश है, वहाँ की भाषा कुछ अधिक साधु और गंभीर तथा वाक्य कुछ बड़े हैं, पर अन्यत्र जटिल नहीं हैं।'

—रामचन्द्र शुक्ल

पृष्ठ १ – ४

शब्दार्थ—शिष्टाचार=अच्छा,आचरण। सुहृद्=अच्छे हृदयवाला, मित्र। ब्रह्मादिक ईश्वर=विधाता, ब्रह्मा, विष्णु और महेश। नाग=सर्प। (पृष्ठ २) विघ्न=उपद्रव। नाक में दम करना परेशान या तंग करना। न्यून=कम। ठंडी साँस=दुःख की साँस। आकाशवाणी=वह शब्द या वाक्य जो आकाश से देवता लोग बोलें। गति=पहुँच। साँसारियों=संसार या मृत्युलोक के रहने-वालों कीर्त्ति=यश, बड़ाई, मान। हिण्डोला खाट=झूले की तरह बनी चार-पाई। (पृष्ठ ३) सावधान करना=होश में लाना। गन्धर्व=देवताओं की एक जाति जो गाने में निपुण होती है, विद्याधर। दैत्य=राक्षस। माया=छल, जादू। हाथ पीला करना=विवाह करना। सुरभी=आकाशवाणी। हाथ पकड़ा देना=शादी करा देना। (पृष्ठ ४) हित=भलाई। बात की बात में=जरा-सी देर में। कपटी=धूर्त, बनावटी। चौकी देना=पहरा देना। कुटीचर=राक्षस।

एक दिन नागों के राजा·······················मालूम पड़ता है।

सन्दर्भ—यह गद्यांश मदालसोपाख्यान नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हैं। राजा शत्रुजित के लड़के कृतध्वज और नागराज अश्वतर के दोनों बेटों में गहरी मित्रता हो गयी है। नागलोक के राजकुमार प्रायः मृतलोक में आकर शत्रुजित के पुत्र के साथ ही अधिक समय व्यतीत करते थे। अपने पुत्रों को अनुपस्थिति देखकर नागराज ने उनसे इसका कारण जानना चाहा। इसका प्रसङ्ग उसी समय का है।

लड़कों को प्रायः अनुपस्थित देखकर नागराज ने अपने पुत्रों से एक दिन जानना चाहा कि वे कहाँ रहते हैं? और नागलोक जो उनके लिए अधिक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनुकूल और सुखदायी है उसे छोड़कर मृत्युलोक में क्योंकर अधिक वास किया करते हो ! मृत्युलोक तो अधिक गर्म है और इस कारण नागलोक के रहनेवालों के लिए अधिक कष्टकर है। इस पर उन नाग पुत्रों ने जवाब दिया—पिताजी आप कहते तो ठीक हैं किन्तु राजा शत्रुजित के पुत्र ने अपने अच्छे आचरण, मधुर वर्ताव और सुन्दर प्रेम से हमारे चित्त को ऐसा लुभा लिया है कि हमको उसके बिना अपना सुखद शीतल पाताल-लोक जलता हुआ गर्म और दुखदायी लगता है और जब हम मृत्युलोक में उसके पास रहते हैं तो उस लोक के सूर्य की गर्मी जिसे हम सहन नहीं कर सकते वह भी सुखद और शीतल लगती है। हम लोग बिना किसी कष्ट के उसे सहन कर जाते हैं। हमारे मित्र कृतध्वज का स्वभाव और तादचर्य ऐसा सुखद और अदभुत है।

चाल में हवा को भी..............राक्षस को मारै।

सन्दर्भ—प्रस्तुत गद्यांश मदालसोपाख्यान नामक पाठ से लिया गया है जिसके लेखक हैं हिन्दी के निर्माता और प्रसिद्ध गद्य लेखक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी। नागपुत्र अपने पिता को एक उपकार का काम बतला रहे हैं जिसे उनकी समझ से कोई नहीं कर सकता। उनके मित्र के पिता के पास गालव नाम का एक ब्राह्मण घोड़े के साथ आया था। उनके शब्दों में वह ब्राह्मण अपने और घोड़े के सम्बन्ध में राजा से कहता है। प्रस्तुत प्रसङ्ग उसी समय का है।

आकाशवाणी के साथ आकाश से उतरा हुआ यह कुवलय नाम का घोड़ा चलने में इतना तेज है कि तेज से तेज चलनेवाली हवा भी इसका मुकाबला नहीं कर सकती। यह चाल में हवा को उसी प्रकार पीछे छोड़ता हुआ आगे बढ़ जाता है जिस प्रकार मृत्युलोक के रहने वालों का चित्त एक वस्तु की इच्छा कर दूसरी पर गढ़ता है और क्रमशः इसी प्रकार बढ़ता रहता है। इस कुवलय नामके घोड़े को राजा अश्वजित के पास लेकर जाओ तथा उनका पुत्र राजकुमार कृतध्वज इस घोड़े की सवारी पर उस राक्षस को मारने जायगा। तब तुम्हारा कष्ट दूर होगा।

पृष्ठ ५—८

शब्दार्थ—आभूषण=गहने। कुहराम=रोना-पीटना। दर-दीवार=

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चारों ओर। लोक रीति=लोकाचार। चकपकाना=आश्चर्य में पड़ना। पतिव्रता=पति में अनन्य अनुराग और श्रद्धा रखनेवाली स्त्री। प्रतिज्ञा=प्रण। (पृ० ६) वञ्चित=रहित, हीन, अलग। आराधना=पूजा-प्रार्थना, उपासना। भोलानाथ सदाशिव=भगवान शङ्कर। रिझाना=प्रसन्न करना। एवमस्तु=ऐसा ही होगा। त्रिनयन=तीन नेत्रों वाले भगवान शङ्कर। नागाधिप=नागों या सर्पों के राजा। जाँचना=याचना करना या माँगना। प्रस्तुत=तैयार। (पृ० ७) वैभव=ऐश्वर्य, धन-दौलत। साष्टांङ्ग दण्डवत=आठों अंग (मस्तक, हाथ, पैर, हृदय, आँख, जाँघ, वचन और मन) से भूमि पर लेटकर प्रणाम करना। लालसा=इच्छा। सुपथ=अच्छे मार्ग पर। मति=बुद्धि। संवाद=बातचीत। पूर्व=पहले। अलौकिक=अद्भुत, जो इस लोक में दिखाई न दे। (पृ० ८) पन्नगाधिपति=नाग या सर्पों के राजा। पाणिग्रहण=विवाह। नन्दन=पुत्र। भली-चङ्गी=सुन्दर और स्वस्थ। मणिधर=सर्प या नाग। कृत-कृत्य=सफल मनोरथ, कृतार्थ। सैन्य=सेना। सिङ्गार=शृङ्गार, सजावट। कलेजा टंढा होना=संतोष होना।

मणिधर मुकुटमणि·····················बिना सैन्य जीत लिया है।

सन्दर्भ—सर्पों के राजा अश्वतर ने अपने पुत्रों के मित्र कुमार कृतध्वज या कुवलयाश्व पर उपकार करने के लिए भगवान शङ्कर से वरदान लेकर उसकी मृत स्त्री मदालसा को अपनी साँस से वरदान के प्रभाव के कारण जन्म दिया। उन्होंने कन्या की तरह मानकर मदालसा का विवाह बड़ी धूम-धाम से कुवलयाश्व से कर दिया। प्रस्तुत गद्यांश का प्रसङ्ग उन दोनों की नागलोक से विदाई के अवसर का है।

सर्पों के शिरमौर राजा अश्वतर ने विदाई के अवसर पर कुवलयाश्व को अनेक बहुमूल्य मणि-रत्नादि, सुन्दर-सुन्दर कीमती वस्त्र और सुगन्धित चन्दन आदि देकर बड़े गाजे-बाजे और खुशी-आनन्द के साथ नागलोक से विदा किया जिस प्रकार मानों दामाद का विदा-आयोजन किया गया हो। एक भले मित्र के साथ भलाई का व्यवहार करके उन्होंने अपने जीवन में सफलता का अनुभव किया। उन्होंने राजकुमार कुवलयाश्व से भिन्न-भिन्न शब्दों में

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रार्थना की कि वे नागलोक से जाकर उन्हें न भूल जायँ बल्कि समय-समय पर पधार कर नागलोक की शोभा बढ़ाते रहें। कुवलयाश्व के पिता से नमस्कार का भी निवेदन अश्वतर ने किया और कहा कि कुवलयाश्व लोग सेनाओं से दूसरों को जीतते हैं किन्तु तुम्हें तो उसकी आवश्यकता न पड़ी। तुम्हारे प्रेम के सुन्दर वर्ताव ने हम लोगों को यों ही, सहज में जीत लिया है।

पृष्ठ ९–११

शब्दार्थ—सुपुर्द करना=सौंपना। सुचित होना=निश्चिंत होना। निर्लेप=माया रहित। (पृष्ठ १०) निरञ्जन=दोष रहित। भौजाल=संसार का माया जाल। अविकारा=बिना विकार या दोषवाला। संस्कार=शिक्षा, उपदेश तथा सुसंगत आदि का मन पर पड़ा हुआ प्रभाव। कच्चे कलेजे में=बचपन में। कृत्य=कार्य। (पृष्ठ ११) मिट्टी में मिलाना=नष्ट करना। ज्ञानोपदेश=ज्ञान के उपदेश। प्रताप=प्रभाव। समर्थ=योग्य। सम्पत्ति=ऐश्वर्य या धन-दौलत। औदार्य=उदारता। विपत्ति=कष्ट। धैर्य=धीरता। संग्राम=युद्ध। शौर्य=वीरता। दुस्त्य=अत्यन्त कठिन। सत्=सत्य, पवित्रता, शुचिता। सिद्धान्त=भली-भाँति सोच-विचार कर स्थिर किया हुआ मत। प्रयुक्त करना=लगाना।

छोटेपन ही से ज्ञान के संस्कार..............चित्त पर बहुत रहता है।

सन्दर्भ—प्रस्तुत अवतरण भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की लेखनी से प्रसूत मदालसोपाख्यान नामक पाठ से लिया गया है। इसमें बचपन के संस्कार पर कथा के साथ-साथ विचार प्रस्तुत किया गया है। कुवलयाश्व के पुत्र सुबाहु को उसकी माता बचपन में खिलाते समय ज्ञान-वैराग्य के गीत गा-गाकर सुनाती थी उसी से सम्बन्धित प्रसङ्ग है।

ज्ञान के गीतों की बातें खाते समय लगातार अपनी माता मदालसा के मुख से सुन-सुनकर बालक सुबाहु के मन में ज्ञान और वैराग्य की शिक्षा का बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। और युवा होते ही सुबाहु संसार के प्रपंचों को छोड़कर तपस्या के लिए वन के एकान्त में जा पहुँचा। सुबाहु के बाद मदालसा ने दो पुत्रों को और जन्म दिया। वे लड़के भी बालकपन से ही ज्ञान की बातें और

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गीत सुनते रहे। उनकी भी जैसी बातें सुनने को मिलीं उसी के अनुसार उनमें ज्ञान और वैराग्य बढ़ता गया। बड़े होने पर अब उन्हें युवकों की सी बुद्धि बढ़ी तो संसार से विरक्त हो उसे तुच्छ समझकर राजमहल और घर की माया-ममता को छोड़कर भाग निकले। यह ठीक और उचित ही था क्योंकि बचपन में जो और जिस प्रकार की बातें बालकों को सिखायी या बतलायी जायँगी उनके युवक होने पर उन बातों का ही अत्यन्त गहरा प्रभाव उनके हृदय पर जमा रहेगा। यह बिल्कुल स्वाभाविक ही है।

प्रश्न—अपने शब्दों में मदालसोपाख्यान की कथा लिखिए।

प्राचीनकाल में शत्रुजित नामक किसी राजा के लड़के कृतध्वज और नागलोक के राजा अश्वतर नाग के दो बेटों में बड़ी गहरी मित्रता हो गयी। नागलोक के दोनों राजकुमार अपना लोक छोड़कर हमेशा कृतध्वज के साथ रहते-खेलते थे। अश्वतर नाग के पूछने पर एक दिन नागपुत्रों ने बतलाया कि शत्रुजित राजा के कुमार कृतध्वज का बर्ताव और प्रेम ऐसा है कि उसके बिना हमें नागलोक में रहना दुखदायी मालूम पड़ता है। पिता को जब यह बात मालूम हुई तो उन्होंने फिर पूछा क्या ऐसे मित्र की तुम लोगों ने कुछ भलाई की है? नागपुत्रों ने फिर कहा कि कृतध्वज तो हमसे अधिक धनी, शक्तिशाली, विद्यावान और बुद्धिमान है उसकी हम क्या भलाई करें, हाँ एक भलाई का काम कर सकते हैं किन्तु वह इतना कठिन है कि उसे केवल विधाता ही कर सकते हैं। नागराज ने वह काम जानना चाहा क्योंकि वे अपने पुत्रों के मित्र की मित्रता के उपकार का ऋण चुकाना चाहते थे। नागकुमारों ने कहा—उसके मित्र के पिता के पास एक बार गालव नाम का कोई तपस्वी ब्राह्मण एक बहुत तेज और सुन्दर घोड़े को लेकर आया। उस घोड़े का नाम कुवलय था और वह उस ब्राह्मण को आसमान से उतरता हुआ मिला था। साथ ही आकाशवाणी हुई थी कि यह घोड़ा आकाश और पाताल सब जगह हवा की तरह तेज जा सकता है। पातालकेतु नाम का राक्षस ऋषि-मुनियों को तप नहीं करने देता था और दूसरे लोगों को परेशान करता था। ब्राह्मण भी इस राक्षस से भयभीत और त्रस्त था। आकाशवाणी में यह भी कहा गया था कि यह

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

घोड़ा राजा को दो और उनका पुत्र इस घोड़े पर चढ़कर उस राक्षस को मारे जिससे राजा का बड़ा यश फैलेगा। राजा ने ब्राह्मण की बात मान ली और राजकुमार कृतध्वज कुवलय घोड़े पर बैठकर गालव मुनि के आश्रम में जाकर रहने लगा। एक दिन वह राक्षस जंगली सूअर का भेष धरकर वहाँ आया। राजकुमार कृतध्वज ने, जो अब कुवलयाश्व भी कहा जाने लगा था, उस सूअर के मारने के लिए धनुष पर बाण चढ़ा घोड़ा दौड़ाया। सूअर एक जङ्गल की ओर भागा और अन्त में एक गड्ढे मे गिर पड़ा। कुँवर कुवलयाश्व ने बराबर पीछा किया किन्तु अंधेरे में पता न चला। उजेला होने पर कुवलयाश्व ने सूअर की जगह अपने सामने एक सुन्दर महल देखा जिसमें रत्न आदि जड़े हुए थे। दरवाजे की सीढ़ियों पर एक सुन्दर स्त्री को चढ़ते हुए उसने पाया। कुवलयाश्व ने घोड़ा बाँध दिया और मकान में घुसने पर भीतर उसने दालान में झूलेदार रत्नजटित खाट पर एक कन्या को देखा जिसके पास ? ह स्त्री बैठी हुई थी, जो सीढ़ियों पर उसे मिली थी। कुवलयाश्व को खते ही वह कन्या बेहोश हो गयी। राजकुमार ने उसकी सखी से बेहोशी का कारण तथा उसके बारे में अन्य बातें पूछीं। और दोनों ने मिलकर उसकी बेहोशी दूर की। उस स्त्री ने बतलाया कि यह गन्धर्वों के राजा विश्वावसु की कन्या मदालसा है जिसे पातालकेतु नाम का दैत्य उठा लाया है और अगली त्रयोदशी के दिन इससे विवाह करनेवाला था। इस दुख से जब मदालसा प्राण छोड़ रही थी तो आकाशवाणी हुई कि प्राण मत छोड़—गालव के आश्रम में जिस राजकुमार से वह राक्षस मारा जायगा उससे तेरा विवाह होगा। मैं इसकी सखी विन्ध्यवान की पुत्री और पुष्करमाली की पत्नी कुण्डला हूँ। वह राक्षस उस राजकुमार के हाथों सूअर के रूप में मारा गया और वह इसका पति हो गया किन्तु आपके रूप पर यह मोहित हो गयी है और यह आपको चाहती है किन्तु आपसे विवाह न होगा यह समझकर मूर्छित हो गयी है। तब राजकुमार ने बतलाया कि किस प्रकार उसने उस सूअर का वध किया। कुण्डला ने तुम्बरू गन्धर्व का ध्यान कर, उन्हें बुलाया जिसने दोनों का विवाह करा दिया। इसके बाद कुण्डला तप करने चली गयी। राजकुमार ने मदालसा को घोड़े पर बैठाया और पाताल लोक से

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ज्योंही बाहर निकलने लगा त्योंही राक्षसों की फौज ने मदालसा को उससे छुड़ाना चाहा किन्तु कुवलयाश्व ने जरा-सी देर में सबको मार गिराया और अपने घर पिता के पास आकर सारा हाल कह सुनाया। उसके माता पिता अपने पुत्र और बहू मदालसा को पाकर बड़े खुश हुए। राजा ने कुवलयाश्व को घोड़े पर चढ़कर राक्षसों से ऋषि-मुनियों की रक्षा करने की आज्ञा दी। एक दिन यमुना के किनारे पातालकेतु का भाई तालकेतु नकली मुनि बनकर बैठा था। उसने कुवलयाश्व को देखकर कहा—राजपुत्र तुम अपने सब गहने उतार कर मुझे दो और मैं जल में डूबकर वरुणदेव की पूजा कर जबतक न लौटूँ तब-तक हमारे आश्रम की रखवाली करो। गहनों को लेकर राक्षसी-माया से राज-महल में जाकर मदालसा से वह राक्षस बोला कि राजकुमार को राक्षस ने मार डाला है और उन गहनों को फेंक कर लौट आया। महल में हाहाकार मच गया। उधर मदालसा ने प्राण दे दिये। राजा ने पुत्र का क्रिया-कर्म किया। इधर राक्षस ने घर जाने की कुँवर को छुट्टी दे दी। कुवलयाश्व के महल पर पहुँचने पर आश्चर्य और घबड़ाहट का ठिकाना न रहा। प्रिय मदालसा के प्राण त्याग देने से वह बहुत दुखी हुआ और उसने प्रतिज्ञा की कि किसी दूसरी स्त्री से मैं जन्म भर बात न करूँगा। तब से वह इस कारण दुखी रहता है। नागपुत्रों ने पिता से बतलाया कि यदि उसकी भलाई हो सकती है तो केवल यह कि कुवलयाश्व को मदालसा फिर से मिल सके। किन्तु यह कौन कर सकता है। नागराज बोला—ईश्वर की दया और परिश्रम यदि मनुष्य करे तो मनुष्य सब कुछ कर सकता है।

नागराज अश्वतर ने उस दिन से हिमालय पर्वत पर सरस्वती की प्रार्थना प्रारंभ की और उनको प्रसन्न कर वरदान पाया जिससे उन्हें और उनके भाई कम्बल को सारी संगीत विद्या का पूरा-पूरा ज्ञान हो गया। फिर अपने भाई कम्बल के सहित वे कैलाश पर्वत पर गये और गा-गाकर भगवान् शङ्कर की स्तुति से पार्वती और महादेव दोनों का साक्षात् दर्शन पाया। अश्वतर के वर माँगने पर शङ्कर ने एवमस्तु कहकर कहा—जाओ, तुम्हारी साँस से आज के तीसरे दिन मदालसा उत्पन्न होगी। यही अश्वतर ने माँगा था। ठीक तीसरे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दिन कुवलयाश्व की स्त्री मदालसा अपने उसी रूप और सुन्दरता के साथ उत्पन्न हुई। एक दिन अश्वतर ने अपने पुत्रों से कहकर उनके मित्र कुवलयाश्व को बुलवाया। कुवलयाश्व नागपुत्र के साथ उनके पिता के सामने हाथ जोड़े उपस्थित हुए। अश्वतर ने कुवलयाश्व को गोद में बैठाकर उसकी खूब प्रशंसा की और कहा—बोलो हम भी क्या तुम्हारा कुछ उपकार कर सकते हैं? राजपुत्र कुवलयाश्व ने केवल यह मांगा 'वर देना चाहते हैं तो इतना ही दीजिये कि मेरी मति सदा सुपथ पर चले।' नागराज ने दूसरा वर माँगने के लिए कहा। इसी बीच नागराज के भाई कंबलानुज महल में से मदालसा को ले आये और उसे कुमार के हाथों में दे दिया। मदालसा को पाकर जो अलौकिक आनन्द कुवलयाश्व को हुआ उसका वर्णन नहीं हो सकता। नागराज ने बड़ी धूमधाम के साथ दोनों का फिर से विवाह करा दिया। इस अवसर पर बड़ा उत्सव और दावतें हुईं। नागलोक जगमगा उठा।

नागराज अश्वतर ने बहुत से मणि, धन, सुन्दर वस्त्र और चन्दन आदि देकर विदा किया और नागलोक में आते रहने की विनती की। नाग कन्याओं ने भिन्न-भिन्न वस्त्रों और गहनों से उसका साज-शृंगार किया। और बड़े दुःख से रोकर कन्या की तरह मदालसा को बिदा किया। आनन्द के साथ कुवलयाश्व ने अपने पिता के महल में प्रवेश किया। पिता को खोई हुई सम्पत्ति मानो मिल गयी। राज्य भर में आनन्द मनाया गया, घर-घर बधाइयाँ हुईं, मंगलगीत गाये गये। बहुत दिनों बाद राजा रानी के परलोक सिधारने पर कुवलयाश्व राजा और मदालसा रानी हुई। दोनों सुख से दिन व्यतीत करने लगे। मदालसा को एक पुत्र हुआ, राजा ने उसका नाम 'सुबाहु' रखना चाहा। रानी को यह नाम व्यर्थ लगा। मदालसा जब बालक को खिलाती तो वह उसे ज्ञान के गीत सुनाती जैसे—

अरे जीव तू आत्मा शुद्ध है। निरञ्जन है तू बुद्ध है॥
फँसा है तू आकर भौजाल मे। निराला है तू इनसे पर चाल में॥
पुत्र भूल तू जग में आया। माया ने तुझको भरमाया॥
तू है अलख निरञ्जन बेटा। जग माया ने तुझे लपेटा॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है तू इस शरीर से न्यारा। परमात्मा शुद्ध अविकारा।।
वही यतन कर सुत मेरे। जिससे छूटैं बन्धन तेरे।।

ज्ञान के इन गीतों का प्रभाव यह हुआ कि वह लड़का संसार को छोड़कर वन में चला गया। दो लड़के और हुए उनका भी यही हाल हुआ। चौथे लड़के का नाम अलर्क रखा गया। राजा तीन बेटों का हाल देखकर बड़ा दुखी हुआ था उसने अलर्क को ज्ञान के गीतों से अलग रखा उसे सब प्रकार की नीति और धर्म पढ़ाया। बड़ा होने पर अलर्क बड़ा वीर और प्रतापी हुआ। पिता की शिक्षा के कारण उसमें एक महान राजा के सब गुण आ गये। राजा कुवलयाश्व और रानी मदालसा ने अलर्क को राजकाज सौंप दिया और आप वन में तपस्या के लिए चले गये। रानी मदालसा ने अलर्क को एक यंत्र दिया था जिसके उपदेशों को पढ़कर अलर्क बड़ा ज्ञानी, गुणी, प्रतापी और प्रसिद्ध राजा हुआ।

चारु-चरित्र

पं० बालकृष्ण भट्ट

[जन्म सं० १६०१ मृत्यु सं० १९७१]

जीवन-परिचय—आपका जन्म सं० १६०१ में प्रयाग में हुआ था। आपके पिता पं० वेणीप्रसाद भट्ट बहुत पढ़े लिखे व्यक्ति न थे, पर शिक्षा की ओर उनकी अधिक रुचि थी। आपकी माता भी बड़ी विदुषी थीं, जिससे आपकी शिक्षा का उचित प्रबन्ध बचपन से ही किया गया। आरम्भ में आपको घर पर संस्कृत की शिक्षा दी गयी। जीवन के कुछ वर्ष आपने 'मिशन स्कूल' में भी विद्यार्थी के रूप में बिताये थे। भट्टजी अध्ययनशील व्यक्ति थे। अपने स्वाध्याय से घर पर ही पढ़कर आपने संस्कृत हिन्दी, उर्दू, फ़ारसी और अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'जमुना मिशन' स्कूल में आपने कुछ दिनों तक अध्यापन का कार्य भी किया था। किन्तु अपने धार्मिक विचारों के कारण आपको यह नौकरी छोड़नी पड़ी थी। कुछ दिनों के बाद आप 'हिन्दी प्रदीप' नामक पत्रिका के सम्पादक हुए। आपने ३२ साल तक बड़ी योग्यता तथा कुशलता से इस पत्र का सम्पादन किया। आपके जीवन का यह काल आपके साहित्य-सेवा का काल था। बड़ी लगन और उत्साह से आपने 'हिन्दी प्रदीप' चलाया। उन दिनों अखबार चलाना आज-सा आसान न था।

आपका सारा जीवन हिंदी-सेवा में बीता। आपके निबंध समय-समय पर 'हिन्दी प्रदीप' में प्रकाशित हुए हैं, जो हिन्दी-साहित्य की अमूल्य निधि हैं। आप भारतेन्दुजी के पश्चात् उस युग के सर्वश्रेष्ठ लेखक थे। आपके निबन्धों के विषय सदा नवीन और आकर्षक होते थे। निबन्धों में मौलिकता होती थी। इस युग के लेखकों की भाँति उनके विचार किसी दूसरी भाषा के ग्रन्थों से नहीं लिए गये हैं। मौलिकता उनकी एक अपनी विशेषता है।

वे सत्य-प्रिय सज्जन थे। सनातनधर्म के अनुयायी थे, पर कट्टर न थे। उन्होंने काशी नागरीप्रचारिणी सभा के 'हिन्दी-शब्द-सागर' नामक शब्दकोश का कुछ दिनों तक बड़ी कुशलता से संपादन भी किया था। बाद में अस्वस्थ होने के कारण आपको यह काम छोड़ना पड़ा। श्रावण कृष्ण १३, सं० १९७१ को प्रयाग ही में आप परलोकवासी हुए।

भट्टजी की रचनायें—१—सौ अजान एक सुजान, २—नूतन ब्रह्मचारी (उपन्यास), ३—कलिराज की सभा, ४—रेल का विकट खेल, ५—बालविवाह नाटक, ६—जैसा काम वैसा परिणाम, ७—आचार विडम्बना, ८—भाग्य की परख, ९—गीता सप्तशती की आलोचना १०—साहित्य सुमन, ११—पद्मावती और शर्मिष्ठा। साहित्य-सम्मेलन प्रयाग से भट्ट निबन्धावली नाम से दो भागों में आपके निबन्धों का संग्रह भी प्रकाशित हुआ है। अपने षट्-दर्शन संग्रह का भी हिन्दी में अनुवाद किया है।

भट्टजी की भाषा—भाषा की दृष्टि से भट्टजी की भाषा अपने समकालीन लेखकों में सबसे अच्छी है। आप यथाशक्ति तत्सम शब्दों का प्रयोग करते थे।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आपकी भाषा संयत और शिष्ट होती थी। कहीं कहीं आपकी भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ-साथ फारसी, अंग्रेजी और उर्दू के शब्दों का प्रयोग भी दिखायी देता है। जैसे मकबरे, मौका, कहकहा, आलीशान, कैरेक्टर, फीलिंग आदि। आपने मुहावरों तथा कहावतों का बड़ा सुन्दर प्रयोग किया है। गम्भीर लेखों में भी आपने मुहावरों का प्रयोग अधिकता से किया है। पर ऐसा प्रयोग कहीं-कहीं खटकता भी है। मुहावरों का प्रयोग 'अपनी सीमा के अन्दर ही शैली में सुन्दरता ला सकता है।

भट्टजी की शैली पर उनके व्यक्तित्व की पूरी छाप है। प्रत्येक वाक्य में वह आपसे बातचीत करते जान पड़ते हैं। इस विशेषता से ही आपकी रचनाएँ अत्यन्त उत्कृष्ट हो गयी हैं। उनकी भाषा मंजी है। उनकी शैली परिमार्जित, पुष्ट और निखरी है। अपनी रचनाओं में वह दो प्रकार की शैली का प्रयोग करते दिखाई देते हैं। परिचयात्मक शैली और भावात्मक शैली।

(१) परिचयात्मक शैली—भट्टजी की यह शैली सामाजिक तथा व्यावहारिक विषयों में देखी जाती है। इसकी भाषा में गति है, प्रवाह है। इस शैली में किसी भी विषय का प्रतिपादन बड़ी सरलता से किया गया है। उनके सामाजिक निबन्ध तथा उपन्यास में अधिकतर ऐसी ही शैली है, किन्तु उनकी इस शैली से उनकी साहित्यिक प्रतिभा पूर्ण रूप से आँकी नहीं जा सकती।

(२) भावात्मक शैली—इस शैली में भट्टजी का वास्तविक रूप दिखायी देता है। उन्होंने गंभीर भावात्मक शैली में प्रायः उच्चकोटि के निबन्धों को लिखा है। इस शैली में काव्य की सी सुन्दरता है जो पाठकों को अपने में लीन कर लेती है। इस शैली की तीन विशेषताएँ हैं: १—इसमें शुद्ध हिन्दी भाषा का प्रयोग है। संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग अधिक हुआ है। भाषा गतिमय, सरल तथा प्रसादगुणयुक्त है। २—इस शैली में अलंकारों का सफल प्रयोग है। उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि अलंकार आये हैं। शैली ही अलंकारिक है। ३—भाव और विचार कल्पना के साथ ऐसे मिले हैं कि उनमें एक प्रकार का चमत्कार आ गया है। इस दृष्टि से उनकी यह शैली उन्हें साधारण स्तर से बहुत ऊपर उठाती है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हास्य और व्यंग—आपकी शैली में हास्य और व्यंग का भी प्रचुर परिमाण में प्रयोग हुआ है। हास्य अपनी सीमा के भीतर है, संयत और शिष्ट है। मुहावरों के प्रयोग से अधिक तीखा और मार्मिक हो गया है। पं० प्रतापनारायण मिश्र की तरह भट्टजी के भी कुछ निबन्ध हमें हँसाते हैं, किन्तु जहाँ मिश्रजी के निबन्ध हमें गुदगुदाकर हँसाते हैं, वहीं भट्टजी के निबन्ध बड़ी आसानी से हमारे अधरों पर मुस्कान की रेखा खींच देते हैं। पं० प्रतापनारायण मिश्र की भाषा में ग्रामीण प्रयोगों का बाहुल्य है, पर भट्टजी की भाषा ऐसे प्रयोगों से मुक्त है।

इन विशेषताओं से भट्टजी अपने समकालीन लेखकों में सर्वश्रेष्ठ हैं।

प्रस्तुत निबन्ध 'चारु-चरित्र' आपकी 'साहित्य-सुमन' नामक पुस्तक से लिया गया है। इस निबन्ध में यह बताया गया है कि शुभ चरित्र के क्या-क्या लक्षण हैं। सदाचारी में किन-किन गुणों की अपेक्षा है।

---

१ अनुच्छेद

शब्दार्थ—चारु चरित्र=सुन्दर चरित्र या शुभ आचरण। सम्पादित=ठीक से संग्रह या पूर्ण किया हुआ। दरजे=कक्षा। तालीम=शिक्षा। गौरव=मान, प्रतिष्ठा। प्रतिष्ठा=इज्जत। जोर=प्रभाव। शुद्ध चरित्र=ऐसा चरित्र जिसमें किसी प्रकार का दोष न हो। ओहदा=पद। यश=मर्यादा। नामवरी=आदर। स्पर्धा=डाह। वैभव=ऐश्वर्य। अलबत्ता=निस्सन्देह। पैमाना (फारसी)=नापने का एक साधन। जोख=तौल।

अर्थ

(१) कौन ऐसा होगा............................आगे न बढ़ने पावे।

ये पंक्तियाँ हिन्दी साहित्य के प्रख्यात निबन्धकार पं० बालकृष्ण भट्ट द्वारा लिखित हैं। इन्हें चारु-चरित्र नामक पाठ से लिया गया है। इन पंक्तियों में श्रेष्ठ निबन्धकार ने आदर्श-चरित्र की महानता पर प्रकाश डाला

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है। आपके विचार से सुन्दर आचरण करने से ही मनुष्य का जीवन पूर्ण हो सकता है। बड़े-बड़े पद, ऊँची शिक्षा, अपार धन-राशि मनुष्य को महान् नहीं बना सकते। नामी, शिक्षित और धनी व्यक्तियों में द्वेष की भावना अधिक रहती है। वे कभी किसी को अपने से आगे नहीं देख सकते। उनका तो यह सदा विचार रहता है कि कोई भी व्यक्ति उनसे कभी आगे न बढ़ सके। सभी में अपनी विद्या और योग्यता से दूसरों को पीछे रखने की स्वाभाविक इच्छा होती है! वे चाहते हैं, सभी व्यक्ति धन, मान, विद्या और बल में उनके पीछे रहें। किन्तु चरित्रवान् ऐसा नहीं सोचता। उसके स्वभाव में ऐसी बातें नहीं पायी जातीं। वह कभी दूसरों की अवनति नहीं सोचता, उसे तो दूसरों की उन्नति में आनन्द आता है। वह शान्ति-प्रिय होता है। किसी सच्चरित्र को जब वह सुन्दर गुणों से युक्त पाता है तब वह प्रसन्न हो जाता है। वह हृदय से ऐसी कामना करता है कि दूसरों का चरित्र उससे भी महान् हो। जब वे ऐसे महान् व्यक्ति को देखता है उसका हृदय प्रेम और आदर से भर जाता है। ऐसे व्यक्तियों का वह स्वागत करता है।

२ अनुच्छेद

शब्दार्थ— घनिष्ठ=घना या गहरा। सम्बन्ध=लगाव। सूत्र=मूलमंत्र। सम्पूर्ण=सारा। सभ्यता-रूप-कार्य=सभ्यता के अनुसार काम। समग्र=सारा, सम्पूर्ण। नमूना=आदर्श। कुल=खान्दान या परिवार। सुभीते=सभी कार्य आसानी से करना या आसान। असाधारण=विचित्र। कसौटी=जाँच, परीक्षा। कसौटी में कसना (मुहावरा)=अच्छी तरह जाँच कर लेना। आदरणीय=आदर के योग्य। संभ्रम=सम्मान या इजत। कमबख्त=हतभागी या नीच। ईर्ष्यावश=द्वेष से। मुक्तकण्ठ=पूरे स्वर से। मुक्तकण्ठ से स्वीकार करना (मुहा०)=पूर्ण रूप से मान लेना। जरिया=साधन या उपाय। अगुवा=अग्रगणी। गोत्र-प्रवर्तक=गोत्र चलानेवाले। प्राचीन ऋषियों के नाम से अब तक गोत्र चलते आ रहे हैं।

मत=सिद्धान्त। सम्प्रदायों=धार्मिक मतों। आचार्य=गुरु। नबी=ईश्वरी दूत। अंबिया=बहुत से नबी। औलिया=सिद्ध। आरूढ़ रहकर=

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सवार रहकर या चलकर। गुरोर्गुरु=गुरु का भी गुरु। देववत्=देवता के समान।

अर्थ

कार्य कारण........................अवतार माने गये।

इस गद्यांश में पं० बालकृष्ण भट्टजी ने समझाया है कि किस प्रकार व्यक्ति समाज से सम्बन्धित है और उसके कार्यों का समाज पर कैसा प्रभाव पड़ता है। विद्वान् लेखक के विचार से प्रत्येक मनुष्य सम्पूर्ण देश या जाति की सभ्यता में समानरूप से भाग लेता है। जैसे कार्य तथा उसके कारण में गहरा सम्बन्ध है या कोई भी कार्य बिना किसी कारण के नहीं होता, वैसे ही प्रत्येक व्यक्ति पूर्णरूप से सभ्य नहीं होता। जब प्रत्येक व्यक्ति अलग-अलग अपना सुधार करता है तभी सारे देश या समाज का सुधार होता है। ऐसा करने से देश की असाधारण उन्नति होती है। ऐसा देश या ऐसी जाति संसार के सामने सभ्यता का एक अच्छा आदर्श उपस्थित करती है। जो व्यक्ति भी कुल में पैदा होता है, अधिक पढ़ा-लिखा नहीं रहता और जिसमें कोई विलक्षणता भी नहीं रहती, वह यदि चरित्रवान् होता है तो वह भी आदर का पात्र है। सभी ऐसे चरित्रवान् व्यक्ति की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते हैं और उसकी महानता को स्वीकार करते हैं। ऐसे पूज्य पुरुष का समाज में आदर हुए बिना नहीं रहता। नीच से नीच भी ऐसे व्यक्ति का आदर करते हैं। ऐसा नहीं होगा जो किसी द्वेष के कारण उसकी महानता स्वीकार न करे।

उन्नति करने के लिए चरित्र होना आवश्यक है यदि कोई व्यक्ति उन्नति चाहता है तो उसे अपने चरित्र में सुधार करना चाहिए। चरित्र ही उन्नति का साधन है यह ठीक है कि चरित्रवान को उन्नति करने में अधिक देरी लगती है पर उसकी उन्नति एक न एक दिन अवश्य सम्भव है। वह कभी न कभी समाज का नेता अवश्य बनेगा। अनेक ऋषियों ने भी उन्नति को ही अपनाया है। ये ऋषि यद्यपि भिन्न-भिन्न मत मतान्तरों के माननेवाले थे, फिर भी इन लोगों ने अपने आचरण को सुधारकर असाधारण उन्नति की। महान् ईश्वरीय दूत, सिद्ध, और गुरुगणों ने उन्नति के इसी मार्ग को

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

को अपनाया और चरित्र को महान् बनाकर महान् हुए। वे गुरुओं के भी गुरु हुए। उन्हें देवता के समान मान मर्यादा मिली। उनकी पूजा हुई। समाज ने तो ऐसे कितने चरित्रवालों को ईश्वर का अंश माना।

३ अनुच्छेद

शब्दार्थ-दियानतदारी=ईमानदारी। अटल=स्थिर। कुटिलाई=कुटिलता। बुनियाद=जड़। उत्तम=श्रेष्ठ। सिद्धान्तों=मतों या नियमों। दृढ़=अटल। श्रेष्ठ=महान्। अकुटिल=जो कुटिल न हो, साधारण। स्रोत=प्रवाह। अनुराग=स्नेह। मृदुता=कोमलता। सहानुभूति=हमदर्दी। प्रवाह=धारा। अविभाज्य=सम्पन्नता। कुलीनता=अच्छे कुल में पैदा होना। शिष्टता=सदाचारिता, विनम्रता। विवेक=ज्ञान। अनुष्ठान=आचरण। गिरह=गांठ।

अर्थ

चरित्र की सम्पत्ति..................चलाकर रही है।

इस परिच्छेद में विद्वान् लेखक श्री भट्टजीने चरित्र प्रमुख अवयवों के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किये हैं। आपका कहना है कि सच्चरित्र बनने के लिए कई बातें अत्यन्त आवश्यक हैं। सत्यपर दृढ़ विश्वास करना, शान्तिपूर्वक रहना और दूसरों को रहने देना, धोखा, छल, प्रपञ्च से दूर रहना सच्चरित्रता के आवश्यक अंग हैं। इन्हीं के द्वारा व्यक्ति अपने आचरण को सुधार सकता है। इन सभी गुणों से आवश्यक एक और भी गुण है वह है अपने विचारों पर पक्का होना। अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ रहना उपर्युक्त सभी गुणों की जड़ है। जो एक बार सोच ले उसे सदा अपनाना चाहिए। जो व्यक्ति अपने विचारों का जितना पक्का और दृढ़ होता है उसका चरित्र भी उतना ही निर्मल और महान् होता है।

इन पक्तियों में लेखक के विचार हैं कि महान् चरित्रवाले व्यक्ति का स्वभाव सरल, साधारण और मृदुल होता है। उसके हृदय में कुटिल विचार नहीं आते। उसका चित्त सरल, सादा और सीधा होता है जिससे उसमें प्रेम, विश्वास, दया ऐसे महान् गुण आ जाते हैं। वह प्रेम की प्रतिमा बन जाता

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है। वह सब पर दया करने के लिये तैयार रहता है। उसका चित्त लोगों के दुःख को देखकर दुःखी और सुख को देखकर सुखी होता है। उसके हृदय में संसार के सभी प्राणी के लिये दया तथा सद्भावना रहती है। इन गुणों में से जिस मनुष्य में एक भी गुण आ जाते हैं वह सदाचारी, भला, सज्जन और शिष्ट हो जाता है। इन्हीं गुणों से वह समाज में आदर्श बन जाता है। समाज उसकी पूजा करता है।

सदाचारी के लिये चित्त की सरलता की अत्यन्त आवश्यकता है। चित्त की सरलता ही मानव का आभूषण है। यही एक ऐसा गुण है जो सदाचारी के सभी गुणों में श्रेष्ठ है। चित्त की सरलता के बिना मनुष्य की चतुरता केवल एक धोखा है। जिस प्रकार ज्ञान और विद्या के बिना सद् और असद् का विवेचन अपना महत्त्व नहीं रखती है, व्यर्थ हो जाती है; उसी प्रकार हृदय की सरलता के बिना चतुरता व्यर्थ है। बिना सरलता के चतुरता तथा बिना विवेक के विद्या को प्राप्त कर व्यक्ति समाज में लोगों को केवल धोखा दे सकता है। मनुष्य में योग्यता अवश्य रहती है, पर जब यह योग्यता चित्त की सरलता नहीं पाती, तब मनुष्य का आचरण खराब हो जाता है। वह चोर, डाकू, पाकेटमार बन जाता है। वह चरित्रवान् नहीं बन पाता। वह अपने चरित्र से देश, जाति तथा समाज की उन्नति नहीं करता।

४ अनुच्छेद

शब्दार्थ—आत्मगौरव=अपनी मर्यादा। प्रधान=मुख्य। सम्पन्न=भरा-पूरा। संकुचित=लज्जित। चौकसी=सावधानी। नेकचलनी=अच्छा आचरण करना। उत्कोच=घूस। वसूल=सिद्धांत, विचार। शराफत=सज्जनता। अपितु=वरन्। खरा=सच्चा। अक्षीणो वित्ततः क्षीणः वृत्ततस्तु हतोहतः=धनहीन व्यक्ति तो केवल क्षीण (दीन) है पर चरित्रहीन व्यक्ति तो मरा हुआ है।

अर्थ

यह कुछ अत्यन्त······················निकल सकता है।

इस गद्यांश में विवेकशील लेखक ने चरित्र के प्रधान अंग पर प्रकाश

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

डाला है। उसका ऐसा विचार है कि अपनी मर्यादा को समझना ही हमारे चरित्र का मुख्य अंग है। 'हम भी कुछ हैं' ऐसा सच्चरित्रवालों को सदा ज्ञान रहता है! इसी से वे कोई नीच कार्य करने में सदा लज्जित होते हैं। इसी से वे सदा ध्यान रखते हैं कि वे कभी ऐसा कार्य न कर बैठें जिससे लोगों के सामने उन्हें झुकना पड़े, उनके मान-सम्मान में किसी प्रकार की ठेस पहुँचे। वे जो कुछ करते हैं बड़ा सोच समझकर करते हैं। उनका प्रत्येक कार्य सभ्य-समाज में उदाहरण प्रस्तुत करता है। वे जो कह देते हैं उससे कभी टलते नहीं। जिस प्रकार हम प्रकृति के नियमों को बदल नहीं सकते, वैसे ही हम किसी प्रकार का प्रलोभन या घूस देकर अच्छे आचरण करनेवालों को उनके सिद्धान्त से उन्हें हटा नहीं सकते। उनके विचारों को बदलना बड़ा कठिन है।

विद्वान् लेखक ने फिर इस बात पर जोर दिया है कि सच्चरित्रता का पद और धन से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह कोई जरूरी नहीं है कि जो धनवान है या जिनको ऊँचे-ऊँचे पद मिले हैं वह सच्चरित्र अवश्य हो। अच्छे पदों पर रहते हुए भी लोग आचरणहीन हो सकते हैं। ऊँचा पद और धन सच्च-रित्रता का मापदण्ड नहीं बन सकता। गरीब से गरीब व्यक्ति का भी चरित्र महान् हो सकता है। वह सज्जन हो सकता है।

६ अनुच्छेद

शब्दार्थ—सद्वृत्ति=सद्-आचरण। नैराश्य=निराशा। वित्तवान=धनवान।

अर्थ

सद्वृत्ति-विहीन..................नहीं रहा जा सकता।

इन पंक्तियों में पं० बालकृष्ण भट्टजी ने चरित्रहीन धनिकों के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किये हैं। आपका कहना है कि जिस व्यक्ति के पास धन नहीं है, जो सब प्रकार से दरिद्र है, यदि उसका चरित्र भी अच्छा है तो वह सुखी हो सकता है। ऐसे धनी व्यक्ति जिनका आचरण अच्छा नहीं है, वे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुखी नहीं रह सकते। उनका आगे आनेवाला जीवन दुःखरूपी अन्धकार से भरा होता है। उनके भविष्य के सम्बन्ध के निश्चित रूप से कुछ सोचा नहीं जा सकता। भविष्य में उसके लिये निराशा ही निराशा रहती है। आशा नाम की कोई भी वस्तु उसके लिये नहीं दिखाई देती। संयोग से या दुर्भाग्य से जिसका सब कुछ नाश हो जाता है यदि उसमें धर्म है, सच्चरित्रता है या उसका चित्त प्रसन्न है तो ऐसा मानना चाहिये कि उसका कुछ भी नष्ट नहीं हुआ। उसके चित्त की प्रसन्नता, उसकी आशा धर्म पर उसका अटल विश्वास उसे सब कुछ दिलाने में पुनः समर्थ होगा। उसे लोग कभी किसी प्रकार दरिद्र नहीं कह सकते। वह तो धनी है। अपने चरित्र का धनी है।

अन्तिम अनुच्छेद

शब्दार्थ—लम्पटता=आवारापन। बात का धनी (मुहावरा)=जो कहना उसपर दृढ़ रहना। आश्रितों=अधीनों। अविकत्थन=अपने को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर कहना। विवरण=ब्यौरा। जीवनमुक्त=परमज्ञानी। प्रवणचित्त=लीन। निरर्थक=व्यर्थ। छूछा=खाली।

अर्थ

जिस भाग्यमान ....छूछा नहीं कर सकता।

इन अन्तिम पंक्तियों में विद्वान् लेखक और विचारक पं० बालकृष्ण भट्टजी ने उन भाग्यवान् लोगों के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किये हैं जो सच्चरित्र हैं। आपका कहना है कि वह भाग्यवान् है जिसमें वे सब बातें हैं जो एक सच्चरित्र में होनी चाहिए। ऐसे व्यक्ति की कोई समता नहीं कर सकता। वह मनुष्य होकर भी देवता के समान है। वह अपने चरित्र के बलपर ही देवता बन जाता है, वह परमज्ञानी होता है। चरित्र को सुधारने के लिए बड़ा अभ्यास करना पड़ता है, इसलिए वह महान् योगी भी बन जाता है। जिन बातों का पालन करने से हमारे चरित्र में सुधार होता है, वैसी यदि एकाध बात भी किसी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के जीवन में है तो उसका यश चारों ओर फैल जाता है। अतएव हमारे नव-जवानों को चाहिए कि वे अपना चरित्र बनाने में लीन हो जावें। ऊँची कक्षाओं की शिक्षा भी अच्छे आचरण के बिना व्यर्थ है। कम पढ़ा-लिखा सच्चरित्र व्यक्ति समाज और देश का जितना भला कर सकता है उतना अधिक पढ़ा-लिखा धनी व्यक्ति जो सच्चरित्र नहीं है, नहीं कर सकता।

अभ्यास के प्रश्नों का उत्तर

प्रश्न—चारु-चरित्र का क्या अर्थ है और उसका मनुष्य जीवन में क्या महत्व है ?

चारु-चरित्र से तात्पर्य है सदाचार से, सुन्दर आचरण से। चारु-चरित्र वह गुण है जो मनुष्य के जीवन को सफल बनाता है। इस शब्द से उन सभी गुणों का बोध होता है जो हमें मनुष्य बनाने में सहायक होते हैं।

चारु-चरित्र का हमारे जीवन में बड़ा महत्व है। सच्चरित्रता से ही हमारा व्यक्तित्व महान् बनता है। जब हमारा आचरण अच्छा होता है तब हम दूसरों से अच्छा व्यवहार करते हैं। हम द्वेष नहीं करते, सबसे प्रेम करते हैं। किसी की उन्नति देखकर हम जलते नहीं। दूसरों के दुःख में हम दुखी होते हैं तथा दूसरों के सुख में हम सुखी। किन्तु धन, शक्ति और बुद्धि कभी दूसरों को उन्नति करते नहीं देख सकते। बड़े-बड़े धनी शक्तिशाली और ज्ञानी दूसरों का विकास नहीं देख सकते, वे उनकी उन्नति देखकर जलते हैं। किन्तु सदाचारी व्यक्ति ऐसा नहीं होता। वह किसी से नहीं जलता। उसके हृदय में सबके प्रति सद्भावना रहती है। उसके सिद्धान्त, उनके वचन शास्त्रों की वाणी के समान पवित्र होते हैं उसकी आज्ञाओं का सभी पालन करते हैं। वह मनुष्य के रूप में देवता माना जाता है। यह परमज्ञानी होता है, उसकी लोग पूजा करते हैं। उसका चरित्र पूरे समाज के लिए आदर्श होता है। लोग उनका अनुकरण करते हैं। चरित्र-बल से वह अपने इसी जीवन में सृष्टि देखते हैं। लोग उसका यशगान करते हैं।

२ प्रश्न—चरित्र-पालन के कौन-कौन प्रधान अंग हैं ?

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चरित्र-पालन के अनेक प्रधान अंग हैं। जैसे धोखा न देना, अपनी बात का पक्का होना। जो आप कहिए उसमें चाहें हजार बाधाएँ आयें पर अवश्य करिये। अपने मतों, विचारों तथा सिद्धान्तों पर सदा अटल रहिए। जब आप एकबार विचार कर लीजिये तो उसपर प्रकृति के नियम की तरह अडिग रहिए। चित्त का सरल, साफ तथा सादा होना। आपमें किसी प्रकार की दिखावट न होनी चाहिए। चरित्र-पालन के मुख्य अंग, सरल होना, नम्र होना, सुशील होना। अपने परीक्षण पर विश्वास करना। दुनिया के सभी असम्भव तथा सम्भव कार्य अपने पुरुषार्थ के बलपर कर देना। दूरदर्शी होना। आगे क्या होगा, सोच लेना। 'हम भी कुछ हैं' ऐसा विचार सदा हृदय में बने रहना। हृदय में आत्मगौरव और आत्मविश्वास का होना। सहनशीलता, दया, क्षमा, नम्रता, शीलता, सहनशीलता, वीरता, सहानुभूति, न्यायप्रियता तथा गम्भीरता का होना। न दूसरों की निन्दा स्वप्न में करना और न अपनी प्रशंसा कभी किसी से न करानी चाहिए।

प्रश्न—३—"धनी सब कुछ अपने पास रखकर भी सब भाँति हीन है, पर निर्धन पास कुछ न रखकर भी यदि सद्वृत्त है तो सब भाँति भरा-पूरा है।" कैसे ?

धन पास न होने से कोई गरीब, गरीब नहीं होता, क्योंकि मनुष्य की वास्तविक सम्पत्ति है चरित्र। धन का तो कोई भरोसा नहीं। आज हमारे पास धन है कल नहीं रहेगा। धन तो चंचल जल की धारा के समान है। आज हमारे पास है कल दूसरे के पास रहेगा। धन के रहने पर भी यदि हमारा चरित्र अच्छा नहीं है तब हम उसका ठीक उपयोग भी नहीं कर सकते और हमारा जीवन सदा के लिए दुखी हो सकता है। किन्तु निर्धन यदि सच्चरित्र है तो उसे किसी बात की कमी नहीं है। सच्चरित्रता ही उसका वास्तविक धन है। सच्चरित्र होने से सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि जीवन में शान्ति रहती है। मनुष्य को सतोष रहता है। उसे धैर्य रहता है जिससे वह सदा सुख का ही अनुभव करता है। जो सच्चरित्र होते हैं समाज उनकी पूजा करता है। वे आदर और सम्मान के पात्र होते हैं। उनकी धर्म में श्रद्धा होती है, लोगों का

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मस्तक सदा उनके समक्ष झुका रहता है। यही वास्तविक धन है। संसार की सभी वस्तुएँ उसे प्राप्त हो सकती हैं। किन्तु धनी का ऐसा सम्मान समाज नहीं करता। जबतक धन है तबतक तो लोग उसकी इज्जत करते हैं, (वह भी कुछ ही लोग ऐसा करते हैं) लेकिन ज्योंही उसकी सम्पत्ति समाप्ति हो जाती है त्यों ही वह कौड़ी का तीन हो जाता है। इसीलिए धनी सब कुछ अपने पास रखकर भी सब भाँति हीन हैं, पर निर्धन पास कुछ न रखकर भी यदि सद्वृत्त है तो सब भाँति भरा-पूरा है।

४ प्रश्न—चरित्र-सम्पन्न साधारण शिक्षा रखकर भी जितना उपकार देश या जाति का कर सकता है उतना सुशिक्षित, पर चरित्र का छूछा नहीं कर सकता।' इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं?

देश और जाति के विकास के लिये चरित्र की जितनी अपेक्षा है उतनी शिक्षा की नहीं। शिक्षित व्यक्ति यदि चरित्रवान् नहीं है तो वह अपना भी विकास नहीं कर सकता, फिर देश या जाति का वह क्या विकास करेगा? शिक्षा से मनुष्य की बुद्धि का विकास हो सकता है, पर उससे यह सम्भव नहीं है कि वह मनुष्य के सारे जन्मजात विकारों को नष्ट कर सके। शिक्षित व्यक्ति भी बुरे कार्य कर सकता है। ऐसे पढ़े-लिखे व्यक्ति भी देखें गये हैं जिनके चरित्र अच्छे नहीं हैं जो चोर, बदमाश या लुटेरे हैं। पर जब मनुष्य अपने चरित्र का सुधार कर लेता है, तो वह एक नहीं हजार पढ़े-लिखे लोगों से अच्छा हो जाता है। चरित्र सुधारकर मनुष्य देवता बन सकता है। वह समाज की सेवा करता है, जिससे उसकी पूजा होती है। भारत में अनेक विद्वान् हुए हैं, जिनका नाम भी आज कम लोग जानते हैं। वे शिक्षा-शास्त्री थे। पर आज भी भारत के बच्चे-बच्चे की जबान पर गान्धीजी का नाम है। ऐसा उनके चरित्र के ही कारण सम्भव हो सका। गान्धीजी ने अपने चरित्र से ही सारे भारत को दासता से मुक्त किया। वे अमर हो गये। इससे यह बिलकुल ठीक है कि चरित्र-सम्पन्न साधारण शिक्षा रखकर भी जितना उपकार देश या जाति का कर सकता है, उतना सुशिक्षित पर चरित्र का छूछा नहीं कर सकता।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

५ प्रश्न—पं० बालकृष्ण भट्ट की गद्य-शैली पर अपने विचार प्रकट कीजिये और पं० प्रतापनारायण मिश्र की शैली से उसकी तुलना कीजिये।

भट्टजी और मिश्रजी की शैली की तुलना

भट्टजी और मिश्रजी दोनों अपने युग के श्रेष्ठ निबन्धकार थे। दोनों ने हिन्दी गद्य में एक नयी योजना चलायी थी और अपने जीवनकाल में ही उसका अच्छा प्रसार भी कर लिया था। दोनों ने छोटे विषयों पर भी निबन्ध रचना की। साधारण और व्यावहारिक विषयों पर दोनों ने बड़ी गम्भीरतापूर्वक विचार किया है। मिश्रजी ने साधारण विषयों पर निबंध लिखकर भाषा को ऐसा बना दिया है कि लोग देख लें कि भाषा केवल विचारशील लेखों और आलोचना के लिये नहीं है, वरन् उनमें नित्य के व्यावहारिक विषयों पर भी अच्छे निबन्ध लिखे जा सकते हैं।

भट्टजी भारतेन्दु की भाँति नागरी-साहित्य के निर्माण में लगे थे, पर वे साथ ही साथ जनता को भी नहीं छोड़ना चाहते थे। इससे उनकी शैली के दो रूप हो गये। किन्तु मिश्रजी ने अपने उद्देश्य के सामने इस पर किसी प्रकार का विचार नहीं किया। मिश्रजी की भाषा मुहावरों से भरी तो होती ही थी, उनके निबन्धों के शीर्षक भी कभी-कभी मुहावरों में होते थे, जैसे 'मरे को मारै शाहमदार', 'किस पर्व में किसी की बात आती है' आदि।

मिश्रजी की भाषा भट्टजी की भाषा की तुलना में अधिक अस्थिर है। भट्टजी अपने निबन्ध से पाठकों के अधरों पर मुस्कराहट की एक रेखा ही खींचने में सफल हुए हैं। पर मिश्रजी के निबन्ध उन्हें गुदगुदाकर हँसाते भी हैं। दोनों अपनी-अपनी शैली के लिये प्रख्यात हैं।

६ प्रश्न – निम्नलिखित शब्दों और मुहावरों का अर्थ लिखिये और उन्हें वाक्यों में प्रयोग कीजिये।

नोट—भट्टजी की शैली के लिये पाठ के आरम्भ में दिया गया लेखक के परिचय का उत्तरार्द्ध देखिये।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सम्भ्रम। उत्कोच। जीवन-मुक्त। प्रवण-चित्त। अविकत्थन। अगुआ। मुक्तकण्ठ से स्वीकार करना। नमूना बनाना।

उत्तर—संभ्रम=सम्मान। प्रयोग—समाज में सद्वृत्तवालों का ही संभ्रम तथा आदर होता है। उत्कोच=घूस। प्रयोग—आजकल तो उत्कोच को जमाना है, उत्कोच दीजिये और अपना काम करा लीजिये। जीवनमुक्त=परमज्ञानी। प्रयोग—सच्चरित्रता से मनुष्य जीवनमुक्त हो सकता है। प्रवण-चित्त=मन लगाना। प्रयोग किसी को भी कार्य को सफल बनाने के लिये प्रवण-चित्त होना अत्यन्त आवश्यक है। अविकत्थन=अपने विषय में बढ़ा-चढ़ाकर कहना। प्रयोग—अपने को श्रेष्ठ बनाने के लिये अविकत्थन नहीं करना चाहिये। अगुआ मान लेना=नेता बना देना। प्रयोग—मैंने रमेश को अपनी टीम का अगुआ मान लिया। मुक्तकंठ से स्वीकार करना=हृदय से मान लेना। प्रयोग—गांधीजी के सिद्धान्त को कांग्रेस ने मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया। नमूना बन जाना—आदर्श बन जाना। प्रयोग—राम का चरित्र प्रत्येक भारतीय के लिये नमूना बन गया।

७ प्रश्न—पाठ्य-पुस्तक के आधार पर अपने मित्र को एक पत्र लिखिये और उसे सच्चरित्रता से लाभ बतलाइये।

७५ चौक,
बनारस।

प्रिय रमेश,

सादर वन्दे,

तुम कुशल से होगे, ऐसा सोचता हूँ। मैं भी अच्छी तरह हूँ। अभी-अभी पं० बालकृष्ण भट्ट लिखित 'चारु-चरित्र' पढ़ रहा था। बड़ा अच्छा निबंध है। भट्टजी ने जीवन सफल करने का साधारण उपाय बतलाया है। आशा है, तुम भी उनके विचारों से प्रभावित होना चाहोगे।

सच्चरित्र होने से ही व्यक्ति महान् हो सकता है, उसकी पूजा हो सकती है। सच्चरित्रता से ही जीवन की शोभा बढ़ती है। यही हमारा आभूषण है। धन, विद्या, बल सब कुछ होने पर भी हमारा जीवन पूरा नहीं हो सकता।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हम सुखी नहीं हो सकते। धन हमारी सहायता करता है पर कभी-कभी हमसे ऐसे कार्य करा देता हैं जिसका परिणाम बड़ा बुरा होता है। और धन का विश्वास क्या ? आज है कल नहीं भी रह सकता। धन तो चंचल जल के समान है, कभी यहाँ है कभी वहाँ। यदि कोई चीज ऐसी है जो सदा हमारे साथ रहेगी और सदा लाभकारी है तो वह सदाचार ही है। धनवान् शक्तिवान् यह कभी नहीं चाहता कि संसार का कोई भी प्राणी उससे आगे बढ़ सके। वह किसी की भी उन्नति नहीं चाहता। पर सद्-आचरण करनेवाला व्यक्ति ऐसा नहीं करता। उसका हृदय विशाल होता है, उसकी दृष्टि अपार होती है वह दूसरों के दुःख को देखकर दुःखी तथा दूसरों के सुख को देखकर सुखी होता है। वह सब की भलाई चाहता है। वह गुणों से युक्त व्यक्तियों को देखकर प्रसन्न होता है।

किसी समाज या देश को चरित्र ही महान बना सकता है। जिस देश के व्यक्ति चरित्रवान् होते हैं वह देश उन्नति के शिखर पर पहुँच जाता है। जिस समाज में प्रत्येक अपना सुधार व्यक्तिगत रूप से कर लेता हैं, वह समाज सभ्य समझा जाता है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपना सुधार कर ले तो पूरा समाज सुधर जाये। सारा देश सभ्य बन जाये, उन्नति की पराकाष्ठा छू ले। जिस देश में ऐसे चरित्रवान् पैदा होते हैं वह देश अवश्य महान् है। उस देश की पूजा होती है।

नीच जाति के घर पैदा होकर, अधिक शिक्षा न प्राप्त कर भी व्यक्ति महान् हो सकता है। कम शिक्षा प्राप्त करने से कोई छोटा नहीं होता। कोई व्यक्ति धन के बिना गरीब नहीं हो सकता। अति गरीब, दीन तो वही है जिसका चरित्र दूषित है। छोटा से छोटा आदमी भी उन्नति कर सकता है, पर उसकी उन्नति सद् चरित्र से ही हो सकती है। यह संभव है कि चरित्रवान् की उन्नति में कुछ देर लगे पर उसकी उन्नति होना निश्चित है। एक न एक दिन उसकी उन्नति अवश्य होती है। आज मनुष्य अपने शारीरिक बल का भी बड़ा गर्व करता है, वरन् शारीरिक बल का भी समाप्त हो जाना सम्भव है। लेकिन चरित्र का बल सद्वृत्त करने पर सदा बना रहता है। मनुष्य बड़े-बड़े राजे-महराजों से भी अपने सदाचार के बल पर पैर पुजवा सकता है, अपनी पूजा करा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सकता है। जिनका चरित्र महान् होता है वे ही महान् ऋषि-मुनि कर्मप्रवर्तक आदि होते हैं।

जिनका चरित्र उज्वल है, उनमें अनेक गुण होते हैं। दयालुता, सत्यनिष्ठा, स्वावलम्बन, परोपकार जैसे महान गुण उनमें आ जाते हैं। उसका चित्त सरल, सादा और हृदय कोमल होता है। वह छल-कपट नहीं करता। वह परिश्रमी, पुरुषार्थी होता है। इन गुणों के द्वारा ही कोई चरित्रवान् बन सकता है। उसका जीवन सफल हो सकता है। जो चरित्रवाले होते हैं, उन्हें आत्मसम्मान का बड़ा ख्याल रहता है। 'हम भी कुछ हैं' वह इस बात को कभी नहीं भूलते, जिससे वह अपनी प्रतिष्ठा सदा कायम रखना चाहते हैं। वह कभी कोई बुरा काम नहीं करते। पाप से कोसों दूर भागते हैं उनका चरित्र अनुकरणीय और पूज्य होता है।

मैंने तुम्हारा अधिक समय लिया। क्षमा करो। विद्वान् लेखक और विचार-शील भट्टजी के विचारों से कदाचित् तुम भी प्रभावित होगे। पत्र लिखना।

४-१०-५३

तुम्हारा प्रिय मित्र,
रामकुमार

संस्कृत भाषा का महत्त्व

[ले० आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी]

जीवन परिचय—आधुनिक हिन्दी के युग प्रवर्त्तक लेखक और आचार्य पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी का जन्म रायबरेली जिले के दौलतपुर ग्राम में वैशाख शुक्ल ४ संवत् १६२७ को मध्यम वर्ग के एक साधारण परिवार में हुआ था। आपके पिता पं० रामसहाय दुवे इस्ट इंडिया कम्पनी की सेवा में नौकर थे। सन् १८५७ के सिपाही विद्रोह में इनकी सेना ने भी गदर में भाग लिया था पर वे किसी तरह अंग्रेजों के दमन चक्र से बचकर अपने गांव वापस लौट आए थे।

शिशु महावीर की शिक्षा का कोई अच्छा और समुचित प्रबन्ध न हो सका। उर्दू और फारसी की शिक्षा पाठशाला में मिली घर पर ग्रामीण ढंग से

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संस्कृत का कुछ अभ्यास किया। इस प्रकार पुरवा और उन्नाव आदि स्थानों में इनकी पढ़ाई कुछ दिन चली। बाद में अंग्रेजी शिक्षा के लिये बालक महावीर १५ कोस दूर रायबरेली पैदल भेजे जाते। ये सप्ताह भर के खाने पीने का सामान साथ ले जाते थे। आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण आपको कितने ही कष्ट सहने पड़े। हाथ से खाना बनाना ऊपर से फीस आदि की विकट समस्या आदि ने इनको स्कूल की समुचित शिक्षा से वंचित रखा। किन्तु विद्यानुरागी द्विवेदीजी स्वाध्याय द्वारा ज्ञानोपार्जन में लगे ही रहे।

पढ़ाई-लिखाई का क्रम टूट जाने पर अर्धशिक्षित अवस्था में ही द्विवेदीजी धनोपार्जन के लिए अपने पिता के पास बम्बई चले गये जहाँ आपको कुछ समय के पश्चात् ही पन्द्रह रुपये मासिक पर रेलवे में नौकरी मिल गयी। यहाँ पर इन्होंने मराठी और गुजराती भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया और अंग्रेजी की जानकारी बढ़ायी। इसके साथ-साथ इन्होंने बम्बई में ही तार का काम सीखा और कार्य में दक्ष हो जाने पर जी. आई. पी. रेलवे में पच्चीस रुपये मासिक पर तारबाबू हो गये। रेलवे में नौकरी करते हुए द्विवेदीजी ने संस्कृत का गहन और गम्भीर अध्ययन किया तथा संस्कृत की कई पुस्तकों का अनुवाद किया। कार्य प्रवीणता और अनोखी प्रतिभा के कारण ये 'टेलीग्राफ इन्सपेक्टर' बनाकर झाँसी भेज दिये गये जहाँ इन्होंने एक नये प्रकार के 'लाइन क्लियर' का आविष्कार किया तथा तारों के सम्बन्ध में अंग्रेजी में एक पुस्तक भी लिखी। जिन दिनों द्विवेदीजी कानपुर से इटारसी और आगरा मानिकपुर तक की लाइन का तार सम्बन्धी काम देखते थे उन्हें बंगालियों के सम्पर्क में आने का अवसर मिला और उन्होंने इस सम्पर्क से बंगला भाषा सीखने का लाभ उठाया। ओजस्वी और दृढ़ स्वभाव वाले द्विवेदीजी की अपने बड़े और नये अधिकारी डी. टी. एस. से पट न सकी। द्विवेदीजी को तो हिन्दी की सेवा का नया व्रत लेना था अतः एक दिन आप रेलवे कार्य उसी नये साहब को सुपुर्द कर नौकरी छोड़ हिन्दी के क्षेत्र में चले आये।

सन् १९०३ में द्विवेदीजी को प्रसिद्ध मासिक पत्र 'सरस्वती' का सपादन भार सौंपा गया और बीस वर्षों के लगभग इसका सम्पादन आपने बड़ी कुशलता

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और लगन से किया। सरस्वती के सम्पादक के रूप में आपने हिन्दी कविता की भाषा और विचारावली बदलने, गद्य की अस्थिरता, अव्यवहारिकता तथा शिथिलता मिटाकर व्याकरण से भाषा का परिमार्जन और शोध करके उसे विरामचिन्हों से युक्त किया। इस प्रकार भाषा को भाव एवं विचारों को व्यक्त करने के योग्य बनाया। यह कार्य द्विवेदीजी ने उस समय किया जब कि खड़ी बोली हिन्दी में कविता करना हेय समझा जाता था और इस कारण खड़ी बोली कविता का प्रारम्भ नहीं हुआ था। द्विवेदीजी ने 'सरस्वती' में प्रकाशित खड़ी बोली की कविता का एक संग्रह 'कविता कलाप' नाम से प्रकाशित कराया जिसमें राय देवीप्रसाद 'पूर्ण', पं० नाथूराम 'शंकर' शर्मा, पं० कामताप्रसाद गुरु, बाबू मैथिलीशरण गुप्त तथा स्वयं द्विवेदीजी ने अपनी खड़ी बोली की में कविता संग्रहीत की और हिन्दी संसार के सामने खड़ी बोली कविता का आदर्श प्रस्तुत किया। इस प्रकार द्विवेदीजी ने नये-नये कवियों को कविता लिखने का चाव एक ओर पैदा किया तो दूसरी ओर जनता को हिन्दी कविता का रसास्वादन कराया।

द्विवेदीजी ने संस्कृत और अंग्रेजी साहित्य के अनुवाद ग्रंथों की रचना द्वारा हिन्दी की सेवा की। 'कुमारसम्भव सार', 'रघुवंश', 'हिन्दी महाभारत', 'बेकन-विचार-रत्नावली' आदि ग्रन्थों द्वारा उन्होंने भिन्न भिन्न भाषाओं के ग्रन्थों का अनुवाद हिन्दी में हो इसके लिए स्वयं उदाहरण स्वरूप कार्य किया। उन्होंने साहित्य, भाषा, पुरातत्व-कला, पुस्तक-परिचय, जीवनचरित, विज्ञान इतिहास तथा आलोचना सम्बन्धी सैकड़ों लेख स्वयं लिखे और दूसरे नये-नये लेखकों और विद्वानों से लिखवाकर सरस्वती में प्रकाशित किया। वे इन गद्य-पद्य लेखकों की भाषा में संशोधन भी स्वयं करते थे क्योंकि वे हिन्दी को एक शुद्ध स्वरूप देने के लिए कटिबद्ध थे। और निरन्तर प्रयत्नशील थे कि हिन्दी की सर्वाङ्गीण उन्नति हो। संस्कृत व अंग्रेजी ही नहीं मराठी, गुजराती, बंगाली तथा अन्यान्य प्रान्तीय भाषाओं की सुन्दर-सुन्दर रचनाओं और लेखों का अनुवाद वे छापते थे।

साहित्य और सरस्वती के माध्यम से द्विवेदीजी का आदर्श समाज में एक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सात्त्विक-ज्ञान-ज्योति जगाना था। दीनता और दरिद्रता के प्रति सहानुभूति, युग की सामाजिक और राजनीतिक प्रगति का साथ देना, देश प्रेमको जगाना तथा राष्ट्रीय भावना को अमीरों के आतंक और कुचक्र से बचाना तथा विलास-वैभव तथा श्रृङ्गार के दोषों से जीवन और साहित्य को बचाना ही द्विवेदीजी का आदर्श और जीवन था। जिसे साहित्य में उच्छृंखलता पसन्द न हो वह भला जीवन में उसे कैसे देख सकेगा। वे दुष्टों के शत्रु, निर्भीक, प्रभावशाली कर्मठ और सिद्धान्त प्रिय व्यक्ति थे।

द्विवेदीजी को उनके जीवनकाल में ही पर्याप्त यश और सम्मान प्राप्त हुआ। काशी नागरी-प्रचारिणी सभा ने उन्हें आचार्य की उपाधि से भूषित किया और हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग ने उन्हें 'साहित्य वाचस्पति' की उपाधि दी तथा हिन्दी-प्रेमियों ने मुक्तकंठ उनकी प्रशंसा करके अपनी श्रद्धा प्रकट की थी।

द्विवेदीजी का जीवन अन्तिम दिनों तक संघर्षमय रहा। आर्थिक एवं पारिवारिक चिन्ताओं से उन्हें कभी भी छुटकारा न मिला। असमय में ही उनकी पत्नी और भगिनी का वियोग सहना पड़ा। इतना होने पर भी द्विवेदीजी ने काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को अपनी गाढ़ी कमाई की हजारों पुस्तकें और 'द्विवेदी पदक' की निधि के रूप में अमूल्य सम्पत्ति प्रदान की है। उन्होंने कई हजार रुपये काशी हिन्दू विश्वविद्यालय को भी दिये। यह उनके आत्मोत्सर्ग का आदर्श उदाहरण है। स्वयं अशांत होकर भी वे शांत एवं कार्य-शील रहे। 'सरस्वती' के सम्पादन से कार्यमुक्त हो जाने पर भी वे उसके लिए लेख आदि बराबर भेजते रहे और इस प्रकार हिन्दी और हिन्दी जगत की सेवा में तत्पर रहे। अपने अन्तिम वर्षों में उन्होंने सन्यासाश्रम ग्रहण कर लिया और अपनी ग्राम-भूमि में ही निवास करने लगे थे। हिन्दी के इस महान् तपस्वी आचार्य और यशस्वी लेखक तथा सम्पादक का स्वर्गवास पौष कृष्ण ३० संवत् १९९५ (सन् १९३८) में हुआ।

साहित्य साधना—जिस समय द्विवेदीजी का प्रादुर्भाव हिन्दी में हुआ उस समय तीन प्रकार की शैलियाँ प्रचलित थीं—शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द'

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

को अरबी-फारसी मिश्रित शैली, राजा लक्ष्मण सिंह की संस्कृत बहुला तत्सम शैली और बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की मध्यमार्गी सरल शैली जिसमें ब्रजभाषा के शब्दों-पदों का संस्कार बना हुआ था। भारतेन्दु जी के प्रयास से अनेक लेखक पैदा हो गये थे किन्तु लिखा जा रहा था किसी को भी यह सुधि-समझ और दृष्टि न थी कि क्या और कैसा लिखा जा रहा है। उन लेखकों के सामने न कोई आदर्श था और न कोई प्रतिबन्ध। अव्यवस्थित भाषा और अपरिपक्व शैली जिसका विषय के साथ, भावों के साथ न कोई साम्य और न कोई सामञ्जस्य ही था। उस काल के साहित्य में व्याकरण सम्बन्धी त्रुटियों की भरमार, प्रान्तीय और अप्रचलित शब्दों की अधिकता थी। कहीं शिथिल वाक्य-विन्यास तो कहीं कृत्रिमता और कहीं पाण्डित्य से बोझिल भाषा थी। कोई बड़े-बड़े वाक्यों में लेख लिखकर अपने पाण्डित्य का प्रदर्शन करता था तो कोई अनुप्रासों की झड़ी लगाकर निबन्धों में चमत्कार पैदा करता था। इस प्रकार भाव तो अस्पष्ट और ओझल हो जाते थे। द्विवेदी जी ने भाषा और शैली की यह कलाबाजियाँ देखी और समझी तथा स्थितिको सम्हालनेके लिये हिन्दीकी बागडोर अपने हाथों में ली। काव्य तथा गद्य दोनोंके लिए खड़ी बोली हिन्दीको भाषा और शैलीकी दृष्टि से ठोस आधार दिया।

काव्य का प्रचलन और प्रचार अच्छा हो गया था किन्तु उसकी दशा ठीक न थी, उसका आधार वही रीतिकालीन काव्यकी तरह निरुद्देश्य और निर्बल था। द्विवेदीजीने काव्यको सामयिक, राष्ट्रीय और जीवनके विभिन्न-पक्षोंकी ओर उन्मुख किया। नाटकों और उपन्यासोंकी दशा भी कोई अच्छी न थी, द्विवेदीजीने इन सब त्रुटियोंको दूर करनेके लिए आलोचनात्मक और व्यंग्यात्मक पद्धति अपनायी। उनकी तर्कयुक्त और व्यंग्यपूर्ण आलोचनाओंसे लेखक संभलने लगे और इसका परिणाम यह हुआ कि उन्होंने व्याकरण सम्मत भाषा और निश्चित शैलीकी ओर अपनेको बढ़ाया। लेखकों एवं लोगोंकी मनोवृत्ति और रुचिमें भी परिष्कार आया। सबने व्यापक और विस्तृत जीवनकी ओर दृष्टि दौड़ायी। फलतः द्विवेदीजी की देखादेखी अन्य लेखक भी यात्रा, अनुभव, आविष्कार, इतिहास, अनुवाद, विज्ञान, आलोचना, कला, पुरातत्त्व, जीवन

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चरित सम्बन्धी लेखोंकी रचना करने लगे इस प्रकार हिन्दी का एकाङ्गी साहित्य विभिन्न दिशाओंमें बढ़ने लगा। द्विवेदीजी ने अपने युगको इतना प्रभावित किया कि वह अपने पूर्वके युगसे सर्वथा भिन्न हो गया। इसी भिन्नता ने इस युग को हिन्दी साहित्य के इतिहास में 'द्विवेदी युग' की छाप दी। भारतेन्दु का युग प्रचारका युग था, तो 'द्विवेदी युग' परिष्कार और संस्कार का युग प्रमाणित हुआ।

द्विवेदीजी कोरे सुधारक न थे, कोरे उपदेशक न थे उन्होंने क्रियात्मक रूप में कार्य करके दिखलाया है। अतएव उनका प्रभाव हिन्दी के लिए स्थायी था।

सम्पादक के रूप में वे पूर्णतः सफल थे। उन्होंने हिन्दी पत्रकारिता का स्तर ऊँचा किया। सम्पादक के यथार्थ उत्तरदायित्व का आदर्श प्रस्तुत किया। उनका सरस्वती का सम्पादकत्व आज भी पत्रों और पत्रिकाओं के लिए आदर्श और अनुकरणीय है।

द्विवेदीजी एक सफल निबन्धकार थे। उन्होंने सभी विषयों के एवं व्यावहारिक तथा विविध ज्ञान सम्बन्धी निबन्ध लिखे हैं। निबन्ध-कला की दृष्टि से हम उन निबन्धों की तुलना शुक्लजी के निबन्धों से नहीं कर सकते; किन्तु महत्व की दृष्टि से उनके निबन्ध बड़े से बड़े निबन्धकार के निबन्धों से कम नहीं हैं। उनकी परिचयात्मक शैली में लिखे हुए सैकड़ों निबन्धों में सब कुछ कह डालने की प्रवृत्ति और शक्ति भरी हुई है यही कारण है कि वे बातों के संग्रह कहे जाते हैं। फिर भी उनके निबन्धों में ओज, विचारों की सुन्दर शृंखला तथा भाषा का गांभीर्य एवं सौष्ठव है। भाषा व्यवस्थित एवं सरल तथा वाक्य विन्यास में जटिलता नहीं। एक ही बात को कई ढग से दोहरा-दोहरा कर कहा है जिससे प्रतीत होता है कि लेखक साधारण बुद्धि वालों के लिए कह रहा हो।

द्विवेदीजी का आलोचक का रूप ही उनका वास्तविक और मौलिक स्वरूप है इसी में उनके व्यक्तित्व की छाप अधिक गहरी है। उन्होंने आलोचना की शैली बदली उसको आगे बढ़ाया। आलोचना करने में उनकी प्रतिभा विलक्षण

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

थी। क्या संस्था, क्या सम्प्रदाय, क्या अधिकारी और क्या धनी अथवा बड़ा से बड़ा व्यक्ति बिना भेद-भाव बिना दुराव-लगाव के सबकी उन्होंने निष्पक्ष और निर्भीक आलोचना की है। आलोचक का वास्तविक गुण उनमें था इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि कालिदास उनका प्रिय कवि और नाटककार था किन्तु 'कालिदास की निरंकुशता' नामक पुस्तक में उनकी भी खरी-खरी आलोचना करने में वे नहीं चूके। द्विवेदी जी की आलोचनाएं व्याख्यात्मक और निर्णयात्मक, दो प्रकार की होती थीं। निर्णयात्मक आलोचना में गुण-दोष के विवेचन के पश्चात् उन्होंने अपनी सम्मति और विचार भी दिये हैं। व्याख्यात्मक आलोचना करते हुए उन्होंने गम्भीर विषयों की व्याख्या बड़े सरल ढंग से की है।

द्विवेदीजी कवि भी थे। कविता में विविधता, नवीनता और परिवर्तन लाने के लिए आपने कविताएँ भी लिखीं। उनकी कविताओं में देश-प्रेम, प्रकृति-प्रेम तथा काव्य की भाषा और विषय का परिचय काव्य-जगत को मिलता है किन्तु उन्हें कवि की सफलता प्राप्त न हुई।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, द्विवेदीजी ने हिन्दी के लेखकों को मार्ग का निर्देशन तथा लक्ष्य का संकेत किया स्वयं लिखकर उन्हें प्रोत्साहन दिया। अतः वे लेखकों के भी लेखक और कवियों के कवि गुरु थे। 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' नामक एक लेख से मैथिलीशरणजी गुप्त को 'साकेत' जैसा सुन्दर महाकाव्य लिखने की प्रेरणा मिली। गुप्त जी, ठाकुर गोपाल शरणसिंह तथा पं० रामचरित उपाध्याय जैसे प्रसिद्ध कवियों के भी वे कवि गुरु थे। उनकी साहित्य-साधना असीम और महान है, वे वास्तव में आचार्य थे।

रचनाएँ—द्विवेदीजी की मौलिक और अनूदित इन दो रूपों में विविध विषयों की रचनाएँ हैं।

मौलिक—सुमन (काव्य), देवीस्तुति शतक (काव्य) नैषधचरित चर्चा, हिन्दी भाषा की उत्पत्ति, प्राचीन पंडित और कवि, नाट्यशास्त्र, साहित्यसीकर, साहित्य-सन्दर्भ, समालोचना समुच्चय, विचार-विमर्श, रसज्ञरंजन, सुकवि कीर्त्तन, लेखांजलि, आलोचनांजलि नामक लेख संग्रह तथा आलोचनात्मक ग्रंथ आदि।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनूदित—विनय-विनोद, कुमार-संभव-सार, रघुवंश, मेघदूत, किरातार्जुनीय
स्नेह-माला, विहार-वाटिका, हिन्दी महाभारत, बेकन-विचा
रत्नावली, गंगा-लहरी, भामिनी-विलास, स्वाधीनता औ
सम्पत्तिशास्त्र आदि ।

द्विवेदीजी की भाषा—द्विवेदीजी हिन्दी के प्रकाण्ड पंडित और भाषा ज्ञाता थे। संस्कृत तथा अंग्रेजी के अतिरिक्त उन्हें उर्दू-फारसी, मराठी, बंग तथा गुजराती का अच्छा ज्ञान था। हिन्दी के शब्द-भाण्डार की वृद्धि त उचित अभिव्यक्ति के लिए वे अन्य भाषाओं के शब्दों का भी प्रयोग करते थे उर्दू तथा अन्यान्य भाषाओं के शब्दों से उन्हें कोई दुराव न था किन्तु ऐ शब्द अपने ठीक-ठीक अर्थ और वास्तविक रूप में ही प्रयुक्त हुए हैं। जन में प्रचलित अन्य भाषा के शब्दों का लिखना वे ठीक न समझते थे। भा सम्बन्धी कोई भी त्रुटि आप अक्षम्य समझते थे। द्विवेदीजी की हिन्दी अप प्रकृत और स्वाभाविक रूप लिए हुए है। उसमें संस्कृत, उर्दू अथवा अर फारसी या अंग्रेजी के शब्दों की कलाबाजी नहीं। उनकी हिन्दी में अपनी प्रकृति आत्मा है। उनका वाक्य विन्यास तथा पद-योजना में हिन्दी अपना ढंग है। हिन्दी में उन्होंने नई-नई उद्भावनाएँ की तथा भाषा व्यापक बनाया। इस प्रकार हिन्दी के तद्भव शब्दों के अधिक प्रयोग त हिंन्दी की ही पद-योजना और वाक्य विन्यास के कारण उनकी भाषा में सरल और स्वाभाविकता है, वह सबल भी है और उसमें एक प्रकार की और प्रवाह है। द्विवेदीजी की भाषा एक आदर्श भाषा है। विषय के अ कूल रहते हुए भी उसमें स्वाभाविकता बनी रहती है।

शैली—द्विवेदीजी की शैली के तीन रूप हैं—परिचयात्मक, आलो नात्मक तथा गवेषणात्मक। वे भिन्न-भिन्न शैलियों के निर्माता थे यथावसर उन्होंने उनका प्रयोग किया है। भिन्न-भिन्न शैली में भाषा भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। एक ही लेख में दो शैलियों के द मिलते हैं।

(अ) परिचयात्मक शैली—इस शैली में सरल, सुबोध एवं चलती

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भाषा में स्वाभाविक ढंग पर द्विवेदीजी ने साधारण और सामान्य विषयों पर अनेक निबन्ध लिखे हैं। सरलता के कारण यह शैली बड़ी ही लोक-प्रिय हुई। इस शैली का उद्देश्य, विभिन्न विषयों से जनता को परिचित कराना था।

(ब) आलोचनात्मक शैली—द्विवेदीजी की शैली का वास्तविक रूप और महत्त्व इसी में है। द्विवेदीजी की यह शैली खूब विकसित हुई और उसके कई रूप सामने आये। व्यंग्यात्मक, आलोचनात्मक तथा विचारात्मक इन तीन रूपों में यह शैली दृष्टिगोचर होती है।

व्यंग्यात्मक शैली की भाषा एक दम व्यावहारिक होती थी। भाषा सरल, छोटे-छोटे वाक्य तथा मुहावरों का प्रयोग अधिक होता था। उसमें विनोद भी पर्याप्त मात्रा में होता था और व्यंग-भाव भी स्पष्ट समझ में आ जाता था। इस शैली के कथन में गहरी चोट और दृढ़ता होती थी। उदाहरणार्थ—

"म्युनिसिपैल्टिीके एक मेंबर हैं बाबू बख्शिशराय। आपके साले साहब ने फी रुपये तीन-चार पंसेरी का भूसा (म्युनिसिपैलिटी को) देनेका ठीका लिया है। आपका पिछला बिल १० हजार रुपये का था। पर कूड़ा-गाड़ी के बैलों और भैंसों के बदन पर सिवा हड्डी के माँस नजर नहीं आता। सफाई के इंसपेक्टर हैं लाला सतगुरुदास। आपकी इंसपेक्टरी के जमाने में, हिसाब से कम तनख्वाह पाने के कारण, मेहतर लोग तीन दफे हड़ताल कर चुके हैं। नजूल जमीन के एक टुकड़े का नीलाम था। सेठ सर्वसुख उसके तीन हजार देते थे, पर उन्हें वह टुकड़ा न मिला उसके ६ महीने बाद म्युनिसिपैलिटी के मेम्बर पं० सत्यसर्वस्व के ससुर के साले के हाथ वही जमीन एक हजार पर बेंच दी गई।"

आलोचनात्मक शैली का व्यवहार जहाँ हुआ है वहाँ भाषा गम्भीर, संयत एवं ओजपूर्ण है। शब्द वे ही हैं और मुहावरों का अपेक्षाकृत कम प्रयोग हुआ है। इसमें व्यंग्य और चमत्कार की वैसी प्रधानता नहीं, किन्तु कथन का ढंग आलोचनात्मक एवं तथ्यातथ्य का निर्णय और निरूपण होने के कारण गाम्भीर्य आ गया है। प्रत्येक वाक्य एवं शब्द में पर्याप्त शक्ति और सामर्थ्य है। तत्सम शब्दों का कुछ अधिक प्रयोग भाषा को प्रौढ़ता प्रदान करता है। तत्सम शब्दों में उर्दू और संस्कृत दोनों के शब्द हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"इसी से किसी-किसी का ख्याल था कि यह भाषा देहली के बाजार ही की बदौलत बनी है। पर यह ख्याल ठीक नहीं। भाषा पहले ही से विद्यमान थी और उसका विशुद्ध रूप अब भी मेरठ प्रान्त में बोला जाता है।"

विचार प्रधान शैली का व्यवहार द्विवेदी जी ने वहाँ किया है जहाँ उन्होंने भावों और विचारों को अधिक महत्व दिया है, किन्तु विचार प्रधान शैली में विषयगत द्विवेदी जी अधिक रहे हैं। उनके ज्ञान-विज्ञान सम्बन्धी आलोचनात्मक विचार-प्रधान तथा कलात्मक लेख इस शैली की सीमा में आते हैं।

(स) गवेषणात्मक शैली—इस शैली में साहित्यिक और दार्शनिक तथा खोज सम्बन्धी कुछ निबन्ध द्विवेदी जी ने लिखे हैं। भाषा अधिक प्रौढ़ और संस्कृत के शब्दों से युक्त है, किन्तु उर्दू के तत्सम शब्द प्रायः नहीं आने पाये हैं। इस शैली में गम्भीर विषय का विवेचन हुआ है। जैसे—

"अपस्मार और विक्षिप्तता मानसिक विकार या रोग हैं। उनका सम्बन्ध केवल मन और मस्तिष्क से है। प्रतिभा भी एक प्रकार का मनोविकार ही है। इन विकारों की परस्पर इतनी संलग्नता है कि प्रतिभा को अपस्मार और विक्षिप्तता से अलग करना और प्रत्येक का परिणाम समझ लेना बहुत ही कठिन है।"

इस प्रकार देखते हैं कि द्विवेदी जी ने इन तीन प्रकार की भिन्न-भिन्न शैलियों में महत्वपूर्ण कार्य किया। भाषा और शैली के विकास-क्रम से यदि हम देखें, तो द्विवेदी जी की देन महत्वपूर्ण प्रमाणित होगी। द्विवेदीयुगीन लेखकों ने आदर्श-रूप उन शैलियों को अपनाया। इस दृष्टि से भी वे आचार्य और युग-निर्माता स्वयं सिद्ध हैं।

अनुच्छेद १-२

शब्दार्थ—त्रुटि=कमी, कसर, गलती। दस्तावेज=कुछ आदमियों के बीच परस्पर व्यवहार-सम्बन्धी कागज-पत्र जिनमें उन लोगों के हस्ताक्षर भी हों। दस्तखत=हस्ताक्षर। जड़ जमना=दृढ़ या स्थायी होना। सूत्रपात=प्रारम्भ, श्रीगणेश। राजसत्ता=शासन। सझीदार=हिस्सेदार। रियाया=प्रजा। हुकूमत=राज्य। सत्तासूत्रक=शासन सम्बन्धी। भूमंडल=पृथ्वी। अवतरण=उल्लेख,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रतिकृति, नकल। मालामाल=धनी। मुनाफा=लाभ। विघ्न-बाधा=रुकावट। परिणत=बदला हुआ। कार्य में परिणत करना=कोई कार्य व्यवहार द्वारा करके दिखलाना। पदार्पण=प्रवेश। सामना=मुकाबला। चढ़ा-ऊपरी=एक दूसरे के आगे होने या बढ़ने का प्रयत्न, होड़, लाग-डाँट। द्वार बन्द होना=रास्ता रुक जाना, साधन छिन जाना। कब्जा=अधिकार। पूर्वोक्त=पहले कहे हुए। इकरारनामा=स्वीकृति पत्र, मंजूरी का कागज। प्रदेश=भूमिभाग।

अवतरण—इंग्लैंड की रानी·················अवतरण मात्र है।

यह गद्यांश 'संस्कृत भाषा का महत्व' नामक पाठ से लिया गया है विद्वान लेखक पहले बतला चुका है कि अधिक मुनाफा प्राप्त करने के लिये १२५ व्यापारियों ने मिलकर एक कंपनी बनाई और साढ़े दस लाख की पूँजी से भारत से व्यापार करने का निश्चय किया। इस कंपनी ने आगे क्या-क्या किया और कैसे भारत पर राज्य जमा लिया यही लेखक ने यहाँ बतलाया है।

कंपनी की स्थापना करने के पश्चात् उन व्यापारियों को उस देश के राजा की आज्ञा प्राप्त करना आवश्यक था, अतः उन्होंने उसके लिये प्रयत्न किया। उन लोगों को ३१ दिसम्बर १६०० के दिन राज्य की आज्ञा मिली। उन दिनों रानी एलिजाबेथ इंग्लैंड पर राज्य करती थीं। उन्होंने ईस्ट इंडिया कंपनी के व्यापारियों के कागज-पत्रों पर हस्ताक्षर किये और इस तरह इंगलैंडके उन व्यापारियों को भारत से व्यापार करने की मंजूरी मिल गयी और उन्हें व्यापार करने का अधिकार प्राप्त हो गया। इसी अधिकार से ईस्ट इण्डिया कम्पनी को भारत में घुसने और जमकर व्यापार करने की शक्ति मिली। भारत में अंग्रेजों के राज्य का प्रारम्भ इसी बात ने किया। कुछ समय के लिए सवा सौ व्यापारियों की इस कम्पनीके लोगों ने भारत में आकर राजाओं-का-सा सुख और आनन्द लूटा और अधिकार जमाया। उनके देश इंग्लैंड की जनसंख्या से भारत में जहाँ दस-गुने लोग अधिक हैं ऐसे देश के साथ व्यापार प्रारम्भ किया तथा व्यापार के अलावा वहाँ का शासन और राज्य प्रबन्ध भी करने लगे। इस कम्पनी के सभी व्यापारी अपने देश इंग्लैंड में तो वहाँ की साधारण जनता की तरह थे। वहाँ उनका पद और उनकी योग्यता अधिक न आँकी जा सकी थी, परन्तु

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कम्पनी के वही सवा सौ हिस्सेदार भारत के शासक बने हुए थे और राजा की तरह राज्य-प्रबन्ध करते थे तथा उसके लिए सेना का प्रबन्ध भी कर लिया था। उन सेनाओं के बल पर यहाँ के अच्छे-अच्छे राजाओं-महाराजाओं तथा अन्य मुसलमान शासकों से युद्ध करते थे। आवश्यकताके अनुसार किसी-किसी से मेल-मित्रता बना लेते थे और ऐसे ही अनेक शासन-सम्बन्धी कार्य करते थे। ऐसी अनोखी और अद्भुत बात और कहीं इस पृथ्वी पर हुई है। ऐसा सुनने या देखने में न आया होगा। लेखक आगे कहता है कि यह सब लेखक ने खुद नहीं कहा है; क्योंकि हो सकता है वह भारतवासी होने के कारण बात को बढ़ा-चढ़ाकर या गलत कहे, किन्तु वास्तवमें लेखक ने तो भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास के एक लेखक की पुस्तक में से लेकर कुछ अंश का यहाँ उल्लेख भर कर दिया है। उस इतिहास के लेखक एक अंग्रेज साहब हैं और उनका नाम है ए० रंजोगिन। उन्होंने वह इतिहास लन्दन की टी० फिसर अनविन नामक कम्पनी के लिए लिखा है।

अनुच्छेद ३-५

शब्दार्थ—प्रतियोगिता=प्रतिद्वन्द्विता, होड़। लार टपकना=किसी चीज को देखकर उसको पाने या प्राप्त करनेकी प्रबल इच्छा होना। कोठियाँ=वे मकान जिनमें रुपये का लेन-देन या कोई बड़ा कारबार हो। सामुद्रिक=समुद्र से सम्बन्धित, जहाजी। सानी न रखना=मुकाबले या बराबरी का न होना। बल प्रयोग करना=लड़ाई या युद्ध करना। मतलब निकालना=स्वार्थ सिद्ध करना, अपना काम पूरा करना। कसर=कमी। जी-जान होमना=सारी ताकत लगाना, पूरी-पूरी कोशिश करना। विषम=विकट, कठिन, तीव्र, भीषण। शत्रुभाव=दुश्मनी। नौबत=पारी, हालत। दाँव-पेंच=चालें। आजिज=तंग। सरोकार=वास्ता, सम्बन्ध। आन्तरिक=भीतरी, हार्दिक, वास्तविक। अभिप्राय=उद्देश्य, लक्ष्य। मुट्ठी में करना=कब्जे या अधिकार में लाना। घोर=गहरा। कलह=झगड़ा, युद्ध। अपदस्थ करना=पद या स्थान से गिराना या नीचे करना। कूटनीति=दाँव-पेंच की नीति या चाल,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

घात। कामियाबी=सफलता। नष्टप्रायः=करीब-करीब समाप्त या अन्त। विक्रम=बहादुरी, शूरता। रास्ता साफ कर देना=मार्ग बना देना, रुकावट दूर कर देना। वृद्धि=विस्तार, बढ़ती। वशवर्त्ती=अधीन।

व्यापार व्यवसाय.............. ....लार टपकने लगी।

व्याख्या—प्रस्तुत गद्यांश महावीर प्रसाद द्विवेदी के 'संस्कृत भाषा का महत्त्व' नामक पाठ से लिया गया है। ईस्ट इंडिया कंपनी' के बहुत पहले पोर्तुगीज लोग सन् १४६८ में वास्कोडिगामा के भारत में आने के समय से भारत में व्यापार कर रहे थे। ईस्ट इंडिया कंपनी के आने पर अंग्रेजों और पोर्तुगीजों में व्यापारिक प्रतिद्वन्द्विता हुई। धीरे-धीरे उनका महत्व घट चला और नाममात्र को ही उनकी जमींदारी रह गई। जो कंपनी को मिल गयी। प्रसंग पोर्तुगीजों के भारत में अन्तिम दिनों से सम्बन्धित है।

पोर्तुगीज लोग अंग्रेज लोगों के मुकाबले में अपना व्यापार भारत में न चला सके। उनका व्यवसाय नाम मात्र को था वह भी समाप्त हो गया। बम्बई तथा उसके आसपास की जमीन जिस पर उनकी जमींदारी थी वह भी उनके अधिकार में न रह गयी। पोर्तुगीजों की राजकुमारी कैथराइन का विवाह इंग्लैण्ड के राजा दूसरे चार्ल्स के साथ हुआ था और पोर्तुगीजों ने अपनी जमींदारी दहेज समझकर कैथराइन को देना चाहा था जिसे अंग्रेजों ने स्वीकार न किया। अतः मालगुजारी पर ईस्ट इण्डिया कंपनी ने वह अन्तिम जमींदारी भी प्राप्त कर ली और उनके पास कुछ न बचा था। फिर भी अंग्रेजों को भारत में अपना राज्य फैलाते हुए देखकर योरप के ऐसे कितने ही अन्य देश थे जहाँ के लोगों के हृदय में भारत का राज्य पाने और करने की प्रबल इच्छा जगी हुई थी।

डच लोग उस समय..............................कसर नहीं की।

व्याख्या—ईस्ट इंडिया कंपनी के मुकाबले में पोर्तुगीज लोग न टिक पाये। डच और फ्रेंच कम्पनियाँ भी आयीं वे पोर्तुगीजों की तरह कमजोर न थीं प्रस्तुत गद्यांश का यही प्रसङ्ग है आगे लेखक ने डच कम्पनी के लोगों के सम्बन्ध में कुछ बातें कहीं हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

डच लोग उन दिनों समुद्र सम्बन्धी ज्ञान और जहाजी शक्तिमें सबसे श्रेष्ठ थे। जहाजी शक्ति में कोई भी उनके बराबर या मुकाबले की शक्ति न थी। किसी भी देश के लोगों में वैसी कुशलता न थी। यही कारण था कि डच लोगों ने हर प्रकार, प्रत्येक तरह से अंग्रेजों की ईस्ट इण्डिया कंपनी के लोगों के साथ मोर्चा लिया, उनका जमकर मुकाबला प्रारंभ किया। और तो और यदि डच लोगों को युद्ध करके या शक्ति द्वारा किसी प्रकार अपना कार्य सिद्ध होता दिखाई दिया तो युद्ध करने या शक्ति का प्रयोग करने से वे नहीं चूके। उसके द्वारा भी अपना काम उन्होंने बनाया।

अनुच्छेद ६-८

शब्दार्थ - सुशासन=अच्छा राज्य। सुप्रीम कोर्ट=प्रधान न्यायालय। स्थापना करना=नींव डालना। दत्तक = गोद सम्बन्धी। शरण लेना=सहायता लेना। मनुस्मृति=हिन्दुओं के धर्मशास्त्र का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ, जिसे मनु ने बनाया है। पद-पद पर=हर समय। दरकार=आवश्यक। विद्यारसिक= विद्या से प्रेम रखने और उसका स्वाद या आनन्द लेने वाले लोग। आँखें खोलना=सच्चा ज्ञान करा देना। जङ्गली=असभ्य, अशिक्षित। कदर=मान, इज्जत। तिरोहित=डूबना या नष्ट होना। पात्र=नाटक के अभिनेता आदि। चरित्र = स्वभाव, आचरण, कार्य। भाव प्रवणता=मन में उत्पन्न होने वाली प्रवृत्ति की उदारता। मुग्ध = मोहित। तत्तद्देशवासियों=उन-उन देशों के लोगों।

वारेन हेस्टिंग्ज ने कहा······ ············सीखना आरम्भ किया।

वारेन हेस्टिंग्ज ईस्ट इंडिया के सबसे पहले गवर्नर जनरल बने, जिनके सामने कम्पनी के अधिकार में रहकर भारत पर शासन करने और सँभालने की समस्या सामने आयी। शासन की समस्या को सुलझाने के सम्बन्ध में जो विचार उनके मन में उठा, इसको विद्वान लेखक ने इस पद्यांश में उसी का उल्लेख किया है। इसका प्रसंग उसी से सम्बन्धित है।

गवर्नर जनरल वारेन हेटिंग्ज ने अपने अनुभव और ज्ञान से यह विचार

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रखा कि भारत देश तथा वहाँ के निवासियों पर ही हमारा लाभ और स्वार्थ निर्भर करता है अतः अपना नुकसान किये बिना तथा स्वार्थ-सिद्धि को बचाते हुए हमें इस देश पर अच्छे ढंग से राज्य करना हम लोगों को एक तरह से आवश्यक हो जाता है किन्तु इसके लिए जरूरी है कि इस देश पर अच्छी तरह राज्य करने के लिए उसी के अनुसार अच्छी तरह राज्य करने का ज्ञान और कुशलता हमारे पास हो। इसके लिए उन्होंने यहाँ के निवासियों के सम्बन्ध में सब प्रकार के ज्ञान और जानकारी का परिचय पा लेना आवश्यक समझा। यहाँ के लोगों के इतिहास, धार्मिक और सामाजिक विचार, धर्मग्रन्थ तथा साहित्य-शास्त्र आदि से परिचित होना उनकी पहली आवश्यकता थी। इसी विचार से वारेन हेस्टिंग्ज जैसे योग्य गवर्नर जनरल ने अपने नीचे के छोटे-बड़े सभी अधिकारियों तथा शासन के पदों पर कार्य करने वाले लोगों को अपने विचार से परिचित कराया तथा उनके हृदय में भी वह विचार उत्पन्न किया ताकि वे लोग भी उसकी आवश्यकता का अनुभव करें। इसी विचार और आवश्यकताको पूरा करने के लिए विलियम जोन्स सबसे पहले व्यक्ति थे। जिन्होंने संस्कृत भाषा को सीखना प्रारम्भ किया ; क्योंकि उस समय इस देश की अधिकांश पुस्तकें और सब प्रकार की जानकारी इसी भाषा में पाई जाती थी। उस काल की विद्या की भाषा यही थी।

सर विलियम ने.............................सुभीता हो गया।

काफी परिश्रम और कठिनाई के बाद बंगाल की 'सुप्रीम कोर्ट' के जज सर विलियम ने संस्कृत भाषा का साधारण ज्ञान प्राप्त कर लिया। उन्होंने धर्म-शास्त्र को भी पढ़ा, किन्तु फिर भी उन्हें फैसले करने में कठिनाई होने के कारण यहाँ के विद्वानों की सहायता लेनी पडती थी। इस कारण सामाजिक विषयों से सम्बन्धित ग्रन्थ की जानकारी की आवश्यकता थी इसके लिए मनुस्मृति जैसे ग्रन्थ का अध्ययन आदि जरूरी था। इस गद्यांश का प्रसङ्ग उसी से सम्बन्धित है।

संस्कृत का ज्ञान प्राप्त कर- प्रसिद्ध जज श्री विलियम जोन्स ने हिन्दुओं के धर्मशास्त्र और नीतिशास्त्र के प्रसिद्ध ग्रन्थ मनुस्मृति को अंग्रेजी भाषा में लिख

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

डाला तथा उसे सन् १७६० में छपवा डाला। इस अनुवादको निकालने व लिखने से उन्हें अपने कार्य में बड़ी सहायता मिली। यहाँ के निवासियों के झगड़ों का फैसला करने के लिए जजों को जो उन दिनों केवल अंग्रेज होते थे हर समय यहाँ के धार्मिक रीति-रिवाजों तथा नियमों की जानकारी के लिए यहाँ के विद्वानों और उन बातों के जानकारों से सहायता लेनी पड़ती थी। अनुवाद के छप जाने पर बहुत कम मामलों में वैसी सहायता की जरूरत होती थी क्योंकि अनुवाद की उस पुस्तक ने उनकी जानकारी बढ़ा दी थी। इससे भारत के लोगों को भी एक सुविधा हुई कि वे अपने फैसलों का निर्णय अंग्रेज जजों से अपने धर्म शास्त्र के नियमों में जैसा कुछ था उसी के अनुसार आसानी से करा सकते थे।

इस नाटक ने योरप के........................बहुत अन्तर है।

प्रस्तुत गद्यांश आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की लेखनी से प्रसूत 'संस्कृत भाषा का महत्त्व' नामक पाठ से लियो गया है। संस्कृत नाटकों के बारे में सुनकर सर विलियम ने उन नाटकों का पता लगाया। उन्होंने वे नाटक पढ़े जिनमें शकुन्तला भी था। शकुन्तला नाटक उन्हें इतना अच्छा लगा कि उन्होंने उसका सस्कृत से अंग्रेजी में अनुवाद कर डाला। उस अनुवाद से शकुन्तला का जो प्रभाव योरप के लोगों पर पड़ा, उसका उल्लेख लेखक ने किया है। इन पंक्तियों का प्रसंग उसी से सम्बन्धित है।

शकुन्तला नाटक के अनुवाद से योरप के लोगों पर बड़ा प्रभाव पड़ा। भारत के लोगों तथा उनके साहित्य तथा ज्ञान की जानकारी उन्हें हुई। योरप के भिन्न-भिन्न देशों के लोगों तथा साहित्य को पढ़ने तथा उसका स्वाद लेने वालों को भारत का वास्तविक ज्ञान इस पुस्तक ने करा दिया। उस अनुवाद के छपने के पहले लोग भारत के रहने वालों को बिलकुल असभ्य और अशिक्षित समझते थे। उनका तब तक यही मत और विचार था कि भारत में ज्ञान की रचनाएँ लिखी ही नहीं गयीं। यदि साहित्य और उनकी रचनाएँ लिखी भी गयी हों तो वे मामूली हैं उनसे कोई लाभ नहीं हो सकता। उस काल तक योरप वालों के हृदय में भारत के निवासियों के प्रति अनादर, हीनता तथा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अत्यन्त उपेक्षा का भाव था। तुच्छ तो वे आज भी समझे जाते हैं, किन्तु शकुन्तला के अनुवाद के पहले तो वे सर्वथा तुच्छ समझे जाते और नफरत के पात्र थे। अब वे कुछ-कुछ सभ्य समझे जाने लगे और उनकी उपेक्षा और अनादर पहले की अपेक्षा कुछ कम अवश्य हो गया।

अनुच्छेद ६—११

शब्दार्थ—हैवान=पशु, जानवर। इन्सान=मनुष्य, आदमी। कायल=मानने या कबूल करने वाले। रचना कौशल=लिखने की कला। कथानक=कथा या कहानी। सादृश्य=समान, बराबर, जोड़ा। विक्रमोर्वशी—महाकवि कालिदास का एक अन्य प्रसिद्ध नाटक। अर्द्धसभ्य=सभ्यता में अधूरे। पूज्यतम=सबसे अधिक पूज्य या पूजा के योग्य। एकत्र=इकट्ठा। वास=रहना। पुरातत्त्ववेत्ता=प्राचीन काल की विद्या के जानने वाले। साम्य=एकता, समानता। संस्कृताध्ययन=संस्कृत पढ़ने। गौराङ्ग-पंडित=अंग्रेजी-विद्वान। तद्वत्=उसी तरह के। आतङ्क—भय। हवशी=असभ्य। प्रकाण्ड=महान, श्रेष्ठ। परिशीलन=मनन पूर्वक अध्ययन। एक स्वर से=एक राय से, सहमति से। कृपा=दया। रत्न=अमूल्य ग्रन्थ।

शकुन्तला वह चीज है.......................नहीं कर सकता।

प्रस्तुत गद्यांश पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी लिखित 'संस्कृत भाषा का महत्त्व' नामक पाठ से लिया गया है। ओजस्वी भाषा में विद्वान ने इस गद्यांश में यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि शकुन्तला तथा संस्कृत साहित्यका विदेशों में क्या प्रभाव हुआ, उससे भारतवासियों का कैसा हित हुआ अतः इन दोनों का बड़ा महत्त्व है।

लेखक का कथन है कि शकुन्तला कोई ऐसी-वैसी साधारण नाटक रचना नहीं। यह महान है। यह इतना महान नाटक है कि इसकी ही महानता और श्रेष्ठता के कारण विदेश में भारत के लोग जो जानवरों की तरह असभ्य समझे जाते थे वे मनुष्य माने जाने लगे क्योंकि ऐसा नाटक जानवरों जैसे असभ्य लोगों के देश में नहीं लिखा जा सकता। यह इस नाटक का वरदान और

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उपकार था। इस कारण भारत के रहने वाले हम लोग ऐसे नाटक के रचयिता पूज्य नाटककार महाकवि कालिदास के वास्तविक कर्जदार हैं। हमें सच्चे हृदय से उनके किये हुए इस उपकार के कार्य के प्रति आदर की श्रद्धाञ्जलि देकर कृतज्ञ होना चाहिए। इस नाटक से योरप के देशों के लोग जान गये कि नाटक लिखने की कला में तथा नाटक ग्रन्थों के ज्ञान-कोष में भारतवर्ष के लोग उनकी नाट्यकला तथा उनके नाटकोंके भण्डार का मुकाबला कर सकते हैं। हो सकता है उनके नाटकों से अधिक अच्छे नाटक-ग्रन्थ उनके यहाँ हो किन्तु उनके नाटक विदेशी नाटकों से बुरे भी नहीं। उन लोगों को यह भी मालूम हो गया कि संस्कृत भाषा का साहित्य तथा ज्ञान-सामग्री ग्रीक-भाषा के साहित्य और संचित ज्ञान-कोष से श्रेष्ठता के विचार से किसी-किसी अंग में अधिक अच्छी है। साहित्य की कुछ बातों का जैसा ज्ञान-भण्डार संस्कृत में है वैसा ग्रीक-साहित्य में भी नहीं। योरप के भिन्न-भिन्न लोगों के विचार से उस समय ग्रीस या यूनान देश की भाषा में सबसे अच्छा साहित्य था, जिसके प्रति उनके हृदय में आदर व श्रद्धा का भाव था। वे ग्रीक साहित्य की श्रेष्ठता को मानते थे, किन्तु लेखक के विचार से संस्कृत भाषा का पुराना साहित्य जैसा श्रेष्ठ व दिव्य था उसका मुकाबला किसी भी भाषा का साहित्य नहीं कर सकता।

फल यह हुआ कि·························पूर्व पुरुषों की भाषा थी।

सर विलियम के अलावा चार्ल्स विल्किन्स और हेनरी टामस कोलब्रुक जैसे अनेक अंग्रेज विद्वानों ने बड़े चाव से संस्कृत भाषा और साहित्य पढ़ने लगे। इस कारण संस्कृत के नये-नये अनुवाद छपने लगे। इससे जो परिणाम निकला उसका उल्लेख लेखक ने इस गद्यांश में किया है।

संस्कृत ग्रंथों के अनुवादों के लिखे जाने और छपने के कारण अंग्रेज विद्वानों ने संस्कृत भाषा के शब्दों की ओर भी ध्यान दिया। उन शब्दों का अध्ययन करने के पश्चात् उन्हें मालुम हुआ कि संस्कृत भाषा के अनेक शब्द योरप के अनेक देशों की प्राचीन भाषा ग्रीक आदि भाषा के शब्दों से मिलते-जुलते हैं। वहाँ की उन भाषाओं में ये शब्द ठीक उसी प्रकार या कुछ उलट-फेर और परिवर्त्तन के साथ पाये गये। इस कारण उन विद्वानों को बड़ा अचरज और

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विस्मय हुआ और वे एक प्रकार के भय की आशंका से भर गये। इसका कारण यह था कि उन्हें यह विचार बड़ा अजीब लगा कि उनकी भाषाओं के शब्द भारत की भाषा के शब्दों से मिलते-जुलते थे अतः उनमें साम्य था और उनकी भाषा के शब्द हिन्दुस्तान की प्राचीन भाषा के शब्दों से ही निकले और बने हुए जान पड़ते थे; क्योंकि उनके लिये यह विचित्र और कष्टदायक बात थी कि उनके शब्द उनके द्वारा असभ्य कहे जाने वाले लोगों की भाषा से निकले हों।

अन्तिम अनुच्छेद

स्वार्थ-साधन=अपनी भलाई। लाचार=मजबूर। अनमोल=मूल्यवान, कीमती। अलभ्य=दुर्लभ, जो पाए न जाएँ। प्रकाशित करना=छापना। रहस्य=मर्म या भेद की बात, वह बात जिसका मर्म या तत्त्व समझ में न आ सके। उद्घाटन=खोलना, प्रकट करना। प्रमाणपूर्ण=सबूत के साथ। देव-वाणी=देवताओं की वाणी या भाषा अर्थात् संस्कृत। आकृष्ट होना=खिंचना, लुभाना। पूर्ववत्=पहिले के समान। ऋणी=कर्जदार।

यदि योरप वाले..कृतज्ञ हैं।

प्रस्तुत गद्यांश आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी की लौह-लेखनी से प्रसूत 'संस्कृत भाषा का महत्त्व' नामक पाठ से लिया गया है। लेखक पहले बतला चुका है कि अंग्रेज-विद्वान संस्कृत भाषा को सीखकर उसके साहित्य को पढ़ने तथा अनुवादों द्वारा उसकी जानकारी प्राप्त करने में प्रयत्नशील हुए। अंग्रेज अधिकारियों ने यह कार्य स्वार्थ-साधन की दृष्टि से किया था; किन्तु संस्कृत साहित्य ने उनको साहित्य पढ़ने के लिए हृदय से मजबूर किया। उनके इस कार्य से हमारे देशवासियों, संस्कृत भाषा और साहित्य का लाभ हुआ। इसी प्रसंग के अन्तर्गत लेखक ने अंग्रेजों के इस उपकार के प्रति कृतज्ञता तथा संस्कृत भाषा और साहित्य का महत्त्व आगे की इन पक्तियों में प्रस्तुत किया है।

योरप के देशों के लोग यदि संस्कृत भाषा और साहित्य का अध्ययन कर उसका उचित आदर-सम्मान प्रकट न करते तथा संस्कृत-साहित्यको छपवाने और

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनुवाद प्रकाशित होने का काम उनके कारण न होता तो संस्कृत-साहित्य के अनगिनत ग्रंथ ज्यों के त्यों पड़े रहते और धीरे-धीरे वे ग्रन्थ दीमक और कीड़ों द्वारा नष्ट हो जाते। वे ग्रन्थ जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैंड आदि देशों के पुस्तकालयों में नहीं पाये जा सकते थे; क्योंकि उन मूल्यवान पुस्तकों को भारत में ही दीमक चाट जाते और उनकी रक्षा न हो सकती। संस्कृत के वे अमूल्य ग्रन्थ भारत में सर्वत्र उपेक्षित पड़े हुए थे उन्हें यहीं के सब लोग नहीं जानते थे यदि अंग्रेजों ने उन्हें न खोजा होता तो कौन उनकी तरह प्रतिवर्ष ऐसे ग्रंथों को खोज-खोज कर छपवाता। वे नहीं प्रकाशित हो सकते थे। योरप के विद्वानों ने वर्तमान-काल तक असख्य सुन्दर-सुन्दर मूल्यवान ग्रंथ छपवाये हैं। वेद से सम्बन्ध रखने वाली कितनी ही गुप्त और तत्व से भरी हुई बातों को प्रकट किया है। ऐसी कितनी ही पुस्तकें उन विद्वानों ने लिखी हैं जिसमें यह बतलाया गया है कि भारत के प्राचीन लोग तथा योरप के प्राचीन निवासी किसी समय अत्यन्त प्राचीन-काल में एक ही स्थान पर मिल-जुल कर रहते थे। उनकी बोली और भाषा एक ही थी। इस बात को उन पुस्तकों में सबूत के साथ सिद्ध और सत्य दिखलाया गया है। उनके इस उपकार के कारण हम लोग उनकी कृपा को श्रद्धा के साथ स्वीकृत करते हैं; क्योंकि उन लोगों ने हमारी भलाई की है।

यदि हमारी देववाणी··· ··········संस्कृति सीखें।

प्रस्तुत अवतरण 'सस्कृत भाषा का महत्व' नामक पाठ से लिया गया है इसके विद्वान लेखक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी हैं। ये पंक्तियाँ लेखक के सारे लेख का निचोड़ हैं और लेखक भारत वासियों को संस्कृत पढ़ने और साहित्य का स्वाद लेने के लिए आग्रह कर रहा है।

विद्वान लेखकने ठीक ही कहा है कि यदि देवताओंकी भाषा, हमारी संस्कृत भाषा के साहित्य का महत्त्व उसकी श्रेष्ठता योरप के सरस्वती के साधकों, सेवकों तथा विद्या-प्रेमियों को अपनी ओर न आकर्षित करती और उन्होंने उसका मननपूर्वक गम्भीर अध्ययन न किया होता तो हमारे प्रति श्रद्धा और आदर योरप के देशवासियों के हृदय में न होता। वे हमें असभ्य और अशिक्षित ही

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माने रहते और इस कारण हम लोगों पर वे पशुओं और असभ्यों की तरह कठोरता से शासन करते रहते और जो चाहते वह आदेश देकर कराते रहते। इसमें जरा भी सन्देह नहीं, किन्तु हम उन अंग्रेज अधिकारियों जिन्होंने संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त कर उसके प्रचार और प्रसार करने का कार्य किया अपनी संस्कृत भाषा तथा उस भाषा में शकुन्तला जैसा उत्तम ग्रन्थ लिखने वाले महाकवि कालिदास के अत्यन्त अनुगृहीत तथा उपकारों से दबे हुए हैं। सबसे अधिक कालिदास के कारण ही हमारी शिक्षा-संस्कृति तथा ज्ञान का परिचय योरप के देशवासियों को प्राप्त हुआ। अतः यह हमारा धार्मिक कर्तव्य हो जाता है कि हम उस महाकवि और श्रेष्ठ नाटककार के प्रति श्रद्धा और भक्ति प्रदर्शित करें। वास्तव में उसका प्रदर्शन इसी तरह हो सकता है जब हम लगन और आनन्द के साथ उस भाषा की पूरी-पूरी जानकारी प्राप्त करें जिस भाषा में उनका साहित्य लिखा गया है।

प्रश्न १—लेखक के जीवन और साहित्य-सेवा का उल्लेख कीजिए ?

उत्तर—कृपया लेखक का जीवन-परिचय तथा साहित्य-साधना देखें।

प्रश्न २—प्रस्तुत लेख किस शैली में लिखा गया है ? लेखक की भाषा के सम्बन्ध में अपने विचार स्पष्ट लीखिए ?

उत्तर—प्रस्तुत निबंध लेखक की परिचयात्मक शैली मेंलिखा गया है। शैली के सम्बन्ध में अन्य बातें परिचयात्मक शैली में पढ़ें। भाषा के सम्बन्ध में 'द्विवेदीजी की भाषा' देखें और अपना मत स्वयं लिखें।

भगवान् श्रीकृष्ण

लेखक—पं० पद्मसिंह शर्मा

(जन्म–संवत् १९३३ निधन–संवत् १९८३)

स्वर्गीय पं० पद्मसिंह शर्मा का जन्म बिजनौर जिले के नायक नगला नामक ग्राम में हुआ था। आप हिन्दी, उर्दू, फारसी तथा संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे। आपकी प्रतिभा प्रथमतः यद्यपि उर्दू ही की ओर थी, किन्तु बाद में आप

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हिन्दी की ओर मुड़े। हिन्दी क्षेत्र में आकर आपने हिन्दी की बड़ी सेवा की। प्रारम्भ में आपने 'सत्यवादी' 'परोपकारी' तथा 'अनाथ रक्षक' पत्रों का सम्पादन किया। तदुपरान्त आप ज्वालापुर के महाविद्यालय में हिन्दी और संस्कृत के प्रधान शिक्षक के पद पर नियुक्त हुए। अध्यापन के साथ ही साथ आप 'भारतोदय' का सम्पादन भी सुचारु रूप से करते रहे। आपने बिहारी सतसई की आलोचना की। आपकी इस कृति ने आपको 'मंगलाप्रसाद पारितोषिक' के पदक से भी विभूषित किया। अपनी कृतियों के ज्वलन्त विचार-सूत्रों ने आपको हिन्दी जगत् में अमर कर दिया।

कृतियाँ—'सतसई संहार'—बिहारी सतसई की आलोचना है। इसी प आपको मंगलाप्रसाद पुरस्कार मिला।

पद्मपराग—निबन्ध-संग्रह।

प्रबन्ध-मंजरी—निबन्ध संग्रह।

भाषा तथा शैली—पंडित जी की भाषा में हिन्दी, उर्दू और फारसी तीनों का समन्वय है। आपकी भाषा सजीव और प्रवाहमय है। हिन्दी, उ का सरल सामञ्जस्य पाठक के मस्तिष्क में दुरूहतर का बोध नहीं होने देता। आपकी भाषा में मधुरता के साथ-साथ स्निग्धता भी विद्यमान है। पंडितजी की शैली भी अपने ढंग की निराली ही है। स्थान-स्थान पर आपने इसमें हास्य का पुट दिया है। हास्य-पुटों के कारण आपकी शैली में एक प्रकार की रोचकता आ गयी है। प्रसंग के अनुरूप शर्माजी ने चुटकुलों का भी प्रयोग किया है। इनके ऐसे स्थल पढ़ने ही योग्य हैं। इसके अतिरिक्त जहाँ विचारान्वित विष है भाषा का स्वरूप भी प्रौढ़ हो गया है। सारांशतया पंडित जी की भाषा भावानुगामिनी और शैली मधुर, स्निग्ध तथा प्रवाहपूर्ण है।

पृष्ठ ५३-५४

शब्दार्थ—धराधाम=भूलोक। अवतीर्ण=अवतरित। चिरस्मरणीय=बहुत दिनों तक याद करने योग्य। परम पावन=अति पुनीत, अत्यन्त पवित्र। अलौकिक=दिव्य। गुणकीर्तन=गुण का गान। अधोगति=पतन की दशा। दुःख दावानल=दुख की आग। दावानल=वह अग्नि जो वन में लग जाती है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi.

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

घनश्याम=श्रीकृष्ण, काले बादल। निपीड़ित=त्रस्त, दुःखी। प्रजाद्रौपदी=प्रजारूपी द्रौपदी। कारागार=बन्दीगृह। मर्सिया=शोक-गीत। प्रभाती=प्रातः काल का गीत। विहाग=एक ऐसे राग का गीत जो आधी रात के समय गाया जाता है। आरूढ़=सवार। उद्धाररज्जु=उन्नति का अवलम्ब। रज्जु=रस्सी। महत्वशाली=गौरवपूर्ण। सर्वाङ्गपूर्ण=सब प्रकार से पूर्ण। योगिराज=योगी श्रेष्ठ। कर्म योगी==कर्म योग को जानने वाला। अपेक्षित=आवश्यक। प्रचुर=पर्याप्त। विद्यमान=उपस्थित। ध्यानी=ध्यान करने वाला। नीतिधुरंधर=महान् नीतिज्ञ। महिमा=गौरव। हृदयंगम=पूर्णरूप से ज्ञात करना। जार=परतियगामी, दूसरे की स्त्री के साथ रमण करनेवाला। शिखामणि=शिखा+मणि। चोर जार शिखामणि=चोर और पर-स्त्रीगामियों में सर्वप्रधान। पराकाष्ठा=चरमसीमा। खिन्न=उदास।

प्रसंग अर्थ

आज दुःख दावानल·····················गवा रही हैं।

प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक के 'भगवान श्रीकृष्ण' नामक पाठ से लिया गया है। इसके रचयिता स्व० पं० पद्मसिंह शर्मा हैं।

इन पंक्तियों में लेखक ने भारत की विकल तथा दुर्व्यवस्थित दशा का चित्र खींचा है। ब्रिटिश शासन से भारत की प्रजा त्रस्त है। भारतीयों को अपनी जाति और धर्म की भी सुरक्षा का कोई ऐसा अधिकार नहीं है जिसके बल पर वे अपना अस्तित्व बनाये रह सकें। एक समय था जब इसी भारत-भूमि पर कृष्ण की वंशी बजा करती थी। कृष्ण की अमृतोपम कलाओं से भारत की जनता को ही नहीं, कुञ्जों और निकुञ्जों में भी एक दिव्य और नव्य चेतना का आविर्भाव हुआ करता था। प्रत्येक प्राणी अपने कुलोपम धर्म के पालन में स्वेच्छाधिकारी था. परन्तु आज इसके नितान्त विपरीत है। भारतीय प्रजा ब्रिटिश शासन-सूत्र से निठुरतापूर्वक रौंदी जा रही है। जिस प्रकार दुष्ट दुःशासन सती द्रौपदी की मर्यादा का विनाश करने के लिए सचेष्ट हुआ, आज ब्रिटिश शासन भारत का शोषण कर रहा है, धर्म के स्थान पर चारों ओर घोर अधर्म और कुकर्म का प्रभाव है। हमारी (भारतीयों की) जाति-परम्परा पर भी विदेशियों की

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसी प्रकार दुर्दय नीति चल रही है। जैसे देवकी को कंस ने अपनी क्रूर नीति से पराभूत करके अपने बन्दीगृह में डाल दिया था। गौओं की भी अत्यन्त संकटमय अवस्था है और ऐसे घोर विपद्काल में भारतीय केवल भगवान् कृष्ण को याद करके आज भी जीवित हैं। उनकी आशा है कि हमारे दुःख-दग्ध हृदय की पुनः एक बार श्री कृष्ण की सुधा स्वरूप वाणी हरित करेगी। वह सोचता है कि जिस प्रकार कृष्ण ने द्रौपदी की रक्षा की, व्रज में गौओं का पालन किया, जेल में अपनी माता देवकी को बन्धन से मुक्त किया, एक न एक दिन अवश्य हमें और हमारी जाति-धर्म का भी कल्याण करेंगे। निदान लेखक अपने विचारों की झाँकी देता है कि हे भगवान्! अपने 'यदायदाहि' प्रण की याद करके एक बार पुनः हम भारतीयों की जाति, धर्म और संस्कृति की रक्षा कीजिये।

व्याख्या

इस प्रकार..............अलापना पड़ रहा है।

आज आर्य जाति अपनी प्राचीन संस्कृति और ऐश्वर्य की गुरुता का जागरण भी नहीं कर पा रही है। युग और धर्म-प्रवर्तकों ने हमारे पुण्य-पुरुषों की स्मृति के लिए पर्वों को निश्चित किया है, परन्तु आज की शासन-पद्धति में हम भारतीय स्वतन्त्रतापूर्वक बोल नहीं सकते, चल-फिर और भाषण तथा सभा इत्यादि नहीं कर सकते। इन कारणों में आज के दीन भारतीय अपने अ महापुरुषों का उनके पर्व दिनों पर भी यशोगान नहीं कर पाते। उनके नेत्रों प उनकी याद में केवल ढुलकी हुई बूँदें ही दीख पड़ती हैं। ओठों पर खिलकती हुई मुस्कान नहीं।

व्याख्या

उत्तम आदर्श......................दुर्दशा का कारण बन जाता।

उक्त अनुच्छेद हमारी पाठ्य-पुस्तक गद्यमंजरी के 'भगवान् श्रीकृष्ण' नामक पाठ से लिया गया है। इस पाठ के रचयिता स्वर्गीय पण्डित पद्मसिंह शर्मा हैं। शताब्दियाँ बीत गईं, एक बार इसी भारत-भूमि पर कृष्ण, राम, बु जैसे महात्माओं का जीता-जागता चरित्र विलस रहा था। राम ने भक्त भा तियों को दुद्धर्ष दानवों के पास से मुक्त किया। कृष्ण ने भारत को दुर्यो

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जैसे क्रूरकर्मी राजा की दुःशासन-व्यवस्था से रक्षा किया। आज यद्यपि भारतवासी परतंत्र हैं, पराधीन हैं, अपनी सुरक्षा के लिये कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं हैं, अपितु प्रतिवर्ष पर्वों के शुभ अवसर पर वे अपने उन पुराने महारथियों को याद कर लिया करते हैं। भले ही उनका हृदय सूख गया है, भारतीय अपने कृष्ण की याद उनके आदर्शों के रूप में करता है।

वस्तुतः यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो उत्तम और उच्च आदर्श ही मानव-जीवन में उत्कर्ष का आधार बनते हैं। आदर्शों का अनुकरण करके ही कोई भी व्यक्ति अपने जीवन में नव जागरण की प्रेरणा प्राप्त कर सकता है। आदर्श ही वह वस्तु है जो पतितों को पुनः अपने भाग की याद दिलाता है। हम देखते हैं कि भारतवासियों के लिए एक नहीं, दो नहीं, असंख्य आदर्श पड़े हैं, भरे पड़े हैं, जिनके प्रकाश में वे पुनः अपने भूले हुए पथ पर आ सकते हैं, परन्तु वैसा हम प्रयोग के रूप में नहीं पाते। सभी जानते हैं कि हनुमान् केवल ब्रह्मचर्य के आधार पर ही समुद्र लाँघ गये, कृष्ण ने सदाचार के आधार पर ही व्रजवासियों को मोह लिया, किन्तु कोई अपने जीवन को उस सदाचार और संयम की कसौटी पर कसता नहीं दीख पड़ता। वास्तव में हमारी जाति, हमारी संस्कृति और देश के पतन का यही एक मात्र सर्व प्रधान और सर्वाग्र कारण है। जब कोई व्यक्ति आदर्श को जान-बूझकर भुलवा देता है, उसके मानस में एक प्रकार की तुच्छ और गर्हित भावना का जन्म होता और शनैः-शनैः वह व्यक्ति अपने सम्पूर्ण जीवन को अधम और दुःखमय बना देता है।

हम 'आदर्श' का अनुकरण.................. ....न होते।

ये उपदेशात्मक पंक्तियाँ 'भगवान् कृष्ण' नामक पाठ से ली गयी हैं। इसके रचयिता स्व० पं० पद्मसिंह शर्मा हैं। इन पंक्तियों में विद्वान लेखक ने हमारे सहज स्वभाव का अच्छा चित्रण किया है। उसका कहना है कि हम किसी के आदर्श का अनुकरण नहीं करते और न करना चाहते हैं। कृष्ण योद्धा थे, ज्ञानी थे, महारथी थे। उन्हें कर्मयोग का अच्छा ज्ञान था। नेतृत्व करने की उनमें अद्वितीय क्षमता थी। जीवन के जिस क्षेत्र में भी उनकी परीक्षा लीजिए, वह खरे उतरे थे। उनका चरित्र अतुलनीय है। संस्कृत साहित्य उनकी महिमा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

से भरा है। इतना होने पर भी हम श्रीकृष्णजी के बहुमूल्य जीवन के तत्वों का अनुकरण नहीं करते हैं। आदर्श का अनुकरण न करने का तो हमारा स्वभाव ही हो गया। हम सदा यह देखते हैं कि हमारा जीवन जैसा है वह आदर्श से कितना मेल खाता है। यदि हम चोर हैं तो हम यह देखने की कोशिश करते हैं कि हमारे किस-किस नेता में चोरी करने की प्रवृत्ति है। यदि हम नशा खाते हैं तो हम यह खोज करते हैं कि हमारे कौन-से देवता नशा खाते थे। हम लोगों की अच्छाई नहीं देखते, हम यह नहीं देखते कि उनके जीवन का क्या महान् आदर्श था। उनमें कौन-कौन-सी अच्छाइयाँ थीं। हम उनके आदर्शों की नकल करने की चेष्टा नहीं करते, किन्तु उन्हें अपने चरित्र की ओर खींचना चाहते हैं। हमारे पतन का यही मुख्य कारण है। यदि आज हम श्रीकृष्ण के महान् आदर्शों का अनुकरण करते तो हमारी ऐसी दीन-हीन दशा न होती, हमारा ऐसा पतन न होता।

पृष्ठ ५५, ५६

शब्दार्थ—अवनति=पतन। अवनत=नीचा। वंचक=धूर्त, ठग। शठ=दुष्ट। पापाचरण=पाप का आचरण करना। भगवत्चरित्र=ईश्वर का चरित्र। द्वेषी=ईर्ष्यालु। प्रतिवाद=विरोध। मथन करना=मथ डालना अर्थात् परिश्रम से किसी बात की खोज करना। अमूलक=बिना जड़ की, निराधार। मनगढ़न्त=अपने मन से गढ़ी हुई अर्थात् झूट। अतिशय=अत्यन्त। सर्वगुण-सम्पन्न=सभी गुणों से युक्त। मनन=अध्ययन। सम्मति=राय। सार्वभौम नेता=सारे संसार का नेता। नितान्त=अनन्त। प्रलोभन=लालच। व्रत=प्रतिज्ञा। विचलित=अस्थिर। निष्फल=बेकार। अवश्यंभावी=अवश्य होनेवाले। दुष्परिणाम=बुरे फल। स्वार्थान्ध=स्वार्थ में अन्धे। जान से हाथ धोना=प्राण खोना।

भावार्थ

मनुष्य जीवन की..............प्रतीत होंगे।

यह गद्यांश 'श्रीकृष्ण' नामक पाठ से लिया गया है। इसके रचयिता पं॰

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पद्मसिंह शर्मा हैं। इन पंक्तियों में शर्माजी ने आदर्श चरित्र पर विशेष प्रकाश डाला है।

आपका कहना है कि मनुष्य को अपना जीवन सफल बनाने के लिए जिस महान् आदर्श की आवश्यकता है। वह महान् आदर्श श्रीकृष्ण के चरित्र में सन्निहित है। श्रीकृष्ण के चरित्र में यह शक्ति है कि वह हमारे पतित जीवन को पुनीत तथा पवित्र बना सकता है। आपका चरित्र हमें जीवन-पथ पर सफल यात्रा करने के लिए निरन्तर प्रेरित करता है। श्रीकृष्ण के चरित्र में अत्यन्त महान् गुण प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं। श्रीकृष्णजी ज्ञानी हैं, योगी हैं, ध्यान लगानेवाले हैं, लोक-कल्याण के लिए कार्य करनेवाले हैं कर्मयोगी हैं। इतना ही नहीं, वह अच्छे योद्धा भी हैं। दीनों पर दया करना, धैर्य, क्षमा आदि महान् गुण श्रीकृष्ण में थे। ये ही गुण मानव-जीवन को सफल बनाते हैं। ये गुण भगवान् कृष्ण में कूट-कूटकर भरे हुए थे। बचपन से ही ये महान् गुण श्रीकृष्ण में थे। जब ये बच्चे थे तभी उन्होंने शकटासुर, बकासुर आदि राक्षसों का नाश किया था। कौरव-पाण्डव के युद्ध में उन्होंने जिस सहनशीलता और धर्म का परिचय दिया, वह अद्वितीय है। रणक्षेत्र में अर्जुन मोह के वशीभूत हो गया। उसने युद्ध करना अस्वीकार कर दिया है। श्रीकृष्ण ने अर्जुन के मोह-निवारण के लिए गीता का उपदेश दिया। ये उपदेश कर्मयोग और ज्ञान-योग के महान् उपदेश हैं। इन्हें देखने से कृष्ण के महान् ज्ञान का अनुभव होता है। उन्होंने कंस ऐसे अत्याचारी का वध किया। यह उनके सत्य की असत्य पर महान् विजय थी। युद्ध-क्षेत्र में भी उन्होंने पाण्डवों की सेना का सफल नायकत्व किया। कौरवों की सेना अधिक थी, पाण्डव थोड़े थे, फिर भी जिस विलक्षण प्रतिभा से कृष्ण ने पाण्डवों की सेना का नायकत्व किया, वह अतुलनीय है। श्रीकृष्णजी के जीवन के इन महान् कार्यों के देखने से यह साफ पता चल जाता है कि श्रीकृष्ण महान् नेता, विजेता, सफल अभिनेता और राजनीति की नौका के सफल नाविक थे, वे कर्मयोगी और ज्ञानी थे। श्रीकृष्ण के चरित्र पर यदि जीवन के विभिन्न दृष्टिकोणों से दृष्टिपात किया जाय तो भी उनका चरित्र प्रत्येक दृष्टिकोण से कसौटी पर एक बार खरे उतरेंगे।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पृष्ठ ५७, ५८

शब्दार्थ—कपट-कुशल=छल करने में निपुण। दहकती आग में कूदना=जान-बूझकर प्राण देना। सहसा=अचानक। सहमत=राजी। कुटिलता=दुष्टता। आपदजनक=आपत्ति उत्पन्न करने वाली। कर्त्तव्यानुरोध=कर्त्तव्य करने के लिए अनुरोध। जान पर खेलकर=प्राण संकट में डालकर। साम, दाम, दण्ड, भेद द्वारा=सभी उपायों से। काबू=वश। बलबूते=शक्ति-सामर्थ्य। सन्नद्ध=तैयार। निदान=आखिरकार। प्राणपण=जी जान से। अच्युत=जो कभी न चूके। दुरभिसंधि=बुरे अभिप्राय से कई लोगों की मिलकर की हुई सलाह। दूरदर्शी=दूर तक सोचनेवाले, भविष्य की बात सोचनेवाले। ताड़ गये=समझ गये। निर्भयतापूर्वक=पूर्ण निडर हो। औचित्य=उचित की भाववाचक संज्ञा, यथार्थता। प्रत्याख्यान=प्रत्युत्तर, या यहाँ पर अपमान-जनक उत्तर। अलौकिक=दैविक। लोकसंग्रह का तत्त्व=वे बातें जिनपर संसार का कल्याण आश्रित है। अनभिज्ञ=अनाड़ी। सर्वप्रियता=सभी के प्रिय पात्र। समदर्शिता=सबको समान समझने की भावना। कर्त्तव्यपराङ्मुख=कर्तव्य से हट जानेवाला, कर्त्तव्य से विमुख हो जानेवाला।

भावार्थ

लोक-संग्रह के तथ्य············परिचय नहीं दिया।

यह गद्यांश 'श्रीकृष्ण' नामक पाठ से अवतरित है। इसके लेखक श्रेष्ठ आलोचक श्रीपद्मसिंह शर्मा हैं।

भगवान् श्रीकृष्ण का चरित्र एक आदर्श चरित्र था। अपनी महानता के ही कारण भगवान् श्रीकृष्ण आज तक पूज्य हैं। उनका चरित्र वीरता-धीरता, शान्ति, क्षमा का प्रतीक है। वे अपनी उदारता के लिये आजतक प्रसिद्ध हैं। पाण्डव और कौरव में शत्रुता थी। मित्रता करने के लिए श्रीकृष्ण ने अनेक प्रयत्न किये। युद्ध होना निश्चित था, फिर भी श्रीकृष्ण शान्ति के पक्ष में थे। वे शान्ति चाहते थे। उन्होंने अनेक प्रयत्न शान्ति-स्थापित होने के लिए किये। वे स्वयं शान्ति का प्रस्ताव लेकर दुर्योधन के यहाँ जाने के लिए तैयार हुए। दुर्योधन ऐसे नीच, कपटी, छली के यहाँ जाना प्राणों को संकट में डालना

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

था। जानबूझकर आग में कूदने के पक्ष में उस समय कोई न था। सभी लोगों ने कृष्ण को दुर्योधन के यहाँ जाने से रोका, पर उन्होंने नहीं माना। वे कर्त्तव्यपरायण थे। अपने कर्त्तव्य से प्रेरित होकर ही उन्होंने जाना निश्चित किया।

जब दुर्योधन को यह मालूम हुआ कि श्रीकृष्ण शान्ति के लिए आ रहे हैं। वे सन्धि का प्रस्ताव करेंगे, तब उसने श्रीकृष्ण को मिलाने की अनेक तरकीबें सोचीं। उसने श्रीकृष्ण को मिलाने के लिए साम, दाम, दण्ड, भेद सभी से काम लिया। वह मानता था कि श्रीकृष्ण के ऊपर ही पाण्डव कूदते हैं। पांडव की सारी शक्ति श्रीकृष्ण की शक्ति थी। पांडवों को नीचा दिखाने के लिए यह आवश्यक था कि श्रीकृष्ण को मिला लिया जाय। उसने श्रीकृष्ण को मिलाने के लिए अनेक चेष्टाएँ कीं, अनेक जाल रचे, पर श्रीकृष्ण फँसनेवाले न थे। जब श्रीकृष्ण आनेवाले थे तब उसने अपने राजमार्ग को अच्छी तरह सजाया। स्वागत की बड़ी तैयारी की। राज भर में धूम-धाम मचा दी। उसने अपनी माया में मायापति श्रीकृष्ण को फँसाना चाहा, किन्तु श्रीकृष्ण फँसे नहीं। उन्होंने अपना कर्त्तव्य पालन किया। दुर्योधन की राजसभा में सन्धि का प्रस्ताव रखा, पर प्रस्ताव स्वीकार न हुआ। इतना होने पर भी श्रीकृष्णजी अपने कर्त्तव्य-पथ से विचलित न हुए। वे बार-बार प्रयत्न करते ही रहे। जब दुर्योधन ने देखा कि साम, दाम ही से काम नहीं चलता तब उसने दण्ड देने की नीति भी बरती और उन्हें पकड़ना चाहा। उसने श्रीकृष्णको भोजन का निमन्त्रण दिया, उसने उन्हें अपने घर पर बुलाया। महाप्राज्ञ विदुर दूरदर्शी थे। उन्होंने दुर्योधन की चाल समझ ली। भगवान् श्रीकृष्णको उन्होंने जाने से रोका और उन्हें समझाया। भगवान् श्रीकृष्ण तो सब जानते ही थे, वे अन्तर्यामी थे, फिर भी उन्होंने एक बार फिर दुर्योधन के राज-दरबार में जाना उचित समझा। उन्होंने शान्ति के लिए एक बार फिर प्रयत्न किया, सन्धि-प्रस्ताव किया, किन्तु प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ, सब प्रयत्न निष्फल गया। जब भगवान् श्रीकृष्ण दुर्योधन के यहाँ से लौटने लगे तब दुर्योधन ने उन्हें पकड़ना चाहा, बन्दी बनाना चाहा, किन्तु श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व की महान् प्रभा के कारण दुर्योधन उन्हें पकड़ न सका। भगवान्

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीकृष्ण पक्षपाती नहीं थे। वह पांडवों और कौरवों दोनों को प्रसन्न करना चाहते थे। दोनों भगवान के सम्बन्धी थे। युद्ध में श्रीकृष्ण ने कौरव और पांडव दोनों को सहायता दी। कौरवों की ओर उनकी सारी सेना थी। पांडवों की ओर केवल निःशस्त्र श्रीकृष्ण थे। दुर्योधन के महान् राजसी स्वागत से श्रीकृष्ण को अपनी ओर मिला न सके। वे समदर्शी थे। वे सभी को समान समझते थे। कभी उन्होंने दोषी को निर्दोश नहीं माना। उनके विचार से जो दोषी थे, उन्हें उचित दण्ड दिया; जो निर्दोष थे उनकी रक्षा की। दोषी को निर्दोष और निर्दोष को दोषी बनाकर उन्होंने कभी नहीं छोड़ा। वे कभी किसी की माया में नहीं फँसे। उन्होंने अन्याय का घोर विरोध किया। न्याय की ओर सर्वथा थे। सदा उन्होंने न्याय की रक्षा की। वे अपनी बात के पक्के थे। उन्होंने कभी न्याय को अन्याय और अन्याय को न्याय नहीं कहा। उनका चरित्र महान् था। उन्होंने धर्म को अधर्म और अधर्म को धर्म कभी भी किसी प्रलोभन में नहीं कहा। जो सत्य था उसे वे सत्य कहते थे, जो असत्य था उसका वे विरोध करते थे।

अभ्यास के प्रश्नोत्तर

प्रश्न १—भगवान् श्रीकृष्ण किन कारणों से संसार भर के आदर्शों में सर्वाङ्गपूर्ण आदर्श हैं?

उत्तर—भगवान् श्रीकृष्ण ने भारत में अवतार लिया था। भारत सदा से ही अवतारियों की जन्मभूमि रहा है। अपने महान् चरित्र के कारण उन्होंने भारत को भी महान् बनाया है। अपनी महानता के लिये भारत सदा से ही संसार के सम्मुख आदर्श बना हुआ है। श्रीकृष्ण का भी चरित्र एक आदर्श चरित्र है। उनके व्यक्तित्व में कुछ ऐसी विचित्रता थी कि उनका चरित्र संसार के लिये आदर्श बना। उनके व्यक्तित्व की महानता एक-देशीय सीमा में सीमित कर नहीं रह सकती थी। उनमें ऐसे गुण थे जिससे उनका चरित्र सर्वमान्य बना। सर्वव्यापी गुणों के कारण ही भगवान् श्रीकृष्ण का चरित्र संसार के आदर्शों में सर्वाङ्गपूर्ण आदर्श है। यह बात ठीक है कि वह एक विशेष देश

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

में पैदा हुए थे, उनका पालन-पोषण किसी भूमि की निश्चित सीमा के भीतर हुआ था, किन्तु अपने अलौकिक, अद्वितीय गुणों के कारण वे सर्वमान्य हुये। उनकी देश-विदेश में पूजा हुई। उनका चरित्र, ज्ञान, क्षमा, दया, धर्म, नीति, न्याय आदि का प्रतीक है। ये सब गुण उनके व्यक्तित्व में सन्निहित हैं। वे हिन्दू धर्मके सच्चे पुजारी थे, किन्तु उन्होंने धर्म के किसी ऐसे नियम का पालन नहीं किया जिसे मानवीय दृष्टि से बुरा कहा जा सके। उनकी नीति की, उनके ज्ञान की तथा विवेक की विदेशियों ने भी प्रशंसा की है। उनके चरित्रमें ही ऐसे महान् गुण थे, जिससे उनका चरित्र संसार भर के आदर्शों में महान्, सर्वाङ्ग-पूर्ण आदर्श हो सका। अब हम उनके इन महान् गुणों पर विचार करेंगे।

१ ज्ञान—भगवान् श्रीकृष्ण महान् ज्ञानी थे। उन्हें कर्मयोग तथा ज्ञानयोग का अच्छा ज्ञान था। युद्ध-स्थल में अर्जुन को मोह हो गया। अर्जुन ने युद्ध करना अस्वीकार कर दिया। अर्जुन के मोह को दूर करने के लिये भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता का उपदेश दिया। गीता कर्मयोग की महान् पुस्तक है। उसकी महानता अब तक विदेशों में भी स्वीकार की जाती है। इस पुस्तक से ही श्रीकृष्ण के ज्ञान का अनुमान लगाया जा सकता है। संसार की अनेक भाषाओं में इस पुस्तक का अनुवाद हो चुका है। लाखों पुस्तकें विभिन्न भाषाओं में गीता की दार्शनिक व्याख्या में लिखी जा सकी हैं। श्रीकृष्ण के समान आज तक कर्मयोग का ज्ञानी नहीं हुआ, कुछ लोगों का ऐसा अनुमान है।

२ शान्तिप्रिय – भगवान् श्रीकृष्ण बड़े शान्तिप्रिय थे। उन्होंने जीवन में सदा शान्ति का पक्ष लिया। श्रीकृष्ण सदा युद्ध से घृणा तथा शांति से प्रेम करते थे। दुर्योधन अन्यायी था। वह कुटिल तथा धूर्त था। वह शांति का विरोधी था। भगवान् श्रीकृष्ण ने उससे भी शांति के लिये अनुरोध किया। दुर्योधन को बहुत समझाया, किन्तु वह जरा भी न माना। इससे भी श्रीकृष्ण ने अपना प्रयत्न न छोड़ा, वह बार-बार प्रयत्न करते ही रहे।

३ धीरता – भगवान् श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व का एक महान् गुण था, उनकी धीरता। श्रीकृष्ण धर्म के अवतार थे। बड़ी-बड़ी विपत्ति में भी श्रीकृष्ण अपना धैर्य नहीं छोड़ते थे। शांति के लिये उन्होंने दुर्योधन को बार-बार समझाया,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

किन्तु दुर्योधन पर उनके समझाने का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। भगवान् श्रीकृष्ण ने इस पर भी धीरज नहीं खोया, वह बार-बार शांति के लिये प्रयत्न करते रहे। एक बार दुर्योधन ने श्रीकृष्ण को भोजन का निमंत्रण दिया। ऐसा करना दुर्योधन की एक चाल थी। वह श्रीकृष्ण को बन्दी बनाना चाहता था। महाभक्त विदुर इस बात को समझ गये। उन्होंने उन्हें जाने से रोका, पर श्रीकृष्ण तो स्वयं ज्ञानी थे। उन्होंने सारी बात समझकर भी जाना स्थगित न किया। वे निमंत्रण को कभी अस्वीकार नहीं कर सकते थे। निमंत्रण अस्वीकार करना उनके सिद्धांत के विरुद्ध था। वे गये, और अपने धैर्य का परिचय दिया। अभिमन्यु की हत्या हो गयी थी। युद्ध-स्थल में छल से अभिमन्यु मारा गया था। पाण्डव अधीर थे। यह श्रीकृष्ण ही थे जिन्होंने पाण्डवों को धीरज दिलाया। इन्हीं के धैर्य के परिणामस्वरूप युद्ध में पाण्डवों की विजय हुई। आपका धैर्य विश्व में अब तक बेजोड़ है।

४ निष्पक्षता—भगवान् श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व का एक विशेष गुण यह भी था कि वे सदा निष्पक्ष रहे। उन्होंने कभी किसी का पक्ष नहीं लिया। कौरव भी आपके सम्बन्धी थे, पाण्डव भी आपके सम्बन्धी थे। भगवान् ने दोनों को सहायता दी। दुर्योधन ने सहायता के लिए जो माँगा, भगवान् ने वही दुर्योधन को दिया। कौरव को मुँह माँगी सहायता देकर भगवान् श्रीकृष्ण ने अपनी निष्पक्षता प्रदर्शित की।। यह बात ठीक थी कि कौरव का पक्ष अधर्म का, अन्याय और अत्याचार का पक्ष था, फिर भी भगवान् ने कौरवों को सहायता दी, जिससे उन्हें कोई पक्षपाती न कह सके। उनके व्यक्तित्व का यह गुण भी संसार में अपनी समता नहीं रखता।

५ प्रतिज्ञा—भगवान् श्रीकृष्ण बड़े दृढ़-प्रतिज्ञ थे। उन्होंने जीवन में जिस बात की प्रतिज्ञा की, उस पर वे सदा अडिग रहे। उन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि युद्ध में मैं जिस ओर रहूँगा उस ओर अस्त्र न उठाऊँगा। उन्होने ऐसा ही किया। कभी अस्त्र नहीं उठाया। केवल इतना ही नहीं था उन्होंने अपने पुरुषार्थ से पाण्डवों की अनेक प्रतिज्ञाएँ सफल करायीं। अभिमन्यु के मरने पर अर्जुन ने सन्ध्या तक जयद्रथ को मारने की प्रतिज्ञा की थी। युद्ध सन्ध्या तक चलता

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रहा। जयद्रथ मारा न जा सका। प्रतिज्ञा के अनुसार अर्जुन चिता पर भस्म होनेवाला ही था, किन्तु श्रीकृष्ण ने अपने पुरुषार्थ से ही सूर्य का उदय कराकर अर्जुन की प्रतिज्ञा पूर्ण की। भगवान् श्रीकृष्ण की प्रतिज्ञा थी, धर्म की स्थापना करना, अधर्म का नाश करना, न्याय, ज्ञान और विवेक को धरती पर सदा के लिए अमर करना, श्रीकृष्ण ने ऐसा ही किया।

६ धर्म—श्रीकृष्ण धार्मिक पुरुष थे। उन्होंने जीवन में सदा अधर्म का विरोध किया। उनका धर्म ऐसा नहीं था, जिसमें अंधविश्वास हो जिसमें पुरानी, व्यर्थ की रूढ़ियों पर अधिक जोर दिया गया हो। उनका धर्म सर्वमान्य था, उसमें कर्मयोग की प्रधानता थी। उन्होंने ज्ञान को मोक्ष का साधन बताया है। ज्ञान की भी उतनी ही महानता आपने स्वीकार की है जितनी कर्म की। यह पहले भारतीय दार्शनिक थे जिन्होंने कर्मयोग की प्रधानता पर विचार किया। इनके कर्मयोग को आज तक देश-विदेश के सभी धार्मिक नेता तथा दार्शनिक विचारक बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। आज भी वे ज्ञान के लिए कर्म की आवश्यकता समझते हैं। आज भी देश-विदेश, सभी जगह श्रीकृष्ण महान् धार्मिक उपदेशक माने जाते हैं। श्रीकृष्ण के विचार से भक्तियोग भी उतना उपयोगी नहीं है जितना कर्मयोग। भक्ति से भगवान् का आशीर्वाद भी नहीं मिल सकता, यदि उसमें कर्म का उपयोग न किया जाय। आपके कर्मयोग का सम्मान आज भी संसार में है। आज भी भगवान् श्रीकृष्णजी संसार के महान् दार्शनिक तथा धार्मिक नेता माने जाते हैं।

७ राजनीति—भगवान् श्रीकृष्ण महान् राजनीतिज्ञ थे। बचपन से वे बड़े चालाक थे। उनकी चालाकी सत्यता पर आधारित थी। जब वे बच्चे थे तभी से उन्हें मक्खन और दही खाने का शौक था। वे बहुधा चुरा कर भी खाते थे। खाते तो खाते थे, दही और मक्खन गिराकर नुकसान भी करते थे। ऐसा इसलिए करते थे कि जो मक्खन कंस और उनके सहयोगी खायेंगे उन्हें गिरा देना ही वह अच्छा समझते थे। मक्खन के न मिलने से कंस और उसके साथी कमजोर हो जायेंगे। इसी से वे मक्खन गिरा देते थे। उनकी राजनीतिक चालों से सारा महाभारात भरा पड़ा है। वह उनके ही ऐसा था कि अपनी राजनीतिक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चालों से पाण्डवों की विजय करायी। पाण्डवों की संख्या थोड़ी थी, फिर भी वे युद्ध में विजयी हुए।

८ युद्ध-कौशल—भगवान् श्रीकृष्णजी युद्ध-कला में भी बड़े निपुण थे। आप कुशल सारथी थे। महाभारत के युद्ध में आपने अर्जुन का रथ हाँका था। जिस कुशलता के साथ आपने रथ हाँका था, उसका जीता-जागता वर्णन महाभारत में है। आप ने ही चक्रव्यूह तोड़ने की क्रिया अर्जुन को बताई थी।

९ कला-निपुण—भगवान् श्रीकृष्ण बड़े कला-निपुण थे। आप अच्छी वंशी बजाना जानते थे। आपके जितने चित्र मिलते हैं, उन सब में आप के हाथ में वंशी रहती है। आपको वंशी पर अनेक लोग मुग्ध हो जाते थे। आपकी वंशी की महिमा से हिन्दी और संस्कृत साहित्य भरे पड़े हैं। आप नाचने की कला में भी निपुण थे। आपकी नृत्य-कला का वर्णन हमारे साहित्य में है। कला की दृष्टि से भी आप एक उत्कृष्ट कलाकार थे।

भगवान् श्रीकृष्ण का चरित्र ही बड़ा विचित्र है। वह वीर हैं, रणधीर हैं, शान्तिप्रिय भी हैं। उनमें नेतृत्व करने की शक्ति भी है। जहाँ वे सफल राजनीतिक, दार्शनिक तथा ज्ञानी हैं, वहीं आप गायक, नृत्य तथा वंशी बजानेवाले भी हैं। एक व्यक्ति में इतनी कलाओं का होना, साधारण बात नहीं है। इसी से भगवान् श्रीकृष्ण का चरित्र संसार के आदर्शों में सर्वाङ्गपूर्ण आदर्श है।

प्रश्न—२—श्रीकृष्ण सोलह कलापूर्ण अवतार हैं। इसे भली भाँति समझाइये।

उत्तर—इस प्रश्न का उत्तर भी पहले प्रश्न के उत्तर में दिया जा चुका। जरा आप पहला प्रश्न भी पढ़ने का कष्ट कीजिये।

भगवान् श्रीकृष्ण का चरित्र महान् था। उनके चरित्र में अनेक विशेषताएँ थीं। कहा जाता है कि विष्णु भगवान ने अपनी सोलह कला के साथ श्रीकृष्ण के रूप में स्वयं अवतार लिया था। भगवान् श्रीकृष्ण में सोलह कलाएँ थीं। उन्हें ईश्वर का अवतार न कहकर यदि कलाओं का अवतार कहा जाय तो कदाचित् भूल न होगी। सारी कलाएँ उनमें मूर्तिमान होकर आ गयी थीं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दया, क्षमा, ज्ञान, चालाकी, वाक्पटुता, नीतिज्ञता, वीरता, धीरता, रण-कौशल आदि उनमें गुण थे ही, साथ ही साथ उनमें ललित-कलायें भी थीं। ये नाचना अच्छी तरह जानते थे। उनके नाचने की मुद्राएँ उत्कृष्ट थीं। वे वंशी बजाना भी जानते थे। उनकी वंशी सुनकर सारा ग्राम मुग्ध हो जाता था। लोग वंशी सुनने में इतने मस्त हो जाते थे कि अपना काम-काज भी भूल जाते थे। इनके वंशी की कला के वर्णन से साहित्य भरा है। वास्तव में जितनी भी कला हो सकती, सभी भगवान् श्रीकृष्ण में थी। वे अच्छे वक्ता, विचारक, उपदेशक भी थे।

प्रश्न ३—श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में बंकिमचन्द्र चटर्जी की क्या धारणा है?

आज से कई हजार पहले भगवान् श्रीकृष्ण इस धराधाम पर आये थे। अलौकिक शक्ति से सम्पन्न थे। वे इस धरती पर पाप नष्ट करने आये थे। धर्म संस्थापनार्थ उनका अवतार हुआ था। उन्होंने अधर्म को मिटाकर धर्म को और अत्याचार को मिटाकर सदाचार की स्थापना की। उन्होंने कौरवों का नाश किया। कौरवों का पक्ष अधर्म का पक्ष था। कौरवों का नाश करना अधर्म का नाश करना था। भगवान् श्रीकृष्ण ने ऐसा ही किया। भगवान् श्रीकृष्ण का व्यक्तित्व महान् पुनीत तथा पवित्र था, किन्तु हम लोग उन्हें महान् पुनीत तथा पवित्र न समझ कर वंचक और शठ समझने लगे हैं। हमारी इसी धारणा के सम्बन्ध में श्रेष्ठ साहित्यकार और विचारक श्री बंकिमचन्द्रजी ने विचार किया है। आप का कहना है कि आजकल लोग भगवान् श्रीकृष्ण को यही समझते हैं कि वे बचपन में चोर थे, दूध, दही, मक्खन चुराकर खाया करते थे। उनका बचपन चालाकी और चालबाजी से भरा था। युवा अवस्था में वे दुराचारी थे। उनका आचार अच्छा न था। वे परस्त्रियोंसे प्रेम करते थे। प्रौढ़ावस्था में वे धूर्त थे, वंचक और शठ थे। अपना काम साधनेके लिए वे धोखा देते थे। कर्ण, द्रोणाचार्य, जयद्रथ आदिके प्राण उन्होंने धोखा देकर लिए। आजकल हम श्रीकृष्णको इसी दृष्टिसे देखते हैं। एक शंका उत्पन्न हो जाती है। जो महान् व्यक्ति था, जिसका आदर्श आज तक संसार के आदर्शों में सर्वाङ्गपूर्ण आदर्श है, क्या ऐसा ही पापी था? क्या

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ऐसे ही पापाचरण करनेवाले का चरित्र उत्कृष्ट मानव का चरित्र कहा जा सक है ? श्रीकृष्ण का नाम लेने से तो हमारे पाप दूर होते हैं। श्रीकृष्ण के चरि में पवित्रता है। इसी पवित्रता के बल पर हमारा चरित्र भी पवित्र हो जाता है फिर कृष्ण का दुराचारी होना कुछ ठीक नहीं लगता है। जयदेव के गीत-गोवि के आधार पर हम उन्हें दुराचारी कहते हैं। जयदेव का गीत-गोविन्द वास की अतृप्त भावना से भरा है। इन गीतों में यथार्थ का अभाव है, केवल कल्प की ही प्रधानता है। इन गीतों के आधार पर श्रीकृष्ण को दुराचारी, वंचक शठ कहना ठीक नहीं है। जब से हमारे भारतवासी जयदेव के श्रीकृष्ण याद करने लगे और महाभारत के कृष्ण को भूल गये, तब से उनका पतन हो लगा, भारत की अवनति होने लगी। आज भी सनातनधर्म का विरोध करने वाले कहते हैं, हमारी इसी दूषित कल्पना के ही कारण हमारा पतन हुआ। ज से हम भगवान् श्रीकृष्ण को पापी, वंचक और धूर्त समझने लगे, तब से भारत में पाप का स्रोत बड़े वेग से बहने लगा। सनातनधर्म के विरोधियों इस विचार का आजतक सफल खण्डन करनेवाला नहीं दिखायी दिया। श्री बंकि मचन्द्रजी स्वयं कहते हैं कि मैं श्रीकृष्ण को भगवान समझता हूँ और उन विश्वास करता हूँ। मैंने स्वयं इतिहास में वास्तविक श्रीकृष्ण की खोज की है पता लगा है कि इतिहास में वास्तव में श्रीकृष्ण का जैसा वर्णन है, मैं इ निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि भगवान् श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में जो कथाएँ प्रचलित हैं वे निर्मूल हैं। जो वासनामय भगवान् श्रीकृष्ण का चित्र जयदेव के साहित्य है, वह काल्पनिक है। उपन्यासकारों ने भी श्रीकृष्ण के बारे में बड़ी काल्पनि बातें लिखी हैं। उनकी वे धारणायें जो श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में है, मनगढ़न्त हैं इन मनगढ़न्त बातों को निकाल देने के बाद जो कुछ भी बचेगा, वह भगवान् सम्बन्ध में अति पवित्र, परम विशुद्ध और अतिशय महान् होगा। भगवा श्रीकृष्ण का चरित्र ऐसा था भी। ऐसा महान्, सर्वगुण सम्पन्न और सर्वपापों रहित आदर्श चरित्र कहीं भी नहीं दिखायी देता। किसी देश के इतिहास या साहित्य में ऐसे महान् चरित्र के दर्शन नहीं होते। ये बातें बंकिम बाबू ने बड़ी ऐतिहासिक खोज के बाद कही हैं। उनका अपना विचार था कि भग

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वान् श्रीकृष्ण के चरित्र का कलुषित वर्णन उन्हीं लोगों ने किया है जिनकी चित्तवृत्तियाँ स्वयं कलुषित हैं। अबतक की जितनी धारणा भगवान् श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में की हैं, वे सब निराधार हैं। श्रीकृष्ण का चरित्र अमलिन है, पुनीत है, पवित्र है। उसमें किसी प्रकार की कालिमा नहीं है। उनके विषय में कलुषित विचार रखना, इतिहास का और अपने पूर्वज का अपमान करना है।

प्रश्न ४--भगवान् श्रीकृष्ण के चरित्र से कौन-कौन-सी शिक्षाएँ मिलती हैं?

उत्तर—भगवान् श्रीकृष्ण का चरित्र एक आदर्श चरित्र है। उनसे हमें अनेक शिक्षाएँ मिलती हैं।

(१) न्याय का पक्ष लेना तथा अन्याय का विरोध करना। भगवान् श्रीकृष्ण ने सदा अन्याय का विरोध किया और न्याय का पक्ष लिया। उन्हें अपनी इस प्रतिज्ञा के कारण अनेकों कष्ट भी भोगने पड़े, किन्तु वे जरा भी विचलित न हुए।

(२) धर्म का प्रचार और अधर्म का नाश करना। भगवान् श्रीकृष्ण के चरित्र से हमें दूसरी शिक्षा धर्म के प्रचार करने की मिलती है। भगवान् का अवतार ही धर्म संस्थापनार्थ हुआ था। वे जीवन भर धर्म का प्रचार तथा अधर्म और अधर्मियों का नाश करते रहे।

३—कर्म करने की प्रेरणा भी भगवान् श्रीकृष्ण के चरित्र से हमें मिलती है। गीता में उन्होंने कर्म करने पर जोर दिया है। वे स्वयं कर्मयोगी थे। उनका कहना था कि कर्म करते चलो, फल का विचार मत करो। फल तुम्हें ही प्राप्त हो जायेंगे। अर्जुन जब मोह के वशीभूत हो गये और युद्ध स्थल में किंकर्त्तव्यविमूढ़ दिखायी देने लगे, तब भगवान् ने उन्हें भी कर्म का उपदेश दिया। हमें भी कर्म करना चाहिए। फल की चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

४—पक्षपात न करना चाहिए, श्रीकृष्ण ने कभी भी पक्षपात नहीं किया। उन्होंने युद्ध में कौरव और पाण्डव दोनों की सहायता की।

५—हमें भी वीर, धीर, निर्भीक होना चाहिये। श्रीकृष्ण वीर, धीर और निर्भीक थे। कभी महान् संकट पड़ने पर भी वे नहीं डरते थे।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हमें कलाओं से प्रेम करना चाहिए। भगवान् श्रीकृष्ण कला-कोवि भी थे।

सहानुभूति, दृढ़ता, कर्तव्यपरायणता, व्यावहारिकता, गम्भीरता आदि गु भगवान् श्रीकृष्ण में थे। हमें भी वैसा ही होना चाहिए। हमें भी निष्पक्ष हो चाहिए। सबसे प्रेम करना चाहिए।

प्रश्न ५—पंडित पद्मसिंह शर्मा की भाषा शैली की विशेषतायें बताइये।

उत्तर—लेखक का जीवन-परिचय आरम्भ में दिया गया है, उसी स उसकी भाषा-शैली पर भी विचार किया गया है। कृपया उसे देख लें।

———

मेरा धर्म

[ले० श्री भवानीदयाल सन्यासी]

परिचय—श्री भवानी दयाल सन्यासी का जन्म सन् १८९२ में हुआ था आपकी शिक्षा-दीक्षा आदि दक्षिण-अफ्रिका में ही हुई थी। कुछ ही दिनों आपने हिन्दी, अंग्रेजी और उर्दू की अच्छी जानकारी प्राप्त कर ली। अ उच्च-कोटि के प्रतिभाशाली-विद्वान सिद्ध हुए। प्रारम्भ से ही आपने अप समय दक्षिण अफ्रिकाके प्रवासी भारतीयों की सेवा में लगाया। वहाँ के प्रवा भारतीयों की दशा ने आपको द्रवीभूत किया। बड़े उत्साह और स के निस्वार्थ सेवक के रूप में आपने उन समस्याओं पर विचार कि अपने नेतृत्व द्वारा उन समस्याओं को सुलझाने में योगदान दिया। इस दिशा आप गान्धीजी के कार्यों से बड़े प्रभावित थे।

आपको अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा; किन्तु अपने हृदय विशालता तथा बड़े धैर्य के साथ आपने उन सब कठिनाइयों का सामना कि अपने नेतृत्व में आपने भिन्न-भिन्न स्थानों का दौरा और निरीक्षण कि कई पत्रों का सुन्दर सम्पादन किया तथा कितने ही सामयिक विषयों पर और टिप्पणियाँ लिखीं। आपने अनेक पुस्तकों की रचना भी की। आप

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भावना, संस्कृति और धर्म के प्रेमी तथा आर्यसमाज के भक्त हैं। आपको भारत से अनन्य प्रेम है। आपने समय-समय पर भारत के विभिन्न प्रान्तों और स्थानों का भ्रमण किया है और वहाँ पर भाषण दिये हैं। अपने जीवन में आप पक्के सिद्धान्तवाद, कर्मठ व्यक्ति, समाज और देश के सेवक, कुशल पत्रकार और एक अच्छे लेखक हैं।

भाषा और शैली—भवानीदयालजी सन्यासी की भाषा सरल और प्रभावोत्पादक है। आपके लेखों और भाषणों का उद्देश्य जनता के लिए सामयिक विचारों से सम्बन्धित है अतः भाषा उसी के अनुरूप है जिसमें उर्दू के शब्दों का अच्छा प्रयोग हुआ है। इस प्रयोग के कारण कथन में एक प्रकार का ओज और स्पष्टता आ जाती है। आप किसी बात को कहते समय लम्बी-चौड़ी भूमिका नहीं बाँधते, किन्तु स्पष्ट शब्दों में विषय पर आ जाते हैं और अपना मत भी स्पष्ट करते चलते हैं। अपने लेखों में आपने मुहावरों का बराबर प्रयोग किया है। पदों और वाक्यों की योजना बड़ी सुगठित है और बोलचाल का ढंग अपनाया गया है। आपने अपने लेखों में हास्य और व्यंग्य का भी समावेश किया है, किन्तु उसका उद्देश्य विद्वेष की भावना से नहीं, किन्तु कथन में रोचकता तथा वास्तविकता दिखलाने के उद्देश्य से होता है। अंग्रेजी के अच्छे जानकार होने के कारण उसका प्रभाव भी आपकी शैली पर पड़ा है। किसी की उक्ति-कथन के उल्लेख में आपने अंग्रेजी-शैली को अपनाया है या यों कहें कि अंग्रेजी की छाया उस पर पड़ी है। प्रस्तुत निबन्ध 'मेरा धर्म' में स्थान-स्थान पर इसे देखा जा सकता है जैसे—

क—"तू ही इस्लाम का दुश्मन भवानी दयाल है!" उसने डटकर पूछा।

ख—"हाँ, यह नाम तो मेरा ही है लेकिन मैं इस्लाम तो क्या दुनिया के किसी भी मजहब से दुश्मनी नहीं रखता।" मैंने दिलेरी से जवाब दिया।

उपरोक्त उदाहरणों में 'क' में उसने डटकर पूछा तथा 'ख' में मैंने दिलेरी से जवाब दिया—हिन्दी की शैली के अनुसार वाक्य के प्रारंभ में आवेगा। इस प्रकार भवानी दयाल जी सन्यासी की शैली में उनकी अपनी विशेषता है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनुच्छेद १—३

शब्दार्थ—स्पष्ट = साफ-साफ। सर्वस्व = सब कुछ। मातृभूमि = वह देश जहाँ का अन्न-पानी मनुष्य के रग-रग में बहता है, जन्मभूमि। पितृभूमि = बाप-दादों का देश। आराधना = प्रार्थना, स्तुति। कर्म = जीवन का प्रधान कार्य। अनुराग = प्रेम। पुरातन = पुराना, प्राचीन। संस्कृति = सामाजिक व धार्मिक संस्कार, सभ्यता। रक्षक = रक्षा करने वाला। प्रचारक = फैलाने व बढ़ाने वाला। आध्यात्मिक = ईश्वर, जीव और जगत सम्बन्धी। प्रेरणा = किसी कार्य में लगाने की प्रवृत्ति, उत्तेजना। शिक्षा = सीख, नसीहत। हजरत ईसा = ईसाई धर्म के चलाने वाले। पैगम्बर मुहम्मद = मुसलमान धर्म के प्रवर्त्तक जिन्हें वे लोग ईश्वर की सन्तान या उनके दूत मानते हैं। अशिष्ट = असभ्य, बुरे। बर्दाश्त = सहन। मतान्ध = धर्म से अन्धे। मजहब = धर्म। इजहार = स्वीकृति, सबूत। वक्ता = बोलने वाला, भाषण देने वाला। व्यक्तित्व = चरित्र, व्यक्ति की सर्वाङ्गीण विशेषता। शान्त = चुप, स्थिर। हैसियत = अधिकार। धिक्कार = तिरस्कार, अनादर या घृणा सूचक शब्द। बौछार = झड़ी, लगातार एक के बाद एक, क्रम न टूटना। खण्डन की खँजरी बजाना = बड़े जोर-शोर से किसी बात को गलत सिद्ध करना। ख्याल = विचार। अपराध = दोष, गलती। चालबाज = धूर्त, कपटी, ठग। भ्रान्ति = धोखा, गलत विचार। लेखमाला = क्रम में कई लेख। परिच्छेद = अध्याय, प्रकरण। दुर्गति = बुरी दशा। दिग्दर्शन = परिचय, जानकारी। विरोध = विपरीत, शत्रुता। बवंडर = आँधी। चरित्र = स्वभाव, प्रवृत्ति आदि। नेतृत्व = काम को चलाने वालेका पद। कोसना = बुरा चाहना या मनाना। भड़काना = उभाड़ना, उत्तेजित करना। कोई बात उठा न रखना = हर प्रकार से कोशिश करना।

यहाँ मैं स्पष्ट..............................करने की शिक्षा भी।

प्रस्तुत गद्यांश सन्यासी भवानी दयाल जी द्वारा लिखित 'मेरा धर्म' शीर्षक निबंध से लिया गया है। प्रसिद्ध समाज सेवक सन्यासी जी ने प्रारम्भ में यहाँ पर अपनी धार्मिक और राष्ट्रीय भावना का उल्लेख स्पष्ट शब्दों में कर दिया है

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जिससे उनकी विचार-धाराओं के सम्बन्ध में कोई भ्रम नहीं हो सकता।

लेखक कहता है कि मैं साफ़-साफ़ बतला देना चाहता हूँ कि ईश्वर के बाद यदि किसी वस्तु को मैं श्रद्धा और महत्व देता हूँ तो वह है भारत देश। यही मेरे लिए सब कुछ है। इसके अलावा अपने जीवन में अन्य कोई विचार, लालसा या इच्छा नहीं रखता। यही मेरी वास्तविक जन्म-भूमि है और मेरे पूर्वजों का देश यही है। लोग ईश्वर की पूजा करते हैं मैं हिन्दुस्तान की। उसी के प्रति आदर और श्रद्धा का समर्पण करता हूँ, उसकी ही विनय और स्तुति करता हूँ। मेरे जीवन का प्रधान कार्य भारत देश की सेवा के रूप में होता है। इसी की पूजा-अर्चना और सेवा-सुश्रूषा मेरा धार्मिक कर्त्तव्य और नियम है। इसी देश के लिये मेरा सारा जीवन है तथा मेरे सारे जीवन की समाप्ति भी इसी के लिये है। मेरा प्रेम आर्यसमाज नामक संस्था से इसलिये है कि यह संस्था भारतवर्ष के प्राचीन धर्म, तत्वज्ञान सम्बन्धी शास्त्र जिसे दर्शनशास्त्र कहते हैं, साहित्य सम्बन्धी पुस्तकों और ज्ञान तथा जातीय और सामाजिक संस्कार एवं सभ्यता आदि की रक्षा करती है और उसका विस्तार और प्रचार करना इसका कार्य है। मुझे जीव-जगत, आत्मा-परमात्मा सम्बन्धी ज्ञान को जानने-समझने का उत्साह ही केवल इस संस्था के द्वारा नहीं मिला है, किन्तु स्वदेश से प्रेम करने की सीख भी मैंने इसी से सीखी है और इसके ही कारण भारत से मेरा स्नेह है।

उन दिनों देश भर में...................की बौछार होने लगी।

प्रस्तुत अवतरण 'मेरा धर्म' नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक हैं श्री भवानी दयाल सन्यासी, जिन्होंने भारत के भिन्न-भिन्न भागों का भ्रमण किया था। कई स्थानों पर उन्होंने सभापति के पद से भाषण भी दिये थे। एक बार आरा शहर में एक विशाल सभा का आयोजन था और उसके सभापति सन्यासी जी बनाये गये थे। इस पद्यांश का प्रसंग उसी से सम्बन्धित है।

जिस समय आरा शहर की उस विशाल सभाके सभापति सन्यासीजी बनाये गये, वह समय भारतमें हिन्दू-मुसलमानों के आपसी झगड़े और उपद्रव का था। एक ओर मुसलमान लोग घृणा और शत्रुता की भावना प्रकट करने के लिए

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हिन्दुओंके प्रति अपशब्दों का प्रयोग करते थे और इस प्रकार बुरे-भले निन्द और अपमान से भरे हुए शब्दों को बकना उनका एक प्रकार का धार्मिक औ पवित्र कार्य हो गया था, तो दूसरी ओर कांग्रेस का बुरा मानना तथा मुसलमान की निन्दा और बुराई करना हिन्दुओं ने अपना पवित्र कार्य बना लिया था। इ प्रकार जब ऐसा वातावरण था कि हिन्दू-मुसलमान अपना सच्चा धर्म भुला बैठे और धर्म के नाम पर एक दूसरे को गालियाँ निन्दा और अपमानजनक शब्द का प्रयोग कर शत्रुता बढ़ा रहे थे। ऐसी हालत में जब उस विशाल सभा इसी देश का एक आर्यसमाजी भाषण देने के लिए उठकर तैयार हुआ, तो उ समय हिन्दू जाति के लोगों ने आनन्द प्रकट करने के लिए जोर-जोर से तालि पीटकर उस व्यक्ति का स्वागत किया। इस ताली पीटने में उन लोगोंने अपने हृदय की आनन्द-भावना को व्यक्त किया। उन्होंने भाषण देना प्रारम्भ कि और अपने भाषण के क्रम में मुसलमानों के धर्म को चलाने वाले हजरत मुह म्मद साहब के चरित्र के सम्बन्ध में कुछ अनुचित बातें कहीं तो उस सम मुझसे चुप न रहा गया। सभापति के अधिकार का प्रयोग कर मैंने उन मुहम्मद साहब के प्रति आगे और अनुचित शब्दों के प्रयोग करने से रो दिया। मेरे ऐसा करने के कारण भाषण में उपस्थित सारे लोग मुझसे नारा हो गये और मेरे सम्बन्ध में उन्होंने तिरस्कार और घृणासूचक शब्दों प्रयोग का सिलसिला शुरू कर दिया।

अनुच्छेद ४—७

शब्दार्थ—सफाई=स्पष्टीकरण, दोषारोप को हटाना। भडुआ=वेश्या का दलाल। फातमा=हजरत मुहम्मद की पुत्री। वर्तमान=उपस्थित काल स्थिति=हालत। घटाना=चरितार्थ करना, लगाना, सम्बद्ध करना। निर्देश =सूचना देने वाला, स्पष्ट कहने वाला। नादानी=अल्प ज्ञान। डंका बजा =घोषणा करना, जोरदार शब्दों में व्यापक प्रचार करना। स्वर्गीय=मृ दिवंगत। आत्मा=जीव, चैतन्य। वस्तुतः=वास्तव या यथार्थ में। तह में= मूल या जड़ में। दलबन्दी=गुटबाजी। नेटाल=दक्षिणी अफ्रिका का ए

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रसिद्ध नगर। नम्र=विनीत। प्रबल=तेज। समर्थक=पोषण या समर्थन करने वाला। वजह=कारण। निगाहों में बुरी तरह खटकना=अत्यन्त बुरा लगना। अग्रनेता=नेताओं में अग्रगण्य या अगुआ। डरबन=दक्षिणी अफ्रिका का एक प्रसिद्ध नगर और बन्दरगाह। हट्टाकट्टा=शक्तिशाली, हृष्ट-पुष्ट। क्रोध से तमतमाना=अत्यधिक गुस्से से लाल हो जाना। आँखों में खून उतरना=अत्यन्त क्रोध के कारण आँखों का लाल होना। दिलेरी=बहादुरी, हिम्मत। वज्र-सा=तेज, गहरा, अत्यन्त कठोर। आँखों के सामने अँधेरा छाना=कुछ भी दिखाई न देना। तिलमिलाकर=कष्ट से व्याकुल होकर। धीर-गम्भीर= साहसी और शान्त। मुराद=इच्छा, लालसा। छाती अड़ाना=छाती या सीना सामने करना। दाह बुझाना=जलन शान्त करना, किसी भावना जैसे क्रोध आदि का प्रबल-वेग तुष्ट करना।

मेरा लेख तो............कुछ फल न हुआ।

उपरोक्त पंक्तियाँ भवानीदयाल सन्यासी के 'मेरा धर्म' नामक पाठ से ली गयी हैं। लेखक ने देश की दुर्गति का परिचय देनेवाला हास्यरस की लेख-माला के अन्तर्गत एक लेख लिखा था, जिसमें हजरत मुहम्मद की पुत्री फातमा के नाम का प्रयोग किया गया था। इस कारण मुसलमान लोग नाराज हुए और "इण्डियन न्यूज" नामक एक पत्र ने मुसलमानों को भड़काया था। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने उस लेख तथा 'फातमा' शब्द के प्रयोग के बारे में अपना विचार प्रस्तुत किया है।

लेखक कहता है कि मैंने जो लेख लिखा था, उसमें मैंने आजकल जो भारत की दशा है उसीका परिचय लेख में सूचित किया है। फातमा शब्द का प्रयोग तो एक नारी की दशा को बतलाने के लिए हुआ है। मेरे लेख का फातमा को लेकर यदि कोई यह कहे कि मैंने उस फातमा का प्रयोग हजरत साहब की कन्या के लिए किया है तो यह ठीक नहीं। यदि ऐसा कोई करता है तो वह चारों ओर अपनी अल्प जानकारी और ज्ञान का प्रचार करता है साथ ही साथ वह अपने ऐसे कार्य से उस दिवंगत और पवित्र जीव के प्रति निरादर सूचक शब्दों को स्वयं प्रचारित करता है। वास्तव में सत्यता तो यह थी कि बिहार प्रान्त में

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मेरे एक सम्बन्धी के यहाँ एक बार विवाह का अवसर था और मैं भी सम्मिलित हुआ। विवाह की खुशी के उपलक्ष्य में वेश्या का गान आदि हुआ, जिसका नाम फातमा था। वह नाम मेरी स्मरण-शक्ति में रह गया और जब मैं नारी की दशा को सूचित करने वाला यह लेख लिखने बैठा, तो वैसी पीड़ित नारी के लिए मैं वही फातमा नाम दे बैठा था। मेरे ऊपर जो दोषारोपण हुआ था उसको दूर करने और स्पष्टीकरण के लिए मैंने जो यह बातें बतलाईं उसका कोई नतीजा न निकला और मुझ पर दोष लग ही गया।

वस्तुतः उस आन्दोलन की.................................खटक रहा था।

प्रस्तुत गद्यांश 'मेरा धर्म' शीर्षक पाठ से लिया गया है, विद्वान लेखक सन्यासी जी के फातमा शब्द का प्रयोग करने के कारण मुसलमानों का कोप-भाजन बनना पड़ा और अपने को निर्दोष सिद्ध करने पर भी उन पर दोषारोपण लगा। ऐसा न होना चाहिए था और वास्तविकता स्पष्ट कर देने पर उनके विरुद्ध आन्दोलन छिड़ना उस धार्मिक सम्प्रदाय की अल्पबुद्धि का सूचक था। आन्दोलन का वास्तविक कारण क्या था इसका लेखक ने इन पंक्तियों में निर्देश किया है।

लेखक कहता है कि वास्तव में मेरे विरुद्ध वह आन्दोलन कुछ राजनीतिक गुटबाजों की प्रवृत्ति का परिणाम था अन्यथा वैसा निरर्थक आन्दोलन न चलता। वे मुझे दबाकर अपना स्वार्थ और उद्देश्य पूरा करना चाहते थे। मुसल्मानों में कुछ लोग ऐसे थे जो नेटाल नगर की भारतीय कांग्रेस नामक संस्था के शत्रु हो गये थे। ऐसे लोगों का एक गुट था। कांग्रेस की सेवा और उसका एक साधारण सहायक एवं उसका प्रभावशाली और तेजस्वी समर्थन करने के कारण मैं उन्हें बहुत बुरा लगता था। उस दल के लोग मुझे देख नहीं सकते थे।

मैं झटपट उठ पड़ा.................................दाह बुझाओ।

प्रस्तुत गद्यांश श्रीभवानीदयाल सन्यासी लिखित 'मेरा धर्म' नामक पाठ से लिया गया है। डरबन की सड़क पर एक दिन हबीबुल्ला खाँ नामक पठान नवयुवक आया जिसको संन्यासी जी के खिलाफ आन्दोलन करने वाले कुछ मुसल्मानों के उच्च नेताओं ने उनपर हमला करने के लिए ठीक किया था। उस

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पठान ने सन्यासी जी के गाल पर कड़ा तमाचा मारा, जिससे वे गिर पड़े, कुछ देर तक उन्हें कुछ न दिखाई पड़ा। वह मुसल्मान पिस्तौल निकाल कर सामने खड़ा था। इन पंक्तियों का प्रसंग उसी समय का है।

लेखक कहता है कि मैं शीघ्र ही जमीन से उठ कर खड़ा हो गया और हबीबुल्ला खाँ नामक पठान का हाथ मैंने पकड़ा। बड़े ही साहसी और शान्त स्वर और मुखाकृति बनाकर मैंने उससे कहा कि तुमने मुझे अभी एक ही चपत लगायी है और इतने से तुम्हारी इच्छा का पेट नहीं भर सकता क्योंकि तुम्हें मुझ पर क्रोध बहुत अधिक है इसलिए मैं अपना यह दूसरा गाल प्रस्तुत करता हूँ तुम इस पर भी तब तक चपत लगाते जाओ जब तक तुम्हारा मन न भरे और क्रोध शान्त न हो। इसके पश्चात् मैंने अपने वस्त्रों—कोट-कमीज के बटन खोलकर छाती नंगी करके उसके सामने करते हुए कहा कि यह लो मेरी नंगी छाती इस पर अपने पिस्तौल से गोली मारकर मुझे समाप्त कर दो ताकि तुम्हारे हृदय की जलती हुई अग्नि और जलन शान्त हो जाय।

अनुच्छेद ८—९

शब्दार्थ— दैवी=ईश्वरीय। सञ्चार=फैलना, चलना। भय=डर। क्रूरता=कठोरता, निर्दयता। विस्मयभरी=आश्चर्य या अचरज से भरी हुई। थर-थर काँपना=भय से शरीर का अत्यधिक हिलना-डुलना। पाशविकता=पशुओं की भयानक प्रवृत्ति। खिदमत=सेवा। सबाब=पुण्य। काम तमाम करना=जान से मारना। अभिनय=नाटकीय चेष्टा। पिण्ड छुड़ाकर=बचकर, जान बचाकर। बदला=प्रतिशोध। उतारू=तैयार। नौबत=स्थिति, हालत, अवस्था। परास्त करना=हराना। खिलाफ=विरुद्ध। सत्याग्रह=किसी सत्य या न्याय के पक्ष की स्थापना के लिये शान्तिपूर्वक हठ। शरण में जाना=सहायता लेना। सिद्धान्त=दृढ़ मत। मजाक उड़ाना=हँसी या बदनामी करना। आत्मग्लानि=पश्चाताप और दुख का अनुभव। गैरत=लज्जा। गड़ना=मस्तक झुकाना। गुस्ताखी=उद्दंडता, उच्छृंखलता। द्वेष=दुश्मनी। रोष=गुस्सा।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उस समय मुझमें························जगह मनुष्यता थी।

यह गद्यांश 'मेरा धर्म' नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक भवा
दयाल सन्यासी हैं। गरीबुल्ला खाँ नामक पठान युवक के चपत मारने पर त
पिस्तौल निकालने पर लेखक द्वारा सीना तान कर खड़े हो जाने के समय
हाल उस पिस्तौलधारी युवक का हुआ, उसका वर्णन इन पंक्तियों में कि
गया है।

लेखक कहता है कि जिस समय मैंने युवक के सामने नंगा सीना क
हुए गोली छोड़ने के लिए कहा, मेरे शरीर की रग-रग में उस समय ईश्वरी
शक्ति का प्रवाह होने लगा। मुझे ऐसा अनुभव हुआ। वह मुझे गोली से म
सकता था, किन्तु मुझे हृदय में मृत्यु के डर का अनुभव तो हुआ ही नहीं
न जाने डर कहाँ जाता रहा। मैं एक योद्धा की तरह प्राण को छोड़ने के लि
खड़ा था, किन्तु बड़ी विचित्र बात देखने में आयी, उसने मुझपर गोली न
चलायी। आँखों में आश्चर्य भर कर वह एकटक मुझे देख रहा था। उस
आँखों में कठोरता का भाव न था। जिस प्रकार कोई दोषी व्यक्ति भय से कि
के सम्मुख कांपे उसी तरह उस पठान का शरीर अत्यन्त तेजी के साथ हिल
रहा था। उसके चेहरे के भाव बदल गये थे। अभी कुछ क्षण पहले जिस
चेहरा गुस्से के कारण लाल था, उस पर शर्म और ग्लानि का भाव था। गु
की भावना जो पशुओं की प्रवृत्ति है वह चेहरे से गायब थी उसके स्थान
मनुष्यों की स्वाभाविक प्रवृत्ति को सूचित करने वाली शर्म छायी हुई थी।

मैं सत्याग्रह का प्रयोग कर························रोष नहीं था।

प्रस्तुत गद्यांश श्री भवानी दयाल सन्यासी द्वारा लिखित 'मेरा धर्म' ना
पाठ से लिया गया है। नगर की सनसनी और हिन्दुओं के जोश के
पुलिस ने उस पठान युवक गरीबुल्ला खाँ को पकड़ लिया। उसके खि
मुकदमा हुआ, किन्तु लेखक ने उसके विरुद्ध अदालत में बयान नहीं दि
जिसका कारण लेखक ने इन अन्तिम पंक्तियों में दिया है।

मैंने अपने सत्य-पक्ष की रक्षा के लिए शान्ति पूर्वक प्रयास किया था
उसका व्यवहार कर उस पठान युवक को हरा चुका था। इस कारण मैं अदा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

की सहायता लेकर उसे सजा दिलवाने में अपने दृढ़ मत का अनादर व अपमान करवाना नहीं चाहता था। मेरे अपने ढंग से पठान हबीबुल्ला को हृदय में बड़ा पश्चाताप और दुख हुआ। उसे एक प्रकार से सजा मिल गयी। जब मैं भारत को रवाना हो रहा था तो वह समुद्र-तट पर आया और उसने मुझसे भेंट की। अत्यन्त लज्जित होकर अपनी अशिष्टता के लिए मुझसे कई बार गलती के लिए क्षमा कर देने को कहा। वास्तव में उसने गलती नहीं की थी। दूसरे के कहने के कारण उसने मुझे मारा था। इस कारण मैं उससे न तो दुश्मनी ही करता था और न उस पर क्रोध का भाव मेरे हृदय में विद्यमान था।

न्याय मन्त्री

[ले० श्री सुदर्शन]

जीवन-परिचय—सुदर्शन जी का जन्म सन् १८९५ में पंजाब प्रान्त के स्यालकोट नामक जिले में हुआ था। आपका वास्तविक नाम बदरीनाथ भट्ट है, किन्तु हिन्दी-संसार आपको उपनाम सुदर्शन से ही जानता है। बचपन के दिनों में पंजाब की भाषा उर्दू थी अतः आपने उर्दू पढ़ी तथा उर्दू ही आपकी भाषा रही। आप जब छठीं कक्षा में पढ़ते थे तो आपने उर्दू में एक कहानी लिखी। इस प्रकार बचपन से ही आपको कहानी पढ़ने और लिखने का शौक था। आपने बी. ए. तक शिक्षा पाई है। पहले आप उर्दू में ही कहानी लिखा करते थे और उर्दू कहानी लेंखक के रूप में आपने काफी प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी। आपके उन कहानियों के कई संग्रह भी निकले हैं। संवत् १९७७ (सन् १९२०) में आपकी सर्व प्रथम हिन्दी कहानी सरस्वती में प्रकाशित हुई तथा उस काल से आप बराबर हिन्दी के पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ निकलवाते रहे।

सन् १९२७ में आपका 'बहारिस्तान' नाम का संग्रह छपा जिसकी भूमिका हिन्दी के प्रसिद्ध कहानीकार, उपन्यासकार और लेखक प्रेमचन्दजी ने लिखी है। प्रेमचन्दजी से आपकी अच्छी मित्रता और घनिष्ठता थी। आपकी गंभीरता

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और आँखों की चमक में एक अजीब जादू है। अपने व्यक्तित्व और व्यवहार से आप सबको प्रभावित कर लेते हैं। सन् १६२८ से आपने कानपुर में नौकरी कर ली। इसके पश्चात् आपने फिल्म-क्षेत्र में प्रवेश किया। आप कई वर्षों से फिल्म-संसार में लेखक के रूप में कार्य कर रहे हैं, किन्तु वहाँ भी आपने कहानियों का लिखना नहीं छोड़ा है। आपने हिन्दी के कहानी-भण्डार को भरा है। प्रेमचन्दजी, कौशिकजी तथा सुदर्शनजी हिन्दी के वे तीन प्रारम्भिक कहानी लेखक हैं, जिन्होंने हिन्दी-कहानी साहित्य को अपनी-अपनी रचनाओं द्वारा महान् देन दी है। और प्रेमचन्दजी के पश्चात् यदि किसी हिन्दी कहानीकार को सबसे अधिक लोकप्रियता हुई है, तो वे सुदर्शन जी ही हैं।

कहानी लिखने के कई ढंग या प्रणालियाँ प्रचलित हैं। अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार लेखक किसी भी ढंग को अपनाता है। कहानी लिखने का लेखक का ढंग ही कहानी कहने की शैली कहलाता है। ये शैलियाँ इस प्रकार हैं। (१) ऐतिहासिक या वर्णनात्मक शैली, (२) आत्मचरित शैली (३) कथोपकथनात्मक शैली (४) पत्रात्मक शैली (५) डायरी-शैली।

इन विभिन्न शैलियों में से सुदर्शन जी ने ऐतिहासिक या वर्णनात्मक शैली, आत्मचरित शैली तथा पत्रात्मक शैली को अपनाया है। ऐतिहासिक या वर्णनात्मक शैली में कहानीकार एक इतिहासकार की तरह तटस्थ होकर अन्य पुरुष की भाँति या तटस्थ-दर्शक की तरह कहानी का वर्णन करता है। वर्णन नाटकीय ढंग से भी प्रारम्भ किया जा सकता है तथा पात्रों का परिचय बाद में बतलाया जा सकता है। अधिकांश लेखक इसी शैली को अपने-अपने ढंग से अपनाते हैं। 'न्याय-मन्त्री' कहानी की शैली ऐतिहासिक और वर्णनात्मक ही है, किन्तु कथोपकथन का अच्छा ढंग इसमें अपनाया गया है जो घटना को रोचक ढंग से बढ़ाता चलता है।

आत्म-चरित शैली में सुदर्शन ने कई कहानियाँ लिखी हैं। इस शैली में एक पात्र प्रथम पुरुष में अथवा 'मैं' के द्वारा अपनी जीवनी कहता चलता है। सुदर्शन जी की 'अंधेरी दुनिया' शीर्षक कहानी में 'रजनी' एक पात्री है जो 'मैं' द्वारा अपनी आत्म-बीती सुनाती है जैसे—'मैं पंजाबिन हूँ, परन्तु मेरा नाम

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बंगालियों का-सा है। मैंने अपने सिवा किसी दूसरी पंजाबिन लड़की का नाम रजनी नहीं सुना...... । इस तरह की शैली में एक चरित्र ही सामने आता है, किन्तु आत्म-चरित शैली का ही एक और दूसरा रूप है जिसमें कई पात्रों के समावेश से कथानक में विस्तार और क्रमदोष उत्पन्न तो होता है किन्तु चरित्र-चित्रण में पूर्णता आती है। 'कवि की स्त्री' नामक कहानी में सुदर्शन जी में इस शैली का सुन्दर व्यवहार दिखायी देता है जिसमें सावित्री सत्यवान और मणिराम ने कहानी में अपने जीवन की घटनाओं को 'मैं' रूप से अलग-अलग सुनाकर कहानी पूर्ण की है। 'जीवन और मृत्यु' इसी तरह की इनकी दूसरी कहानी है।

पत्रात्मक शैली में लेखक पत्रों के रूप में अपनी कहानी लिखता है। इसमें हृदय की अनुभूतियों के चित्रण का अच्छा से अच्छा और स्वतन्त्र एवं पूर्ण समावेश तो होता है, किन्तु वातावरण और चरित्र-चित्रण के लिए वैसा स्थान नहीं रहता। सुदर्शन जी की 'बलिदान' कहानी इस शैली में है। 'प्रताप के पत्र' नामक कहानी इस कोटि में आती है।

जीवन की वास्तविक समस्याओं, जीवन के तथ्यों और पहलुओं को सामान्य और वास्तविक भावों के साथ सुन्दर और कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करने और चेतना का दर्शन करा देने में सुदर्शन जी एक सफल कहानीकार हैं। उनकी कहानियाँ प्रेमचन्द की कहानियों की कोटि की हैं, किन्तु जीवन के सत्य और सौन्दर्य की अभिव्यक्ति में उनकी कला का विकास अपने ढंग से विकास और प्रगति के मार्ग पर गतिशील रहा है और है।

सुदर्शन जी की कहानियों को कथावस्तु के आधार पर हम तीन भागों में बाँट सकते हैं।

(१) मानव चरित्र की किसी एक ही और विशिष्ट भावना से सम्बन्धित था उस पर आधारित कहानियाँ इस तरह की कहानियों का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण उनकी 'हार की जीत' नामक कहानी है। यह गरीबों पर दया और सहायता के भाव पर आधारित है। 'वे किसी गरीब की सहायता न करेंगे' बाबा भारती की सहायता करने की वृत्ति तथा भावना का उद्घाटन इस कहानी का उद्देश्य है

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जिस पर छल द्वारा गरीब बन कर धोखे और कपट से चोट पहुँची है।

(२) मानव जीवन और इतिहास के चिरन्तन या अटल सत्य व्यंजित करने वाली कहानियाँ। 'कमल की बेटी', 'संसार की सबसे बड़ी कहानी' 'एथेन्स का संन्यासी' और 'धर्म की वेदी पर' आदि कहानियाँ इसी प्रकार की है। 'न्यायमंत्री' कहानी जिसमें अशोक के न्यायमंत्री शिशुपाल न्याय का वर्णन एवं चरित्र का उद्घाटन है कथानक की दृष्टि से इसी कोटि में आती है।

(३) सुदर्शन की कहानियों का तीसरा विषय दैनिक-जीवन की समस्याएं घटनाओं, जीवन के सुख-दुःख तथा जीवन और जगत की विषमता से सम्बन्ध रखती है। जीवन की साधारण घटनाएँ कहानीकार द्वारा असाधारण रूप प्रस्तुत करती हैं। 'आत्माराम', 'हेर-फेर' तथा 'सूरदास' आदि कितनी ही कहानियाँ इसी तरह की हैं।

कहानियों की विशेषता :—जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है सुदर्शन जी की कहानियों में भिन्न-भिन्न शैलियों का व्यवहार हुआ है। सुदर्शन जी की कहानियों का विषय मध्यम वर्ग, मजदूर, किसान तथा ऐतिहासिक चरित्रों से सम्बन्धित समाज की प्रगति के चित्रों से प्रकाशित एवं उनकी चेतना का दिग्दर्शक है। बाहरी वातावरण तथा मानसिक चित्र एवं उनके कार्य-कलाप बड़े सुन्दर ढंग से प्रस्तुत हुए हैं। जीवन की यथार्थ और सुन्दर व्याख्या। जीवन समाज और युग की समस्या तथा उसका समाधान एवं संकेत उनकी रचनाओं में है। कहानी कला की दृष्टि से वे श्रेष्ठ हैं। यथार्थ वातावरण, सम्वादों में सरलता और स्वाभाविकता के साथ-साथ ओज और प्रभाव है। कहानियों की रचना में सुदर्शनजी ने बराबर देश-काल और पात्र का विचार ध्यान में रखा है। इतना होते हुए भी उनकी कहानियों में रोचकता नष्ट नहीं होती। कहानी का शीर्षक प्रारम्भ और अन्त भी कलात्मक और सार्थक एवं उद्देश्य पूर्ण होता है।

भाषा शैली—सुदर्शन जी की कहानियों की भाषा सरल, स्वाभाविक, तथा बोल-चाल की होते हुए भी उसमें ओजस्विता है। उर्दू के प्रचलित शब्दों के अलावा कहीं-कहीं फारसी के एक-दो शब्द भी आ जाते हैं, किन्तु देश-काल पात्र

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के अनुसार भाषा को रखने में वे पटु हैं। 'न्यायमन्त्री' कहानी में यह देखा जा सकता है। 'न्याय मन्त्री' जैसी ऐतिहासिक कहानियों की भाषा देश-काल-पात्र के अनुरूप रखने की चेष्टा लेखक ने की है। इसमें उर्दू के अपेक्षाकृत कम शब्दों या बहुत कम शब्दों का व्यवहार हुआ है। मुहावरों का प्रयोग सुदर्शनजी में सर्वत्र एक-सा पाया जाता है, किन्तु विशेषता यह है कि भाषा की स्वाभाविकता नष्ट नहीं होती। उसमें प्रवाह और गति आ जाती है। वाक्य छोटे-छोटे और सार्थक होते हैं। शब्दों के चित्रों द्वारा आप स्वरूप खड़ा कर देते हैं।

रचनाएँ—सुदर्शनजी के कई कहानी-संग्रह छप चुके हैं। इनकी कहानियों ने हिन्दी संसार का सिर ऊँचा किया है। साहित्य की अभिवृद्धि हुई है। कहानियों के अतिरिक्त आपने एक-दो नाटक और उपन्यास भी लिखे हैं।

कहानी संग्रह—सुदर्शन-सुधा, सुदर्शन-सुमन, तीर्थ-यात्रा, पुष्पलता गल्प मंजरी, सुप्रभात, चार कहानियाँ, नगीना, पनघट, बहारिस्तान आदि।

उपन्यास—भगवती, परिवर्तन।

नाटक—अंजना और आनरेरी मजिस्ट्रेट (प्रहसन) आदि।

न्याय-मन्त्री की संक्षिप्त कथा

आज से ढाई हजार वर्ष पहले बुद्ध-गया नामक ग्राम में एक यात्री ने सन्ध्या के समय शिशुपाल नामक ब्राह्मण के द्वार पर आकर रात भर रहने के लिए जगह देने की याचना की।

ब्राह्मण, शिशुपाल बहुत अधिक गरीबी के कारण अपना ही पेट भरने में असमर्थ थे। थोड़ी-सी जमीन पर खेती करके वे अपना जीवन किसी प्रकार व्यतीत करते थे। फिर भी प्रसन्नता पूर्वक उस अनजबी को उन्होंने स्थान देकर उसका अच्छी तरह आदर-सत्कार किया। उस समय की प्रथा के अनुसार लोग अतिथि-सत्कार बड़ी श्रद्धा और प्रेम के साथ करते थे फिर ब्राह्मण लोग तो उनकी सेवा करना अपना धर्म समझते थे। विदा होते समय उस परदेशी ने सेवा करने के कारण उसके पुत्र की बड़ी प्रशंसा की। प्रशंसा के शब्दों को सुनकर शिशुपाल के हृदय पर गहरी चोट लगी। शिशुपाल ने अतिथि-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सत्कार के बदले में प्रशंसा पाने में अपना अपमान समझा। परदेशी ने अपनी भूल पर लज्जा का अनुभव किया और शिशुपाल के हृदय पर चोट पहुँचाने के लिए क्षमा मांगी, किन्तु क्षमा के साथ-साथ उसने कहा कि अब वैसे ब्राह्मण कहाँ हैं। वैसे ब्राह्मणों के दर्शन की प्यासी आँखें कभी तृप्त नहीं होतीं। इस पर शिशुपाल ने आपत्ति करते हुए कहा कि वैसे ब्राह्मण तो अवश्य आज भी हैं, किन्तु उस प्रकार अतिथि-सत्कार का मूल्य समझने वाले क्षत्रिय अवश्य नहीं मिलते।

परदेशी शिशुपाल का मतलब समझ न सका, जिसे समझाने के लिए शिशुपाल ने एक लम्बा भाषण दिया। उस भाषणकी बातें और ज्ञान तथा अपनी बातोंके कहने व ठीक-ठीक प्रमाण देकर उसे समझाने और राज्य के प्रबन्ध की पूरी-पूरी जानकारी से पूर्ण बातें सुनकर परदेशी को बड़ा आश्चर्य हुआ। उस परदेशी को कभी सपने में भी यह आशा न थी कि गाँव में ऐसा ज्ञानी और जानकार आदमी मिल सकता है। उसने कहा कि यदि अशोक को आपके ज्ञान के सम्बन्ध में जानकारी हो जाय तो वे आपको अपने राज्य की कोई बड़ी नौकरी अवश्य दे दें। यह सुनकर शिशुपाल अजीब ढंग से मुस्कराया उसकी मुस्कराहट में हृदय की असली प्रसन्नता नहीं, किन्तु अपनी हालत और विद्वता तथा समय की स्थिति और भयंकरता के प्रति व्यंग्य और तिरस्कार की भावना थी। अपने विद्रोह की भावना को छिपाने का एक कठोर प्रयत्न था। वह प्रसन्नता क्षणमात्र में गायब हो गयी, शिशुपाल ने स्पष्ट शब्दों में उस समय के अन्याय की बात कही, जिसको देखकर वह शान्त नहीं रह सकता था, उसमें विद्रोह की भावना जाग उठती थी। इसी समय परदेशी ने शब्दों को बदलकर न्याय और राज्य में सुख-चैन होने की बात कही, जिससे शिशुपाल के शब्दों का खण्डन होने के कारण शिशुपाल को स्पष्ट शब्दों में कहना पड़ा कि अच्छा हो वह चुप रहे, क्योंकि राज्य की दशा आदि वह अच्छी तरह जानता है। इस पर परदेशी बोला कि कुछ करने की अपेक्षा दूसरों में गलतियाँ निकालना बड़ा सरल है। शिशुपाल को यह सुनकर फिर चोट लगी और उसने कहा कि अवसर मिले तो यह करके दिखा दूँ कि न्याय कैसा होना चाहिए। यह सुन कर मालूम हुआ कि यह न्याय करने का मौका चाहता है। परदेशी ने बार-बार प्रश्न किए। आप अवसर चाहते हैं,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मिलने पर अन्याय न होगा, हर अपराधी को दण्ड तो मिलेगा। इनमें से प्रत्येक प्रश्न के उत्तर में उसने यही प्रकट किया कि ब्राह्मण के लिए कोई कार्य कठिन नहीं अवसर मिले तो न्याय का डंका बजाकर वह दिखा सकता है। परदेशी ने स्वाभाविक ढंग से सारे प्रश्न किए थे और वह उसी ढंग से बोला—यदि मैं राजा अशोक होता तो आपकी इच्छा पूरी कर देता। इस पर शिशुपाल को परदेशी के सम्बन्ध में क्षण-मात्र के लिए कुछ शंका हुई किन्तु जाती रही।

दूसरे दिन सम्राट अशोक की राज-सभा में शिशुपाल को उपस्थित होने का समाचार मिला। इस काल में अशोक बड़ी कठोरता से शासन करके सबको दबा रहे थे। स्त्री और ब्राह्मग तक को प्राण-दण्ड दिया जाता था। अतः उस गाँव के लोग तथा शिशुपाल का पुत्र-स्त्री तथा अन्य सभी इस समाचार से दुखो और भयभीत हुए, किन्तु शिशुपाल को कोई भय न था उसे विश्वास था कि उसने कोई अपराध न किया और न राज्य के किसी नियम के विरुद्ध उसने काम किया है। बिना अपराध राजा उस ब्राह्मग को प्राण-दण्ड या अन्य कोई सजा नहीं दे सकता। अतः निडर होकर शिशुपाल ने सन्ध्या के समय राजधानी में पहुँचकर महल में प्रवेश किया। राजमहल की शोभा और ठाट-बाट देखकर भय का विचार उनके मन में उत्पन्न हुआ। वे तरह-तरह की बातें सोचने लगे। कभी किसी गुप्तचर या व्यक्ति ने झूठी शिकायत न की हो कभी किसी शत्रु के बारे में सोचते तो कभी पिछली रात के उस अनजान परदेशी से जान-पहचान के आदमी से साफ-साफ सच्ची-सच्ची बातें कहने सुनने की गल्ती पर पश्चाताप करते और भय का भाव बढ़ता ही जाता। कभी महाराजा से कुछ मिलने से प्रसन्नता का भाव क्षण भर के लिए भय को दूर कर जाता। इसी बीच द्वारपाल ने सम्राट के आने की खबर दी।

मुस्कराते हुए सम्राट अशोक ने प्रवेश किया। शिशुपाल भय से कांपने लगा। उसने हृदय को शान्त और दृढ़ करके रात की पिछली मनमानी और साफ-साफ बात करने के लिए गलती को स्वीकार करना चाहा। राजा ने 'हूँ' करने के सिवाय कुछ न कहा। शिशुपाल ने अपनी कही हुई सत्य बातों का प्रमाण देने के लिए कहा। इस पर राजा ने कहा उसका प्रमाण नहीं, बल्कि

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आपकी परीक्षा करना चाहता हूँ। अशोक ने '…न्याय का डंका बजा दूँगा' उसके शब्दों की याद दिलाई और उसी की परीक्षा चाही। शिशुपाल ने बिना डर और हिचक के कहा—मैं तैयार हूँ। दूसरे दिन प्रातःकाल से न्याय-मन्त्री नियत किये जाने की आज्ञा अशोक ने सुना दी। शिशुपाल का अधिकार समझाते हुए कहा—पाटलिपुत्र की पुलिस का प्रत्येक अधिकारी तुम्हारे अधीन होगा और शान्ति रखने का उत्तरदायित्व तुम्हीं पर होगा। अशोक ने राजमुद्रा के रूप में अपनी अंगूठी निकाल कर देते हुए कहा—यह राज-मुद्रा है तुम कल सूर्योदय होने के साथ-साथ राज्य के न्याय-मन्त्री के पद के अधिकारी समझे जाओगे। यही तुम्हारी परीक्षा है।

एक महीने तक शिशुपाल ने न्याय-मन्त्री के पद पर रहकर बड़ी कुशलता से न्याय और प्रबन्ध किया। वह बिना किसी का विचार किये उचित न्याय करता। नगर में सुख-शांति स्थापित हो गयी। चारों ओर उसके कार्य की प्रशंसा होने लगी। एक दिन रात्रि के समय एक दुर्घटना हुई। नगर के किसी रईस के द्वार पर एक व्यक्ति आया और उसने रात्रि के समय किसी विधवा के भवन के दरवाजे खटखटाए। घर के स्वामी के न होने के कारण स्त्री ने दरवाजे न खोले। इस कारण उस व्यक्ति ने तलवार से दरवाजा तोड़ने के लिए प्रहार किया। इसी बीच पहरेदार ने आकर उसका हाथ पकड़ लिया। उसने पहरेदार के कर्तव्य-पालन और न्याय-मन्त्री को दिये हुए प्रण के प्रतिपालन की दृढ़ वाणी सुनी तो वह उस पर तलवार लेकर झपटा। वह रईस उसे मारना नहीं केवल डराना चाहता था। नया पहरेदार सामना न कर सका और एक ही वार में मारा गया। उसकी लाश को एक ओर कर वह भाग गया।

सबेरे इस घटना से नगर भर में हलचल मच गयी। शिशुपाल के शासन में पुलिस के ही एक आदमी का मारा जाना बड़ी भारी घटना थी। शिशुपाल ने जी-जान लगाकर कोशिश की किन्तु कई दिन तक हत्यारे का पता न लगा। इस कारण दिन-दिन अशोक का क्रोध बढ़ रहा था। उन्होंने शिशुपाल के प्रबन्ध और न्याय के डंके पर व्यंग्य किया और चिढ़ाते हुए क्रोध से कई बार फटकार दी। फिर भी कई दिनों का समय व्यतीत हो गया आखिर अशोक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ने एक दिन शिशुपाल को बुलाकर उसको फाँसी दे देने की बात कह सुनायी यदि इस बीच उस हत्यारे का पता न लगा।

दो दिन व्यतीत हो गये। तीसरा दिन भी निकल चला। शिशुपाल परेशान थे। लोगों ने राजा को भला बुरा कहा। वे शिशुपाल से प्रेम करने लगे थे; क्योंकि उसका शासन बड़ा सुखदायक था। किन्तु इस घटना से वे लोग भी शिशुपाल के लिए दुखी और चिन्तित थे। तीसरे दिन रात्रि के समय जब शिशुपाल एक प्रसिद्ध बाजार से होकर उस घातक की खोज में लगे थे तो उसे मकान की खिड़की से झाँककर देखते हुए उसी स्त्री ने रोका। वह स्त्री दरवाजे पर आयी और उसने मन्त्री को भीतर कमरे में ले जाकर बतलाया कि मैं उस हत्यारे की घटना व हत्यारे को अच्छी तरह जानती हूँ। न्याय-मन्त्री के पूछने पर उस स्त्री ने उस हत्यारे का नाम कान में कह दिया।

तीसरा दिन व्यतीत हो गया दरबार में आकर अशोक ने न्याय-मन्त्री से पूछा—घातक का पता लगा। न्याय-मन्त्री ने कहा—लग गया। उसे उपस्थित करने का आदेश होते ही बड़े निडर और कर्त्तव्य के दृढ़-पालन के भाव से न्याय मन्त्री ने अपने एक उच्च कर्मचारी धनवीर को महाराज अशोक की ओर इशारा कर गिरफ्तार करने की आज्ञा दी। दरबार के सारे लोग ठिठक कर रह गये। न्याय-मन्त्री ने अपनी आज्ञा दोहरायी—मैं आज्ञा देता हूँ, गिरफ्तार कर लो। यह घातक है इसे मेरी अदालत में पेश करो। धनवीर ने अशोक को हथकड़ी पहनायी और शिशुपाल की कचहरी की ओर ले जाकर अपराधी के लिए निश्चित् जँगले में खड़ा किया। शिशुपाल की आज्ञा के अनुसार अपराधी का सम्बन्ध राजघराने से होने के कारण अकेला ही बुलाया गया था। राजा के इशारे से मन्त्री लोग पीछे हट गये थे। शिशुपाल ने राजा को आँखों को झुकाकर प्रणाम किया और न्याय के आसन पर बैठकर उन पर हत्या का आरोप लगाया तथा उत्तर माँगा। अशोक ने अपराध स्वीकार किया, किन्तु पहरेदार पर अशिष्टता का दोष लगाते हुए कहा कि मैंने उसे जान-बूझ कर नहीं मारा। इस बात के सुनने के पश्चात् शिशुपाल ने वध की आज्ञा कह सुनायी। क्रोध के मारे अशोक की आँखें लाल हो गयीं। मन्त्रियों ने तलवारें निकाल लीं। कुछ

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लोग शिशुपाल को गालियाँ देने और कुछ उसे पागल बतलाने लगे। अशोक ने सबको शान्त रख कर संकेत किया जिससे सन्नाटा छा गया। न्याय-मन्त्री ने कहा—आप लोगों का क्रोध करना ठीक नहीं। मैं न्याय-मन्त्री के आसन पर न्याय करने बैठा हूँ। शोर-गुल करने पर न्यायालय के अपमान के अपराध में गिरफ्तार कर लूँगा। न्याय-मन्त्री ने फैसला कह सुनाया—

"अशोक! तुमने एक राज-कर्मचारी का वध किया है। मैं तुम्हारे वध की आज्ञा देता हूँ।"

इस बार अशोक ने सिर झुका कर उनकी आज्ञा को शिरोधार्य किया उन्होंने मन ही मन सोचा। यह मनुष्य सच्चा और महान् है। इसने कहा था मेरा न्याय धूम मचा देगा। सच निकला, इसने अपने कहने की लाज रख ली। ऐसे मनुष्य पर लोग गर्व करते हैं और न्यौछावर होते हैं। सम्राट के अभिमान के कारण उपेक्षा के भाव से कहा—मैं इस आज्ञा के विरुद्ध कुछ नहीं बोल सकता।

न्याय मन्त्री ने एक मनुष्य को आज्ञा दी और उसके एक स्वर्ण-मूर्ति लाने पर उन्होंने कहा—मैं न्याय-मन्त्री के पद पर हूँ और न्याय करना मेरा कार्य है। राज-कर्मचारी की हत्या का दण्ड निश्चित है। शास्त्रों के अनुसार राजा ईश्वर का रूप माना गया है उसे ईश्वर ही दण्ड दे सकता है। अतः मेरी आज्ञा है कि महाराज को चेतावनी देकर छोड़ दिया जाय और लोगों को शिक्षा देने के लिये यह मूर्ति फाँसी पर लटकायी जाय।

न्याय पर मुग्ध होकर लोगों ने न्याय-मन्त्री का जय-जयकार किया। लोगों ने न्याय-मन्त्री को निडर और महान न्यायी कह कर उनकी बार-बार जय बोली।

राजमहल में पहुँचकर न्याय-मन्त्री ने अशोक के सामने अङ्गूठी और मुद्रा रखते हुये अपनी वस्तुएँ सँभालने के लिये कहा, क्योंकि उनकी इच्छा वापस गाँव जाने की थी। अशोक ने आदर से उनकी तरफ देख कर कहा यह नहीं हो सकता। न्याय-मन्त्री कुछ कहना चाहते थे कि अशोक बीच में ही बोल उठे—आपका साहस मैं न भूलूँगा। न्याय-मन्त्री का कार्य आप ही कर सकते हैं। कोई दूसरा इस पद के योग्य दिखायी नहीं देता।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

न्याय-मन्त्री इस बात का जवाब न दे सके।

यह घटना आज से..............................उड़ा ले जाते हैं।

शब्दार्थ—लहरा रहे थे=उड़ रहे थे। परदेशी=मुसाफिर, अन्य जगह का यात्री। द्वार=दरवाजा। नम्रता=विनय। रात काटना=रात में रहना या रात बिताना। दारिद्र्य=गरीबी। नाईं=समान, तरह। पञ्जर=ढाँचा। आजीविका=कमाने का साधन, भरण-पोषण। सौभाग्य=अच्छा भाग्य या अवसर। अतिथि=मेहमान, अभ्यागत। सत्कार=मान, सेवा, खातिरदारी। प्रचलित=काम या व्यवहार में लाए जाना। सर्प को छेड़ना=किसी के गुस्से या क्रोध को भड़काना अथवा उत्पन्न करना। नाक-भौं चढ़ाना=उपेक्षा या अवहेलना से देखना। लज्जित=शर्मिन्दा। अभिप्राय=उद्देश्य, मतलब। आँखें तरसना=दर्शन की प्रबल इच्छा या लालसा होना। वक्तृता=भाषण। आरम्भ=शुरू। चकित होना=आश्चर्य में पड़ना। युक्ति-युक्त=ठीक-ठीक, न्याय संगत। प्रभावशाली=प्रभाव या असर करने वाली। मुग्ध=मोहित। तत्वदर्शी=तत्व या मर्म की गुप्त बात जानने वाला। पंडित=विद्वान, जानकार। कल्पना=विचार या सोचने की शक्ति। तर्क=कार्य-कारण से युक्त विवेचन, बहस। शासन-पद्धति=राज्य प्रबंध या राज्य चलाने का ढंग। विशाल=बहुत अधिक, महान। ज्ञान=जानकारी। गोबर में फूल खिलना=किसी बुरी अथवा मामूली जगह पर मूल्यवान वस्तु या आदमी का उत्पन्न होना। नियुक्त=काम पर लगाना। शुष्क=सूखे। अन्तःकरण=हृदय। कुढ़ना=भीतर ही भीतर जलना, मसोस कर रह जाना। मस्तिष्क=बुद्धि, मन, विवेक। रक्त उबलना=क्रोध अथवा गुस्से के कारण जोश अथवा बदला लेने के उद्देश्य से आक्रमण या नुकसान पहुँचाने की भावना का उत्पन्न होना। पैंतरा बदल कर=चालबाजी के द्वारा, घूम फिर कर, बातों को घुमा-फिरा कर। शेर-बकरी एक घाट पानी पीना=सुन्दर प्रबन्ध और न्याय के कारण सुख-चैन और शान्ति का होना। दोष=गलती, कमी। सुगम=सरल। झुलसकर=किसी भाव की गर्मी या अत्यधिक तीव्रता के कारण सूख कर। अन्याय=अनीति, अत्याचार, अन्धेर। सर्वथा=किसी प्रकार, कभी भी। अपराधी=अत्याचारी, दोष करनेवाला

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

डङ्का बजाना=धूम मचा देना, चारों ओर प्रसिद्ध कर देना। ज्योति=चमक प्रकाश। मन्शा=इच्छा, लालसा, अभिप्राय। सन्देह=शक, शंका, संशय निश्चय का अभाव। प्रवल=तेज। झोंका=बहाव। अभ्र-खण्ड=बादलों के टुकड़े।

शिशुपाल के शुष्क होठों पर..................उबलने लग जाता है।

प्रस्तुत गद्यांश पं० सुदर्शन लिखित 'न्याय-मन्त्री' नामक कहानी से लि गया है। ब्राह्मण शिशुपाल तथा उसके पुत्र ने अपने उस अपरिचित अतिथि का खूब स्वागत किया जिसकी प्रशंसा के शब्द सुनकर शिशुपाल ने अपना अपमान समझा और अवहेलना की दृष्टि से उसे देखकर कई बातें कहीं जिसका अर्थ वह परदेशी न समझ सका। उसे समझाने के लिए शिशुपाल ने एक लम्बा भाषण दिया। उस भाषण के प्रसङ्ग में अपनी बात का उचित और ठीक ठीक कथन, राज्य-प्रबन्ध की जानकारी और विवेचन को सुनकर वह परदेशी चकरा गया और उस पर बड़ा प्रभाव पड़ा। उसने कहा कि यदि महाराज को इसका पता लग जाय तो आपको किसी ऊँची जगह की राज्य में नौकरी मिल जाय। परदेशी के इन शब्दों का जो प्रभाव शिशुपाल के मुख पर पड़ा उसके हृदय में भावों की जो खलबली मची और जिसके परिणाम स्वरूप उसने राज्य के अत्याचार के सम्बन्ध में जो बातें कहीं वही इन पंक्तियों में कहा गया है।

......किसी ऊँची पदवी पर नियुक्त कर दें। परदेशी के प्रशंसा भरे एवं शुभकामना के अपने प्रति कहे गये शब्दों को सुनकर क्षणभर के लिए गरीबी के कारण सूखे हुए होठों पर प्रसन्नता को प्रकट करने वाली मुस्कराहट खेल गयी। मुस्कराहट के कारण खुले हुए होठों ने वह झलक पल भर के लिए ही दिखलायी। वह मुस्कराहट अजीब ढंग की थी उससे एक प्रकार का भय का भाव उत्पन्न होता था; क्योंकि सूखे होठों की उस मुस्कराहट में हृदय की प्रसन्नता या मुस्कराहटकी स्वाभाविक मधुरता न थी। फिर ऐसा व्यक्ति वैसी मधुर और सच्ची मुस्कराहट कैसे प्रकट कर सकता है जिसका हृदय भीतर ही भीतर जल रहा हो। अत्यधिक दुख के कारण जिसकी आँखें दुखी हों और दुख का भाव प्रकट करती हों तथा जिसकी बुद्धि और विवेक पर उसका अपना ही अधिकार न रह गया

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हो, बुद्धि चंचल हो उठी हो। श्मशान के भयंकर वातावरण में चाँदनी भी भयंकर तथा अपने अस्तित्त्व और शीतलता-सुन्दरता से रहित लगे उसी प्रकार भयंकर एवं व्यर्थ वह मुस्कराहट थी। चाँदनी श्मशान में जिस प्रकार अपने पद से गिरी हुई प्रतीत हो उसी तरह उस समय शिशुपाल की आँखें झुकी हुई थीं। वे ऊपर नहीं देख सकती थीं। कुछ समय व्यतीत होने पर उन्होंने ऊपर देखकर कहा कि इन दिनों बड़ी अनीति और अत्याचार फैल गया है। जब मेरी आँखें चारों ओर फैली हुई अनीति और अत्याचार की ओर जाती हैं तो क्रोध से मुझमें जोश और एक प्रकार के अत्याचार से लड़ने और दूर करने का प्रबल भाव मेरी नस-नस में उत्तेजना पैदा कर देता है।

दूसरे दिन महाराज अशोक..................सिद्ध कर सकते हो।

शब्दार्थ—दरबार=राज-सभा। आग-सी लग गयी=समाचार का भय फैल गया। दमन-नीति=दबाने की व्यवहार पद्धति। निर्दय=दया रहित। निष्ठुर=कठोर। सन्देश=समाचार। विश्वास=भरोसा। सम्बन्धी=रिश्तेदार। दुख का पहाड़ टूटना=बड़ी भारी विपत्ति या कष्ट का आना। माथे पर बल न होना=घबड़ाहट या चिन्ता के भाव को प्रकट करने वाली रेखा का मस्तक पर दिखलाई न देना। अपराध=गलती, अनीति। कानून=नियम। प्रतिरोध= उल्लंघन, तोड़ना। पाटलिपुत्र=वर्तमान पटना नगर। चमक-दमक=शोभा, सजावट, ठाट-बाट। फल भुगतना=किये हुए का परिणाम पाना। गुप्तचर= भेदिया, जासूस। अपरिचित=अनजान, नया व्यक्ति। घुल मिलकर बातें करना= बिना भेद रखे सच-सच कहना-सुनना। कदाचित्=शायद। प्रतीहारी=द्वार-पाल। राजकीय=राजा की-सी। रोम-रोम काँपना=भय से अङ्गों का हिलना-डुलना। शीतकाल=ठंड की ऋतु। आश्रय=कुछ समय के लिए निवास, शरण। सम्राट=राजाओं का राजा। हृदय को स्थिर कर=शान्त मन से। अन्यथा=नहीं तो। स्वतन्त्रता=स्वच्छन्दता, आजादी, बिना भय या रुकावट के। प्रमाण=सबूत, सत्यता। प्रातःकाल=सवेरा। न्याय मन्त्री=न्याय या फैसला करने वाले मन्त्री अथवा सचिव। अधिकार=कब्जा, शासन सम्बन्धी स्वीकृत सुविधायें। अधीन=अधिकार में। उत्तरदायित्व=जिम्मेदारी, जवाब-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देही। हत्या=वध, जान से मारना। राज-मुद्रा=राज्य-चिन्ह या निशान, राज्य या राजा की वह मोहर जो राजकीय पत्रों आदि पर छापी या अङ्कित की जाती है। सफल=कामयाब, कार्य, उद्देश्य या प्रयत्न को पूरा करना। शासक=राज्य या शासन सँभालने वाला। सिद्ध=पूरा, सत्य।

इस समाचार से.........मृत्यु का सन्देश है।

प्रस्तुत पंक्तियाँ प्रसिद्ध कहानीकार पं० सुदर्शन द्वारा रचित 'न्याय-मन्त्री' नामक कहानी से ली गयी हैं। ब्राह्मण शिशुपाल से कई प्रश्न करने के बाद आदर-सत्कार से खुश और उसकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर परदेशी लौट गया। दूसरे दिन अशोक के दरबार में उपस्थित होने के लिए समाचार मिला। उसका गाँववालों तथा शिशुपाल के घर के लोगों पर जैसा प्रभाव पड़ा उसी का वर्णन लेखक ने इस पद्यांश में दिया है।

शिशुपाल के राज-दरबार के निमन्त्रण के समाचार से गांव भर के लोग भयभीत हो गये और चारों ओर शीघ्र ही आतंक छा गया। वे दिन महाराज अशोक के राज्य-शासन के प्रारम्भिक दिन थे और नया-नया शासन सँभालने के कारण वे प्रजा को सख्ती से दबाने की पद्धति का व्यवहार अपना रहे थे। उस समय सम्राट अशोक स्त्री तथा ब्राह्मण का बिना विचार किये उनको तक अपराधी होनेपर प्राणदण्ड दे देते हैं। दण्ड देने में वे उस समय ऐसे दया-रहित और कठोर थे। उन दिनों प्रथा के अनुसार स्त्रियों और ब्राह्मणों को मृत्युदण्ड नहीं दिया जाता था, किन्तु उनकी कठोरता का विचार करते और सोचते ही अच्छा-से-अच्छा वीर भी भयभीत हो जाता था, उस डर से ही उसके प्राण निकल गये हों, ऐसा मालुम पड़ता था। गाँव वालों ने समझा कि शिशुपाल को राज-दरबार में जाकर हाजिर होने के लिए समाचार नहीं मिला है बल्कि वह मृत्यु का निमन्त्रण है। वहाँ जाने पर वे अवश्य ही मृत्यु का दण्ड पावेंगे यह गाँव वालों का पक्का विचार था।

परन्तु शिशुपाल के माथे पर...........पाटलिपुत्र की ओर चले।

राजधानी पाटलीपुत्र में उपस्थित होने के समाचार से शिशुपाल के जीवन की चिन्ता के कारण गाँववालों को भय हुआ किन्तु शिशुपाल के हृदयपर जैसा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अमर हुआ उसी का वर्णन इन पंक्तियों में किया गया है। पं० सुदर्शन की कहानी 'न्याय-मन्त्री' में इन पंक्तियों का प्रसंग उसी से सम्बन्धित है।

शिशुपाल के सम्बन्धी मृत्यु की आशंका से रोने लगे। लोगों ने इस विपत्ति के समय उन लोगों को स्थिर और शांत किया, किन्तु शिशुपाल अपनी मृत्यु की आशंका से जरा भी भयभीत न थे। उन्होंने हृदय और मन में मृत्यु का भय और विचार का अनुभव ही न किया और न भय के भाव को प्रकट करने वाली कोई रेखा या सिकुड़न उनके मस्तक पर दिखाई दी। उन्होंने कहा कि मैंने कोई गलती ही नहीं की न राज के किसी कानून को मानने से इनकार ही किया है। ऐसी हालत में मुझे मृत्यु का दण्ड मिलेगा, इस प्रकार का प्रश्न या विचार तो उठता ही नहीं। राजा ऐसा हो ही नहीं सकता कि वह इतना अत्याचार करने वाला और बुद्धिहीन हो कि विना कसूर किसी ब्राह्मण को कष्ट देने और सताने का काम करे। इस बात में मेरा पूरा विश्वास है। गरीबी की तकलीफें शिशुपाल झेल रहे थे और उस कष्टमय जीवन में भी एक के बाद एक कष्ट और मुसीबत के लगातार आने पर भी वे उन कष्टों के बीच इस तरह बिना भयभीत और दृढ़ होकर जीवन व्यतीत कर रहे थे। जिस प्रकार बार-बार लहरों का भयंकर आक्रमण होने पर भी समुद्र में चट्टान दृढ़, शान्त और अटल रूप से खड़ी रहती है। चट्टान की तरह इस मुसीबत से उनके मन की शान्ति में अन्तर नहीं आया। अपने पुत्र और स्त्री को तरह-तरह के शब्दों से धीरज बँधाकर और उनकी घबड़ाहट को दूर करके शिशुपाल राजधानी पाटलिपुत्र की ओर रवाना हुए।

आपने कहा था कि........................आप तैयार हैं।

प्रस्तुत पंक्तियाँ 'न्याय-मन्त्री' नामक पाठ से ली गयी हैं। इसके लेखक सुप्रसिद्ध कहानीकार पण्डित सुदर्शन हैं। निमन्त्रण का समाचार पाकर शिशुपाल राजा अशोक के राजदरबार में पहुँचे और अशोक को देखकर चकरा गये; क्योंकि वे वही परदेशी थे जो पिछली रात उनके यहाँ आश्रय पा चुके थे। परदेशी के सामने उन्होंने कई बातें कही थीं। यह प्रसंग उसी समय का है।

सम्राट अशोक ने शिशुपाल से कहा कि तुमने कल रात कहा था कि यदि

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मुझे राज्य के प्रबन्ध और न्याय करने का मौका प्राप्त हो जाय तो मैं इतने अच्छे ढंग से इन्तजाम और अपराध तथा उसके फैसलों का कार्य करूँ कि मेरे कार्य और न्याय करने की धूम चारों ओर मच जाय। मैं उत्तम फैसला देने के कारण चारों ओर प्रसिद्ध हो जाऊँ। तुम्हारे उस कथन के शब्दों तथा उससे सम्बन्धित कार्यों की मैं जाँच करना चाहता हूँ। मेरी इच्छा है कि मैं इसका पता पाऊँ कि तुम्हारे शब्दों और कार्यों में कितनी समानता है। क्या क्या मेरी इस जाँच को शीघ्र ही अवसर देने के लिए आप राजी हैं।

एक मास व्यतीत ....कबूतरी की नाईं चारों ओर देखा।

शब्दार्थ—व्यतीत होना=बीतना। प्रबन्ध=इन्तजाम। धूम मचाना=प्रसिद्ध होना, फैल जाना। जादू डाल देना=आश्चर्य जनक कार्य करना या कार्य द्वारा अद्भुत् प्रभाव डालना। वश=अधीन, कब्जे में। प्रतीत=मालूम। अवस्था=हालत, स्थिति। अन्धा और बहरा=न किसी छोटे-बड़े को देखने और न किसी की कुछ बात को सुनने वाला जिससे सत्य पर किसी तरह का दबाव पड़े। सूरत=शकल, अमीर-गरीब या छोटा बड़ा। सिफारिश=अनुरोध। शिक्षाप्रद=सीख, नसीहत या शिक्षा देने वाला। आकाश-पाताल का अन्तर=बहुत अधिक अन्तर। भवन=सुन्दर मकान। दस्तक देना=खटखटाना, आवाज देना या पुकारना। दरीचा=खिड़की, झरोखा। परवाह=हर्ज, नुकसान। बलात्कार=जबरदस्ती कोई काम कराना। आक्रमण=हमला, प्रहार। नियत—नियुक्त करना, किसी खास काम पर लगाना। मिट्टी में मिलाना=नष्ट या बरबाद करना, जान से मारना। प्रण=प्रतिज्ञा, किसी काम को करने का दृढ़-संकल्प। प्राण=जीवन, चेतना। रुधिर=रक्त, खून। अन्तिम=आखिरी। बिन्दु=बूँद। शेष=बाकी। कर्तव्य=उचित कार्य। पीछे न हटना=भागना। सुना-अनसुना करना=ध्यान न देना, चित्त में किसी बात का न लाना। वार=मार, प्रहार, चोट, हमला। लहू सूख जाना=जड़ हो जाना, प्राणों के न रहने का मिथ्या अनुभव होना, बुरी तरह भयभीत होना। हाथ के तोते उड़ना=बहुत घबड़ा जाना, सिट-पिटाना। मर्म स्थान=शरीर का कोमल अङ्ग। घर-घर में चर्चा होना=प्रत्येक घर में बातचीत का विषय

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बनना। हैरान=तङ्ग, परेशान। आतङ्क=भय। जीवन और मरण का प्रश्न=सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात, विषय या समस्या। मामला=घटना। दिन-रात एक कर देना=दिन-रात, हर समय चौबीस घंटे किसी काम में लगे रहना। आँखों से नींद उड़ जाना=चैन और शान्ति न मिलना। घातक=हत्यारा, मारने-वाला। कसर उठा न रखना=सब तरह से पूरी-पूरी कोशिश करना। असफलता=सिद्धि या सफलता न मिलना। क्रोधाग्नि—गुस्से की गर्मी या प्रबल भावना। प्रज्वलित करना=भड़काना, उभाड़ना या तेज करना। दावा करना=अधिकारपूर्ण कोई बात कहना, जोर देकर कुछ कहना। यत्न=कोशिश, प्रयास। आँखों से आग की चिनगारियाँ निकलना=गुस्से के कारण आँख का गर्म या लाल होना। तङ्ग आना=थक जाना, परेशान होना। अवधि=समय, सीमा, निर्धारित या निश्चित किया हुआ समय। फाँसी=प्राण दण्ड, मृत्यु की सजा। हलचल मचना=सनसनी फैलना, अधीरता, घबड़ाहट आदि का फैलना, दौड़-धूप होना। लोक-प्रिय=जनता के प्यारे। धाक बँधना=प्रभाव जमना या स्थापित होना। बाल बाँका न होना=कुछ भी नुकसान न होना, जरा-सी भी हानि न होना। उत्सुकता=आकुल इच्छा, उत्कंठा, किसी कार्य में विलम्ब या देरी न सहकर उसमें लगने या तत्पर होने का भाव। लीन=तन्मय, भूले हुए, सुधबुध खोकर लगे हुए। घने=अत्यधिक आबादी वाले, बहुत बसे हुए। निस्तब्धता=नीरवता, शान्ति। आशा की एक किरण चमकना=कुछ-कुछ या जरा-सी आशा दिखाई देना। चुभती हुई=पैनी, पक्की, कुछ खोजने या जाँचकरने में तेज। तिलमिला कर=व्याकुलता से, कष्ट की व्यथा और घबड़ाहट के साथ। मृत प्राय=निर्जीव सी, प्राण रहित-सी, चेतना रहित। प्राण आ जाना=सजीवता, चेतना या स्फूर्ति का बढ़ जाना। धैर्य=धीरज। आचरण=चाल-चलन। उद्यत=तैयार, प्रस्तुत। सहमी हुई=डरी हुई, लज्जा और भय के कारण सिकुड़ी हुई।

न्याय-मन्त्री के न्याय........................अन्तर पड़ गया।

यह गद्यांश प्रसिद्ध और श्रेष्ठ कहानीकार पं० सुदर्शन की न्याय-मंत्री नामक कहानी से लिया गया है। ब्राह्मण शिशुपाल को न्याय-मन्त्री का कार्य सँभालते

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एक मास हो गया। शिशुपाल के प्रबन्ध और न्याय का वर्णन इन पंक्तियों किया गया है प्रसङ्ग का विषय उसी से सम्बन्धित है।

एक ही मास के अपने कार्य की कुशलता, फैसलों का निर्णय, छान-बीन तथा इन्तजाम की सुन्दरता के कारण नगर में सुख-शान्ति स्थापित हो गयी। लोगों के बीच वह प्रशंसा और प्रसिद्धि का पात्र वन गया। लोगों के मन के ऊपर न्याय-मन्त्री ने आश्चर्यजनक प्रभाव डाला। वे वदल गये उनकी स्थिति अच्छी हो गयी और यह सब इतने कम समय में हुआ कि मालूम पड़ता है जैसे यह सब जादू की तरह वदल गया हो। सँपेरे की बीन की ध्वनि सुनते ही साँप उसके कब्जे में होकर उसके इशारे पर उसकी इच्छा के अनुसार नाचने-झूमने का कार्य करता है तथा बीन के वंद करने पर पिटारी में चला जाता है। दूसरे शब्दों में उसके अधिकार में रहकर उसी के अनुसार जैसा कार्य करता है ठीक उसी प्रकार न्याय-मन्त्री के वश में नगर के चोर डाकू हो गये थे और उन्होंने न्याय-मन्त्री की इच्छा के अनुसार चोरी करना और डाका डालना छोड़ दिया था। नगर में चोरियाँ और डाका पड़ना बन्द हो गया था अतः लोग चोरों और डाकुओं के भय के कारण ताला नहीं लगाते थे; क्योंकि चोरियों और डाकों से उनके धन और सम्पत्ति के लुटने आदि का भय ही जाता रहा और घर में ताला लगाना व्यर्थ हो गया था। न्याय करने में शिशुपाल छोटे-बड़े, गरीब-अमीर, जनता-सरकारी अधिकारी आदि को नहीं देखते थे और न किसी की ऐसी सिफारिश या अनुरोध ही सुनते थे जिससे न्याय पर कोई दवाव पड़े। वे बड़ी कठोरता से दूध का दूध और पानी का पानी कर देते थे। न्याय के सम्बन्ध में कोई उनसे अनुचित कार्य नहीं करा सकता था। वे केवल अनुचित बात या अपराध के लिए उसी के अनुसार दण्ड देने की बात को छोड़कर और कुछ न जानते थे और उनका दण्ड इस प्रकार होता था कि अपराधी को उससे शिक्षा मिले और वह स्वयं अपराध करना छोड़ दे। नगर की पहले की हालत और उनके शासन के समय का हालत में बहुत अधिक अन्तर पड़ गया है।

राजधानी में आतंक..पता न लगा।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रस्तुत गद्यांश 'न्याय-मन्त्री' नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक प्रसिद्ध कहानीकार पं० सुदर्शन हैं। उस दिन रात को एक अमीर के हाथों एक पहरेदार की हत्या हो गयी जिसका समाचार दूसरे दिन सवेरे नगर के प्रत्येक घर में फैल गया और लोग परेशान और भयभीत हुए। इन पंक्तियों में लोगों की परेशानी और राजकर्मचारियों की खोज तथा उसकी व्यर्थ चेष्टा का उल्लेख किया गया है।

पहरेदार की हत्या के समाचार से राजधानी पाटलिपुत्र के लोगों में चारों ओर भय का भाव भर गया। पुलिस विभाग के अधिकारी उस घटना तथा अपराधी की छानबीन करने और उसका पता लगाने के लिए तत्परतासे दौड़-धूप कर रहे और नगर के कोने कोने में चक्कर मार रहे थे उससे ऐसा मालूम होता था जैसे अपराधी का खोजना उनके जीवन का सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न हो जिसको किए बिना उनका जीना और निर्वाह न हो सकता हो। न्याय मन्त्री शिशुपाल ने भी बिना रुके चौबीसों घंटे उस घटना और अपराधी का पता लगाने में व्यतीत कर दिए। जब से उन्होंने शासन सँभाला था तब से राज्य में इस प्रकार की कोई हत्या नहीं हुई थी। यह एक नई बात थी। उनको जरा देर के लिए भी सुख और शान्ति न मिली वे सो भी नहीं सकते थे और उन्हें खाना न रुचता था। उन्होंने अपराधी और हत्यारे की खोज का पता लगाने की हर प्रकार से पूरी पूरी कोशिश की, किन्तु सब व्यर्थ हुआ, वे कुछ भी जानकारी प्राप्त न कर पाए।

दूसरे दिन दरबार में तिल धरने को..............निरुत्तर हो गये।

शब्दार्थ—तिल धरने को स्थान न होना=कहीं पर बहुत अधिक व्यक्ति या वस्तु के कारण खाली जगह न रहना, किसी स्थान का ठसा-ठस भरे रहना। निर्णय=निपटारा, फैसला। अशान्ति=हलचल, चंचलता। पेश करना=उपस्थित या प्रस्तुत करना। विरोधी=विपरीत, भिन्न, एक दूसरे की उलटी। संग्राम=युद्ध। प्रतीत=मालूम, प्रकट। संकल्प=निश्चय, अटल विचार। लक्ष्य करना=सम्बोधित करना। इशारा=संकेत, इङ्गित। निस्तब्धता=शान्ति, नीरवता। चेहरा लाल होना=क्रोध के कारण मुख पर लाली आना। अग्निकण=

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गर्म चिनगारियाँ। साहस=हिम्मत। दोहराना=फिर से कही हुई बात कहना। पुतली की नाईं=गुड़िया की तरह, मशीन की तरह, अनिच्छा से। दरबारी=राज्य के कर्मचारी। साँस रुक जाना=साँस का ठीक और स्वाभाविक रूप से न आना-जाना। उपस्थित=हाजिर। सारा नगर=नगर के सब या अधिकांश लोग। राजकुल से होना=राजा के कुल का या राज्य घराने से सम्बन्धित होना। जँगला=कटघरा, फैसले या न्याय के समय खड़े होने के लिए लकड़ी का बना हुआ छोटा सा घेरा। सम्मान=आदर, इज्जत, मान। आशङ्का=भय, खटका। न्यायासन=न्याय के पद। विराजमान=बैठे हुए, प्रतिष्ठित। न्यायरज्जु=न्याय का बन्धन। उद्दंड=उच्छृङ्खल, असभ्य। वध=मृत्यु दंड, फाँसी। सङ्केत=इशारा। सर्वथा=हर प्रकार से, बिलकुल। अनुचित=अवसर के अनुपयुक्त, गलत। शोरगुल=हल्ला, अशान्ति। ब्रह्मानन्द=ब्रह्म को प्राप्त कर लेने का आनन्द, अत्यधिक पवित्र और शुद्ध आनन्द। समुद्र=अपार राशि, खजाना। स्वर्ण=सोना। अग्नि=आग। कुन्दन=शुद्ध सोना, कञ्चन। कहने की लाज रख लेना=वचन के अनुसार कार्य करना। निछावर=बलिदान, श्रद्धा से अर्पित करना। उद्यत=तैयार, प्रस्तुत। उपेक्षापूर्वक=अवहेलना, तिरस्कार अथवा अनादर प्रदर्शित करते हुए। स्वर्ण-मूर्ति=सोने की मूर्त्ति या प्रतिमा। अवश्यम्भावी=निश्चित, अटल, ध्रुव। शास्त्र=विद्या, धार्मिक ग्रन्थ। रूप=शकल, सूरत, आकृति। चेतावनी=हिदायत, सतर्क या सावधान होने की सूचना। जय-जयकार=जय बोलने के शब्द या ध्वनि, विजय अथवा समृद्धि की कामना सूचक शब्द का उच्चारण। सिर झुकाना=हार मानना, न्यूनता, अल्पता अथवा तुच्छता स्वीकार कर लेना। सम्बोधित करना=पुकारना, उच्चारण करना। रोमाञ्च=आनन्द से रोंवों का उभर आना, पुलक। जिह्वा=जीभ। आँखें खोल देना=वास्तविक ज्ञान करा देना। निरुत्तर=उत्तर रहित, चुप जिससे किसी बात की स्वीकृति अथवा दूसरे के कथन का समर्थन हो।

इशारा महाराज की ओर........ ....साहस हो गया।

यह गद्यांश 'न्याय-मन्त्री' नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक हैं

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रसिद्ध कहानीकार पं० सुदर्शन। हत्यारे का पता लगाने के लिए अशोक ने तीन दिन का समय न्याय-मन्त्री को दिया था। तीसरे दिन दरबार में अपराधी को उपस्थित करने के लिए सम्राट ने कहा तो न्याय-मन्त्री ने धनवीर नामक एक उच्च अधिकारी को महाराज को गिरफ्तार कर लेने की आज्ञा दी। इन पंक्तियों का प्रसङ्ग उसी समय का है।

न्याय-मन्त्री ने हत्यारे को गिरफ्तार करने की आज्ञा देकर अपराधी की ओर संकेत किया। जिस संकेत का अभिप्राय महाराज अशोक को गिरफ्तार करना था। यह सुनकर देखकर राजदरबार के सारे लोग चुप और अवाक् रह गये इस कारण वहाँ का वातावरण एकदम नीरव और शान्त हो गया। कोई किसी का शब्द सुनाई नहीं पड़ता था अतः पूर्ण शान्ति फैल गयी। क्रोध उत्पन्न होने के कारण क्रोध की भावना से उनके मुख पर लाली फैल गयी। आग पर रखने से लाल ताँबे का रंग जैसा गहरा हो जाता है वैसे ही महाराज के चेहरे पर क्रोध की लाली गहरे और गाढ़े रंग के साथ प्रकट हो रही थी। महाराज के चेहरे पर ताँबे की तरह की स्वाभाविक लाली थी, किन्तु वह क्रोध के कारण तपे हुए ताँबे की तरह चटकीली हो गयी थी। उनकी आँखों से गर्मी इस प्रकार प्रकट हो रही थी मानों क्रोध के कारण उनकी आँखें अँगारे अथवा जलती हुई अग्नि हो और उससे चिनगारियाँ फूट रही हों। अत्यधिक व्याकुलता से पीड़ित होकर वे राजसिंहासन से उठ बैठे और उठते ही उन्होंने शिशुपाल को सम्बोधित करते हुए कहा कि रे ब्राह्मण, तू इतना निडर हो गया है कि इस प्रकार कहने की भी हिम्मत कर सकता है, डरता नहीं।

महाराज ने सिर झुका.........................कुछ नहीं बोल सकता।

ये पंक्तियाँ प्रसिद्ध कहानीकार पण्डित सुदर्शन द्वारा लिखित 'न्याय-मन्त्री' नामक कहानी से ली गयी हैं। हत्या के अपराध में महाराज को मृत्यु दंड का निर्णय सुनाकर बड़ी निडरता से न्याय-मंत्री ने न्याय का सच्चा और उचित आदर्श उपस्थित किया जिससे लोगों ने पहले शोरगुल और महाराज के मुख पर कुछ क्रोध का भाव आया, किन्तु बाद में महाराज पर उस न्याय की आज्ञा का जो प्रभाव पड़ा वही उस पद्यांश में दिया गया है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उस उचित न्याय के निर्णय और आज्ञा को सुनकर न्याय और न्याय-मंत्री के उन न्यायपूर्ण शब्दों के प्रति आदर को प्रकट करने के लिए सम्राट ने अपना सिर झुकाया। ब्रह्म की अखंड चेतना में मिल जाने पर जीव को जो उसका अंश है एक प्रकार के जिस महान् आनन्द का अनुभव होता है ठीक उसी प्रकार के शुद्ध और पवित्र आनन्द की अखंड-राशि का अनुभव महाराज को हुआ। वैसा आनन्द उनके हृदय में अपनी क्रीडा कर रहा था। उन्होंने सोचा कि न्याय-मन्त्री सोने के समान अमूल्य और श्रेष्ठ हैं तथा न्याय की विघ्न बाधाओं में कार्य करके वे और भी अधिक अमूल्य, श्रेष्ठ और महान हो गये हैं। जिस प्रकार मूल्यवान सोना आग में तपाए जाने पर और भी अधिक शुद्ध व सच्चा हो जाता है उसी प्रकार न्याय-मन्त्री का गुण और उनकी विशेषता बढ़ गयी है उनका अब अधिक सुन्दर रूप निखर आया है। उन्होंने एक दिन कहा था कि मेरा न्याय ऐसा होगा जिसको चारों ओर लोग प्रशंसा और आदर करते-करते थकेंगे नहीं, हर जगह उसी की चर्चा होगी। उनका वह कहना सत्य था। उन्होंने अपने उस वचन का पालन किया और उसे सत्य करके दिखा दिया। न्याय-मन्त्री उस प्रकार के व्यक्ति हैं। जिनको पाने पर देश के लोग गौरव का अनुभव करते हैं तथा देश का सम्मान बढ़ता है। न्याय-मन्त्री जैसे लोगों के लिए देश के लोग अपना शरीर और मन दे देने में भी अपना नुकसान नहीं समझते, किन्तु खुशी के साथ दे देने के लिए तैयार रहते हैं। किन्तु फिर उन्होंने एक अद्भुत ढंग से अपने झुके हुए सिर को उठाया। उस समय उनके मन में अपने सम्राट होने का विचार आया इस कारण अवहेलना और तिरस्कार की दृष्टि से फिर भी अपनी असमर्थता स्वीकृत करते हुए वे बोले कि मैं इस आज्ञा का किसी प्रकार भी अपमान या विरोध नहीं कर सकता।

यह मनुष्य नहीं.............................."न्याय-मन्त्री की जय।"

प्रस्तुत गद्यांश 'न्याय-मन्त्री' नामक पाठ से लिया गया है। विद्वान कहानीकार पंडित सुदर्शन इसके लेखक हैं। न्याय-मन्त्री ने स्वर्णमूर्ति मँगवा कर लोगों से उस स्वर्ण-मूर्ति को सम्राट के बदले में फाँसी पर लटकाने के लिए कहा;

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

क्योंकि ईश्वर के रूप राजा को दण्ड देने का अधिकार उन्हें न था। उन्होंने इसकी घोषणा की और लोग मुग्ध हो गये तथा उसका जो प्रभाव उन लोगों पर पड़ा, उसके सम्बन्ध में वे एक दूसरे से जो बातचीत करने लगे उसी का प्रसङ्ग इन पंक्तियों में है।

न्याय-मन्त्री के न्याय पर मुग्ध होकर लोग आपस में बातचीत करने लगे कि न्याय-मन्त्री में अद्भुत और असाधारण निडरता है; ऐसी निडरता मनुष्य में तो नहीं, किंतु देवता में ही पायी जा सकती है। आश्चर्य है न्याय-मन्त्री को किसी का भी भय नहीं, वे महान् से महान अपार बल वाले मनुष्य के सामने भी हार नहीं मानते। न्याय-मन्त्री अपने हृदय और बुद्धि से जो कुछ उचित, ठीक व सच्चा समझते हैं, उसी के अनुसार ठीक-ठीक न्याय करने में डरते नहीं। बिना रुके अटल भाव से ठीक-ठीक न्याय करने का कार्य उनका हृदय करवाता जाता है। न्याय-मन्त्री के स्थान पर यदि दूसरा कोई कार्य करता होता तो वह महाराज के प्रताप के सामने ठीक-ठीक न्याय न करता बल्कि डर कर हाथ जोड़ते हुए उनके प्रभाव के कारण अपने कर्त्तव्य का पालन न करता। परन्तु न्याय-मन्त्री ने अपराधी राजा को भी अपराधियों की तरह 'तुम' कहकर पुकारा है इस प्रकार सम्राट को कोई महत्त्व नहीं दिया। यह सब सोच विचार कर आनन्द से उन लोगों के रोएँ खड़े हो गये और उस विचित्र आनन्द के प्रबल वेग की अनुभूति से उनकी आँखों में आँसू छल-छला आये। हजारों लोगों ने अपने कण्ठ और जीभ से 'न्याय-मन्त्री की जय' इन जय-जयकार के शब्दों का भीषण शब्द गुञ्जित किया।

मित्रता

[पं० रामचन्द्र शुक्ल]

जीवन परिचय—साहित्य के सर्वश्रेष्ठ आलोचक, महान् निबन्धकार, प्रसिद्ध संपादक एवं कवि तथा हिन्दी भाषा के विद्वान् मर्मज्ञ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का जन्म संवत् १९४१ की शरद्पूर्णिमा के दिन बस्ती जिले के अगोना

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नामक ग्राम में हुआ था। इनके पूर्वज गोरखपुर जिले के भेड़ी नामक ग्राम के निवासी थे। बस्ती नगर की रानी ने इनके पिता पं० चन्द्रबली शुक्ल को अगोना में कुछ भूमि देकर अच्छा मकान बनवा दिया था। शुक्ल जी के पिता की नियुक्ति हमीरपुर जिले की राठ तहसील में सुपरवाइजर कानूनगो के पद पर हुई। शुक्लजी पिता के साथ ही रहते थे; अतः वहीं पर शुक्लजी का अध्ययन भी प्रारम्भ हुआ। हिन्दी की प्राचीन कविता के प्रेमी होने के साथ-साथ इनके पिता की रुचि अंग्रेजी तथा उर्दू-फारसी की ओर विशेष थी। इस कारण बालक शुक्ल को आठवीं कक्षा तक उर्दू-फारसी का अध्ययन करना पड़ा, किन्तु बचपन से ही हिन्दी के प्रति इनका प्रगाढ़ प्रेम था। स्कूल में हिन्दी की कक्षाओं में बैठकर हिन्दी पढ़ने में इन्हें बड़ा आनन्द मिलता था। कहते हैं अपनी इस रुचि के कारण तथा हिन्दी-पुस्तकों को पढ़ने के लिए इन्हें अपने पिता का विरोध भी करना पड़ा था। संवत् १९४९ में आपके पिता की बदली और सदर कानूनगो के पद पर मिर्जापुर में नियुक्ति हुई। शुक्लजी भी मिर्जापुर आकर जुबिली स्कूल में पढ़ने लगे। इसी समय इनकी माता का देहान्त हो गया। इनकी माता पवित्र विचारों वाली विदुषी महिला थीं और वे गोस्वामी तुलसीदास के वंश में उत्पन्न हुई थीं। शुक्लजी का विवाह सं० १९५३ में काशी के प्रसिद्ध विद्वान पं० रामफल ज्योतिषी की पुत्री से हुआ।

मिर्जापुर की प्राकृतिक-रमणीयता के दर्शन में इनका मन भूला रहता था। पं० विंध्येश्वरी प्रसाद जो संस्कृत के अध्यापक और इनके पड़ोसी थे, विद्यार्थियों को लेकर पहाड़ियों और वनों में भ्रमण करने के लिए प्रायः जाया करते थे। शुक्लजी भी उनके साथ जाते। इस प्रकार उनमें प्रकृति-निरीक्षण का चाव उत्पन्न हुआ। बाद में वे प्रायः इधर-उधर निकल जाते। प्रकृति का अपूर्व और अद्भुत आकर्षण उनके तन-मन और जीवन को पूर्णतः प्रभावित कर चुका था। उस रमणीयता और सौन्दर्य में वे मग्न और आत्म विभोर हो जाते।

सं० १९५५ में शुक्लजी ने मिर्जापुर के जुबिली स्कूल से मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण की और सं० १९५८ में 'लन्दन मिशन स्कूल' से स्कूल-फाइनल या एंट्रेंस की परीक्षा पास करने के पश्चात् आप प्रयाग की 'कायस्थ पाठशाला'

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

में एफ० ए० का अध्ययन करने लगे, किन्तु गणित में कमजोर होने के कारण उसे एक-दो माह में छोड़ कानून का अध्ययन प्रारंभ किया। कानून की परीक्षा में वे सफल न हो पाए और इस तरह आपकी शिक्षा का अंत हो गया।

पिताजी के प्रयास से आपको २०) मासिक की एक सरकारी नौकरी मिल गयी, किन्तु नायब तहसीलदारी के काम में आप का मन न लगा। सरकारी नौकरी अपमानजनक प्रतीत होने के कारण आपने एक दिन त्याग-पत्र दे दिया। शुक्ल जी को स्वाभिमान और आत्म-सम्मान बड़ा प्रिय था। आत्म-सम्मान की रक्षा और त्याग-पत्र की प्रतिक्रिया के रूप में शुक्ल जी ने 'ह्वाट हैज इंडिया टु डू' नामक लेख में अपने हृदय के भावों और विकारों को व्यक्त किया वह लेख 'इण्डियन रिव्यू' नामक अंग्रेजी-पत्र में प्रकाशित हुआ। इस लेख को पढ़कर मिर्जापुर के तत्कालीन कलेक्टर मि० विंदम ने इनके पिता से शुक्ल जी की शिकायत की जिससे वे भी इनसे नाराज हुए।

वेकार हो जाने पर घर और वाहर का वातावरण पूर्णतः इनके प्रतिकूल हो उठा। उदासीनता तथा प्रकृति-प्रेम के कारण ये खूब घूमने लगे। लोग इन्हें उपेक्षा की दृष्टि से देखने व घुमक्कड़ समझने लगे। इनके सामने अर्थ-कष्ट की समस्या आयी। अतः आपने मिर्जापुर के मिशन-स्कूल में २०) मासिक पर ड्राइंग-मास्टरी का कार्य आरम्भ किया। इस अध्यापन कार्य में शुक्ल जी का खूब मन लगता था और वे सन्तुष्ट थे।

शुक्ल जी बचपन से ही अध्ययन-प्रेमी थे। उन्होंने बचपन से ही उर्दू-फारसी तथा हिन्दी का ज्ञान बढ़ाया। साहित्य और मनोविज्ञान सम्बन्धी अंग्रेजी ग्रंथों का अध्ययन, मनन और चिन्तन किया। छात्र-जीवन में ही उन्होंने लेख, कविता, कहानी एवं नाटकों की रचना प्रारम्भ कर दी थी। अध्ययन-काल एवं पश्चात् भी अर्थ संकट के समय ये 'आनन्द-कादम्बिनी' नामक पत्रिका का संपादन-कार्य करते थे। इस प्रकार प्रारम्भ में ही इनमें प्रतिभा के बीज वर्तमान थे। उनका समुचित प्रस्फुटन और विकास नहीं हुआ था। इसी बीच ये काशी आये और पंडित केदार नाथ पाठक की प्रेरणा तथा इनकी योग्यता और प्रतिभा के कारण काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा ने 'हिन्दी-शब्द-सागर' के सम्पादन

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

का कार्य इन्हें सौंपा। बड़ी तत्परता से इन्होंने वह कार्य सँभाला और कुशलता पूर्वक उसका सम्पादन किया। यहीं से इनके साहित्यिक-विकास का महत्त्व और उसका सूत्रपात हुआ। यह घटना सं० १९६६-६७ की है। 'हिन्दी-शब्द-सागर' के सम्पादन से शुक्ल जी का महत्त्व बढ़ा तथा कई ग्रन्थों के सम्पादन का भार आपको सौंपा गया। 'तुलसी-ग्रन्थावली', 'जायसी-ग्रन्थावली' से और भी ख्याति बढ़ी तथा 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' आदि ने आपको सर्वश्रेष्ठ आलोचक प्रमाणित कर दिया। शुक्ल जी के हाथ में 'काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा पत्रिका' के सम्पादन का भार भी कई वर्ष तक रहा। उस समय उसका मासिक पत्रिका का रूप था। मनोविकारों से सम्बन्धित इनके लेख तथा अन्य साहित्यिक निबन्ध, 'बुद्ध-चरित' तथा 'हृदय का मधुर भार' आदि काव्य इसी काल की रचना हैं।

सभा के कार्यकर्त्ता शुक्ल जी के कार्य, प्रतिभा और प्रशस्ति से बाबू श्याम सुन्दर दास जो उस समय विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष थे तथा पं० मदन मोहन मालवीय अत्यधिक प्रभावित हुए और परिणाम स्वरूप हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी प्राध्यापक के पद पर आपकी नियुक्ति हुई। हिन्दी प्राध्यापक के रूप में भी शुक्ल जी बड़े योग्य और महत्त्वपूर्ण प्रमाणित हुए। बाबू श्यामसुन्दर दास के पश्चात् सं० १९९३ में आप हिन्दी विभाग के अध्यक्ष बना दिये गये।

बचपन से ही शुक्ल जी स्वाभिमानी, स्वावलम्बी और स्वच्छन्द प्रकृति के व्यक्ति थे। उनकी इसी चारित्रिक विशेषता और व्यक्तित्त्व ने उन्हें निरन्तर कर्मशील बनाये रखा। कठिन से कठिन स्थिति में वे बराबर अग्रसर होते रहे। वे हास्य-व्यंग और विनोद में बड़े पटु थे, प्रत्युत्पन्नमति और नीर-क्षीर विवेक की उद्‌भुत क्षमता उनमें थी। उनकी रचनाओं में स्थल-स्थल पर इसका आभास मिलता है। उनका मनन-चिन्तन और अध्ययन गम्भीर और व्यापक था। साहित्य में कठोर अनुशासन के कट्टर समर्थक और संस्थापक होते हुए भी शुक्ल जी की प्रकृति सरल और उदार थी। वे बड़े मिलनसार थे। पश्चिम की भाषा और साहित्य का अध्ययन कर हिन्दी में उसी प्रकार साहित्य के स्वरूप

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

का स्वस्थ निर्माण करते हुए भी वे अंग्रेजी भाषा व साहित्य की नकल के कट्टर विरोधी थे। उन्होंने भारतीय भाषा संस्कृति और साहित्य को उसकी ही प्रकृति और स्वाभाविकता के अनुसार मौलिक रखा है। साहित्य में वे 'बहुजन-हिताय' की भावना के समर्थक थे। प्रत्येक वर्ग और प्रत्येक व्यक्ति की स्वतन्त्रता की कामना करते थे फिर भी वहाँ तक जब तक कि समाज में विरोध या अव्यवस्था न आवे। यही कारण था कि वे ऐसे व्यक्ति और रचनाओं की कड़ी से कड़ी आलोचना करते थे, जिससे समाज की क्षति हो। विचारों में वे नवीन युग की चेतना से प्रभावित बुद्धिवादी व्यक्ति थे। बौद्धिक होने के कारण वे विकासवाद के सिद्धांत को मानते थे। तुलसी के राम उनके आदर्श थे किन्तु वे राम को उस तरह और उस कारण नहीं मानते थे जैसे तुलसी। राम को वे पूर्ण मानव के रूप में देखते थे और इसी कारण लोक-रक्षक राम उनके राम थे। वे कर्म-मार्ग के समर्थक थे। यह थी शुक्लजी की विचार-धारा जिसका जीवन और साहित्य में उन्होंने बराबर पालन किया था। शुक्ल जी में बैठा आलोचक भी इससे प्रभावित था।

शुक्ल जी को श्वास का रोग था और उससे पीड़ित होकर इस साहित्य महारथी की हृदय-गति सं० १९९७ माघ सुदी ६ रविवार की रात को बन्द हो गयी।

साहित्य-साधना—सम्पादक, निबन्धकार, आलोचक, इतिहास-लेखक, अनुवादक, कवि, कहानीकार के रूप में ही शुक्लजी नहीं आते, किन्तु साहित्य की सर्वाङ्गीण और महत्व पूर्ण देन के साथ-साथ उन्होंने हिन्दी भाषा के विचार से भी साहित्य की महान सेवा की है। शुक्ल जी का-सा भव्य व्यक्तित्व उनकी-सी प्रतिभा अन्य किसी लेखक में दिखाई नहीं पड़ती। उनकी प्रत्येक रचना, प्रत्येक वाक्य और प्रत्येक पंक्ति में भाषा और विचारों का गांभीर्य और उनकी प्रतिभा दृष्टिगोचर होती है। शुक्ल जी का महत्त्व सम्पादक, निबन्धकार, आलोचक और इतिहास-लेखक के रूप में चिरस्थायित्व है।

शुक्ल जी का सम्पादक जीवन 'आनन्द कादम्बिनी' के सम्पादक के रूप में हमारे सामने आता है। पश्चात् नागरी-प्रचारिणी-सभा में 'हिन्दी-शब्द-सागर',

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'तुलसी-ग्रन्थावली', 'जायसी-ग्रन्थावली' आदि का सफल सम्पादन बड़ी कुशल[ता] से आप ने किया। यहीं से सम्पादक के रूप की उनकी ख्याति हुई जो सम्पा[]दक की महान् साधना और कुशलता की निर्देशिका होकर प्रतिफलित हुई[।] किन्तु ग्रन्थ सम्पादक मात्र ही नहीं पत्र-सम्पादक के रूप में भी आपने अमूल्[य] सेवा की है। 'आनन्द कादम्बिनी' और 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' की सम्पाद[न] कुशलता उसका अच्छा उदाहरण है।

निबन्धकार के रूप में शुक्लजी हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ निबन्धकार प्रमाणित हो[ते] हैं, जिनमें मौलिकता, ज्ञान और मनन-चिन्तन का पूरा-पूरा समावेश मिलता है[।] निबन्ध का क्या स्वरूप हो, उसकी योजना, गठन, विचारों का प्रतिपादन औ[र] स्पष्टीकरण आदि जानना हो तो शुक्लजी के निबन्ध प्रस्तुत किए जा सकते हैं[।] इनके निबन्ध भावात्मक और समीक्षात्मक दोनों कोटि के हैं। पहली कोटि [के] निबन्धों में लोभ-प्रीति, उत्साह, भय आदि मनोविकारों की सुनियोजित विवेचन[ा] प्रस्तुत हुई हैं जो व्यक्तिगत उदाहरणों से रोचक और अधिक बुद्धिग्राह्य है[।] समीक्षात्मक निबन्धों में व्यावहारिक और साहित्य के सैद्धान्तिक, दोनों प्रकार [के] निबन्ध पाये जाते हैं। 'तुलसी का भक्तिमार्ग', 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र', 'मानस [की] धर्म भूमि' आदि निबन्ध व्यावहारिक समीक्षा पर प्रस्तुत किये गये हैं जब [कि] 'कविता क्या है', 'काव्य में अभिव्यंजनावाद', 'काव्य में प्राकृतिक दृश्य', 'काव्[य] में लोक मंगल की साधना' 'रहस्यवाद' आदि निबन्ध उनकी सैद्धान्तिक समीक्[षा] का रूप प्रस्तुत करते हैं। सभी निबन्धों में एक शृङ्खला, व्यक्तिगत उदाहरणों [से] स्पष्टता, कहावतों, मुहावरों व्यंग्य आदि से रोचकता लक्षित होती है। अपने विचारों को वे प्रारम्भ में सूत्र-रूप में लेकर चलते हैं और उसकी व्याख्या [के] साथ-साथ किसी एक विषय के सम्बन्ध में कही हुई बातों को निरन्तर समेट[ते] हुए उसको क्रमबद्ध कर भावों और विचारों में पिरोते हुए चलते हैं। आरम्भ में लम्बी-चौड़ी भूमिका या कहीं अनावश्यक प्रसंग उनमें नहीं मिलता। निबन्धों की भाषा-शैली विषय के अनुरूप होती है। इस प्रकार निबन्धों द्वारा जो अक्षय भण्डार उन्होंने साहित्य को दिया है वह मौलिक और अद्वितीय है।

आलोचक के रूप में भी शुक्ल जी की समता किसी अन्य से नहीं हो

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सकती। हिन्दी में द्विवेदीजी के प्रयास से आलोचना का प्रचार और विकास साहित्य में हो चला था, किन्तु शुक्लजी ने साहित्य में आलोचना का एक सुन्दर मानदण्ड प्रस्तुत किया। उन्होंने जो स्वरूप साहित्य समीक्षा के क्षेत्र में प्रस्तुत किया वह संस्कृत के लक्षण-ग्रंथ और पश्चिमी आलोचना के सिद्धान्तों के मनन-चिन्तन और गम्भीर विवेचन के पश्चात् स्थिर किया गया था। उनकी आलोचना व्यावहारिक और सैद्धान्तिक, दो प्रकार की होती थी। व्यावहारिक आलोचना में लोक-पक्ष का विचार, रचना सौन्दर्य और सौष्ठव का परीक्षण-प्रदर्शन बड़े तार्किक और उचित ढंग पर हुआ है। साहित्य के भिन्न-भिन्न अंगों और रचनाओं पर विवेचनात्मक या सैद्धान्तिक-समीक्षा की गयी है वह बड़ी विद्वतापूर्ण तथा उनके व्यापक ज्ञान की सूचक है। अतः उनकी आलोचना राग-द्वेष से रहित और महत्त्वपूर्ण है, जिनका साहित्य में निश्चित मूल्य है।

शुक्लजी के 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' उनके इतिहासकार की महान् सेवा का महत्त्वपूर्ण उदाहरण है। शुक्ल जी के इतिहास के पहले के इतिहास अपूर्ण, भ्रामक एवं अप्रामाणिक थे, उनमें कृति और कृतिकार का मूल्याङ्कन आदि न हो पाया था। शुक्लजी ने ही सर्वप्रथम इस आवश्यकता की पूर्ति की। उन्होंने एक निश्चित कसौटी को लेकर बड़े वैज्ञानिक और सुनियोजित ढंग से देश की सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और साहित्यिक प्रवृत्तियों का परिचय भाषा के भिन्न-भिन्न विकास, साहित्य की परम्परा का विकास और परिचय देते हुए काल-विभाजन, प्रत्येक काल के कृतिकार और उनकी कृतियों का उल्लेख एवं विशेषता के साथ तत्सम्बन्धिनी विवेचना प्रस्तुत की है। साहित्य की परम्परा, विभिन्न वादों तथा रचनाओं एवं रचनाकारों का उल्लेख-मूल्याङ्कन तटस्थ और निरपेक्ष रहकर हुआ है। इस प्रकार प्रामाणिकता, विचारों और विषय की व्यापकता तथा सर्वाङ्गीण दृष्टि के प्रसार के कारण शुक्लजी का इतिहास अपूर्व और अद्वितीय है। उसके द्वारा हिन्दी की महान् सेवा हुई है जो अपना स्थायी महत्त्व रखती है।

अनुवादक के रूप में शुक्लजी ने ऐतिहासिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक और शिक्षात्मक विषयों की बंगला और अंग्रेजी भाषाओं की रचनाओं

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

व लेखों को चुना था। गम्भीर विषय को भी स्पष्ट अनूदित करने में आ चतुर थे फिर भी अधिक लोकप्रिय न हुए। अनूदित रचनाओं में बुद्धचरित मेगस्थनीज का भारतवर्षीय वर्णन, शशांक, आदर्श जीवन आदि प्रसिद्ध हैं।

बाल्यावस्था से ही शुक्लजी छोटी-मोटी कविताएँ किया करते थे। प्रकृ सम्बन्धी कुछ सरल-सुन्दर रचनाएँ भी आपने की। बुद्धचरित का पद्यात्मक अनु वाद करके काव्य-कुशलता तथा भाषा की सरलता का सुन्दर उदाहरण आपने प्रस्तुत किया। आपकी 'ग्यारह वर्ष का समय' नामक एक कहानी सं० १९६ में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई थी, किन्तु कहानीकार और कवि के रूप में आपक विकास और ख्याति नहीं हुई।

शुक्लजीकी साहित्य-सेवा भाषा के हित-चिन्तक और महान् चिंतक रूप में स्मरणीय रहेगी। उनके साहित्य में भाषा का स्वस्थ-रूप तो प्रकट हु हुआ साथ-साथ उन्होंने समय-समय पर भाषाओं और लेखों द्वारा भाषा रक्षा के निमित्त गम्भीर कदम उठाया। वे भाषा को संस्कृत शब्दों और पदों युक्त तथा अपनी स्वाभाविकता से स्वस्थ और सजीव देखने के पक्षपाती थे विदेशी शब्द चाहे उर्दू के हों चाहे अंग्रेजी के, किसी भी अन्य भाषा के अना वश्यक और अप्रचलित शब्दों से युक्त अथवा लादी हुई हिन्दी भाषा या उस लेखकों के वे कट्टर और समर्थ विरोधी थे। ऐसे प्रभाव से उन्होंने भाषा बचाया और हिन्दी की रक्षा के लिए भाषण दिए और लेखों में विरोध व्य किया। इसके अलावा आपने कई लेखकों की रचनाओं की भूमिकाएँ भी लिखी हैं, जो आलोचना की दृष्टि से बड़ी महत्वपूर्ण हैं।

अपनी साहित्य-साधना के कारण शुक्लजी हिन्दी-साहित्य के मान्य-विद्वा और स्थायी ख्याति के पात्र प्रमाणित हुए। लोग आज भी उनका लोहा मानते हैं। इसी कारण विद्वानों ने हिन्दी साहित्य-सम्मेलन की चौबीसवीं साहित्य-परि षद के अध्यक्ष-पद पर आपको मनोनीत किया था। आपकी साहित्यिक देन के कारण ही कोटि-कोटि हिन्दी प्रेमी और विद्वान आज भी श्रद्धानत हैं।

रचनाएँ—शुक्लजी की समस्त रचनाएँ तीन प्रकार की हैं जो सम्पादित मौलिक और अनूदित हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सम्पादित—भ्रमर-गीत-सार, जायसी-ग्रन्थावली, तुलसी-ग्रंथावली तथा हिन्दी-शब्द-सागर ।

मौलिक ग्रन्थ—

निबन्ध—चिन्तामणि प्रथम तथा द्वितीय भाग, त्रिवेणी, सूरदास, तुलसीदास, काव्य में रहस्यवाद, रस-मीमांसा ।

इतिहास—हिन्दी-साहित्य का इतिहास ।

अनूदित—राज्य-प्रबन्ध-शिक्षा, आदर्श-जीवन, विश्व-प्रपञ्च, मेगस्थनीज का भारतवर्षीय वर्णन, बुद्ध-चरित । कल्पना का आनन्द, शशाङ्क आदि ।

भाषा शुक्लजी की भाषा विशुद्ध खड़ी बोली है, जिसका बड़ा ही परिष्कृत, परिमार्जित और सुसंस्कृत रूप इनकी रचनाओं में दृष्टिगोचर होता है । प्रौढ़ एवं साहित्यिक होने के साथ-साथ यह सबल भी है । लेखक का विशाल ज्ञान, गम्भीर चिन्तन और मनन तथा उसके व्यक्तित्व की छाप उनकी भाषा में भी है । साहित्य की भाषा में रोचकता और गतिशीलता यदि कहीं दृष्टिगोचर होती है, तो वह उनकी ही भाषा में बड़े कौशल के साथ दिखाई देती है । गूढ़ से गूढ़ विषय को भी आपने रोचक और स्पष्ट ढंग से व्यक्त किया है, जिससे चमत्कार और आकर्षण बराबर बना रहता है । विषय के अनुरूप भाषा लिखने में आप पटु हैं । आपकी भाषा में निरर्थक शब्दों का व्यवहार नहीं हुआ । पदों और वाक्यों में ऐसे शब्दों का उचित ढंग से व्यवहार हुआ है कि एक भी शब्द हटाने या परिवर्तन कर देने से कथन का प्रभाव नष्ट हो जाता है । आप भाषा-मर्मज्ञ और भाषा शास्त्र के अच्छे विद्वान थे । गूढ़ एवं विवेचनात्मक विषयों, सैद्धान्तिक और दार्शनिक कथन और विचारों के प्रतिपादन में भाषा अपेक्षाकृत गम्भीर और क्लिष्ट है । संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग बराबर होता है और अंग्रेजीके शब्द जैसे स्कूल, मास्टर, परेड आदि प्रचलित शब्दों तथा उर्दू के शब्दों और मुहावरों का व्यवहार बराबर हुआ है, किन्तु उर्दू शब्दों और मुहावरों का प्रयोग कथन को व्यंग्यात्मक एवं तर्क को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए ही अधिक हुआ है । आपके निबन्धों में व्यावहारिक भाषा का सरल-स्वाभाविक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तथा दूसरे प्रकार का चटपटा एवं व्यंग्यात्मक रूप भी स्थल-स्थल पर पाया जाता है।

संक्षेप में भावानुकूलिनी भाषा का रूप ही आपकी भाषा है जो कहीं प्रौढ़ साहित्यिक गम्भीर और क्लिष्ट रूप में तो कहीं व्यावहारिक और सरल बोल-चाल के रूप में तो कहीं उर्दू के शब्दों मुहावरों से युक्त व्यंग्यात्मक और चटपटे रूप में व्यवहृत हुई है। भाषा के उदाहरणों से यह और भी स्पष्ट हो जायगा।

प्रौढ़ एवं गम्भीर—

"जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द-विधान करती आयी है, उसे कविता कहते हैं।"

—'कविता क्या है?'

"धर्म की रसात्मक अनुभूति का नाम भक्ति है, यह हम कहीं कह चुके हैं। धर्म है ब्रह्म के सत्स्वरूप की व्यक्त प्रवृत्ति, जिसकी असीमता का आभास अखिल-विश्व-स्थिति में मिलता है।"

—'मानस की धर्म भूमि'

सरल और व्यावहारिक—"कोई मनुष्य किसी दुष्ट के नित्य दो-चार प्रहार सहता है। यदि उसमें क्रोध का विकास नहीं हुआ है, तो वह केवल आह-आह करेगा, जिसका उस दुष्ट पर कोई प्रभाव नहीं। उस दुष्ट के हृदय में विवेक, दया आदि उत्पन्न करने में बहुत समय लगेगा।"

—'क्रोध'

उर्दू मिश्रित तथा व्यंग्यात्मक—"वहाँ प्रेमी जीते जी यार के कूचे में अपनी कब्र बनवाते हैं, उस कूचे के कुत्तों के नाम अपनी हड्डियाँ वक्फ करते हैं और बार-बार मरकर अपना हाल सुनाया करते हैं।

—'उर्दू की शायरी के सम्बन्ध में'

शुक्लजी की शैली—शुक्ल जी का व्यक्तित्व गंभीर और मौलिक था। व्यक्तित्व की गंभीरता और मौलिकता की छाप शुक्लजी की शैली पर पूर्ण रूप

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

से पड़ी है। अपनी शैली के निर्माता और शैलीकार शुक्लजी स्वयं हैं। क्या आलोचना और क्या निबन्ध साहित्य की आधार शिला अर्थात् गद्यशैली का स्वरूप आपने प्रस्तुत किया है। आप की गद्य-शैली में सौष्ठव, सौन्दर्य, प्रभावात्मकता, भाव-व्यंजकता तथा तर्कपूर्ण विषय का प्रतिपादन पाया जाता है। एक ही लेखक की दो प्रकार की भिन्न गद्य रचना में शैली भी भिन्न हो जाती है। आपके निबन्धों और आलोचना की शैली भिन्न है। वैयक्तिकता की छाप, व्यंग्य-विनोद की प्रवृत्ति, आदि दोनों प्रकार की गद्य रचनाओं में पायी जाती है। आप की शैली भी विषय के अनुरूप चलती है। कम से कम और सार्थक शब्दों में कथन को स्पष्ट कर देने का आप का ढंग निराला है। आप अपने विशाल ज्ञान-भांडार और व्यापक अध्ययन-भ्रमण की जानकारी से उदाहरण और उद्धरण प्रस्तुत करते चलते हैं। विचारों और वाक्यों में क्रमवद्ध शृंखला स्थापित होती रहती है। एक वाक्य या विचार से अन्य वाक्यों और विचारों को एक सूत्र में पिरोते चलते हैं। इससे पाठकों को भ्रम नहीं होता और शृंखला टूटती नहीं। यदि शृङ्खला को जोड़ने वाला एक भी वाक्य अलग कर दिया जाय तो विचार विच्छिन्न और वाक्य पृथक हो जाय। अनुच्छेदों में एक-एक विचार प्रस्तुत होता है।

शुक्लजी की गद्य-शैली बड़ी भव्य और सुनियोजित है। इसे हम तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं—भावात्मक आलोचनात्मक और गवेषणात्मक।

भावात्मक शैली—मनोविकारों पर लिखे हुए आपके सारे निबन्ध इसी शैली के अन्तर्गत आते हैं। निबंधों की भावात्मक शैली के वास्तविक और आदर्श जन्मदाता शुक्लजी ही हैं। इस शैली में सरल संस्कृत के शब्दों एवं प्रचलित मुहावरों से युक्त व्यावहारिक भाषा और छोटे-छोटे वाक्यों का प्रयोग हुआ है। सूत्र रूप में मनोविकारों की परिभाषा, सुन्दर और स्पष्ट व्याख्या का बड़े रोचक ढंग से समावेश हुआ है। मनोविकारों के विश्लेषण में व्यंग्य का चुटीलापन, उदाहरणों तथा भिन्न-भिन्न मनोविकारों में तुलना, समानता, भेद आदि का उल्लेख हुआ है, जिससे कथन में सुलझाव और मार्मिक व्यंजना आ गई है। चिंतन की नई धारा का प्रतिपादन-प्रणाली में अच्छा समावेश हुआ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आलोचनात्मक शैली—इस शैली में शुक्ल जी का आलोचक स्वरूप बड़ी ही महत्त्वपूर्ण है। इस शैली में शुक्ल जी के दो रूप स्पष्ट दिखलाई पड़ते हैं। प्रथम तो विशुद्ध आलोचनात्मक शैली जिसके अन्तर्गत रचनाओं का सैद्धान्तिक आधार पर परीक्षण और रचनाकारों का मूल्याङ्कन हुआ है। इस शैली में आलोचक की निष्पक्षता, निर्भीकता, नीर-क्षीर-विवेक तथा मनन-चिन्तन की गहराई का पता चलता है। इसकी भाषा प्रौढ़ और साहित्यिक है। आलोचना में जहाँ कहीं सिद्धान्त की स्थापना की है वहाँ भाषा कुछ क्लिष्ट और वाक्य जटिल हो गये हैं अन्यथा भाषा में साहित्यिक प्रौढ़ता, गम्भीरता और प्रवाह है। दूसरे ढंग की शैली में विदग्ध और व्यंग्यात्मक रूप अपनाया गया है। व्यंग्य और विदग्धता के लिए छोटे-छोटे वाक्य तथा उर्दू के शब्द और मुहावरों का आश्रय लिया गया है। यह व्यंग्य बड़ा ही मार्मिक और प्रभावपूर्ण है। तीव्रता होते हुए भी इसमें राग-द्वेष की भावना नहीं, इस व्यंग्य का प्रयोग साहित्य-रचना, व्यक्ति, समाज आदि की हीन प्रवृत्ति या आदर्श-हीनता के समीक्षात्मक कथन के कारण हुआ है।

गवेषणात्मक शैली—शुक्ल जी ने इस शैली का स्वरूप स्वयं गढ़ा है। साहित्यिक आदर्शों की विवेचना और दार्शनिक विषयों के निबन्धों में इसका प्रयोग हुआ है। इसकी भाषा अधिक दुरूह और जटिल है। लम्बे-लम्बे पद और वाक्य-योजना में क्लिष्टता है। मुहावरों की कमी या पूर्णतः उसका अभाव है, किन्तु उदाहरण देकर कथन को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। इसमें विषय का विशद-अध्ययन पांडित्य-ज्ञान तथा मनन-चिन्तन दृष्टिगोचर होता है। कहीं अंग्रेजी भाषा की रचनाओं और लेखकों का उल्लेख है तो कहीं संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थों और आलंकारिकों के नामों और रचनाओं का उदाहरण प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार विषय प्रतिपादन और कथन में तर्कपूर्ण नवीन प्रणाली का ढंग भी प्रस्तुत हुआ है। विश्व के विस्तृत ज्ञान-सागर में गम्भीर गोता लगाकर प्राप्त किए ज्ञान मुक्ताओं के प्रयोग और उद्धरण-पूर्ण प्रदर्शक का व्यवहार लेखक ने इस शैली में किया है। अंग्रेजी शब्दों को प्रायः उसी भाषा में हिन्दी पर्याय के साथ व्यवहृत किया है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस प्रकार हिन्दी गद्य-शैली को स्वस्थ, सबल, प्रौढ़ और सर्वाङ्गीण समर्थ बनाने में शुक्ल जी ने बड़ा प्रयास किया है। उनकी गद्य-शैली की देन महान् है। वे एक अद्वितीय और अपूर्व शैलीकार हैं।

अनुच्छेद १—३

शब्दार्थ—युवा=जवान। स्थिति जमाना=प्रवेश करना, जीवन प्रारम्भ करना। एकान्त=अकेली, मित्र-शून्य रहने की। धड़ाधड़=शीघ्रता से। हेल-मेल=मित्रता, घनिष्ठता। परिणत=बदलना। उपयुक्तता=औचित्य, उचित होने का भाव। अपरिपक्व=कच्ची, अधपकी। अपरिमार्जित=बिना मँजी, शोधी या साफ की हुई। मनोवेग=भाव, हृदय की प्रबल भावना। प्रकृति=स्वभाव। सङ्कल्प=धारणा, निश्चित मत। विरोध=विपरीत या उलटा भाव, रुकावट। दाब=नियंत्रण, काबू। अवस्था=हालत, स्थिति। विवेक=भले बुरे का विचार या भाव। आचरण=चाल-चलन। अनुसन्धान=खोज, जाँच-पड़ताल। विश्वास=भरोसा। हँसमुख=प्रसन्न। ढब=ढंग। मैत्री=मित्रता। उद्देश्य=ध्येय। खजाना=बहुत अधिक संपत्ति। त्रुटि=कमी, गलती। मर्यादा=मान, बड़प्पन की सीमा। आत्म-शिक्षा=अपनी शिक्षा। सुगम=सरल। कुमार्ग=बुरा रास्ता। सचेत=सावधान। हतोत्साह=हिम्मत का हारना, निरुत्साह, किसी काम में लगन या उत्साह का मारा जाना। निर्वाह=बिताना, व्यतीत करना। निपुणता=योग्यता, कुशलता, चतुराई। धैर्य=धीरता, साहस, हिम्मत। छात्रावस्था=विद्यार्थी-जीवन। धुन-सवार होना=किसी काम की लगन होना। स्नेह बन्धन=प्रेम का सम्बन्ध। उमङ्ग=मौज, आनन्द की लहर। खिन्नता=खीझ, उदासी का भाव। बालमैत्री=बचपन की मित्रता, लड़कपन की दोस्ती। ईर्ष्या=जलन। अनुरक्ति=लगाव। उद्‌गार=भावों के वेग। आर्द्रता=तरलता, हृदय के पसीजने का भाव। कल्पना=सोचने की शक्ति या विचार-शक्ति। बिगाड़ होना=मनमुटाव होना, खटपट होना, मित्रता में बाधा पड़ना। बातें लगना=बुरा लगना या मानना। उक्ति=कथन। उथल-पुथल=हलचल, खलबली। आवेशपूर्ण=जोश से भरी। आदर्श=

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नमूना, श्रेष्ठ। मनभावनी=मन को अच्छी लगने वाली। जीवन-संग्राम=जीवन जो एक लड़ाई के समान है। प्रतिमा=मूर्त्ति, सूरत-शकल। पथ-प्रदर्शक=रास्ता दिखाने वाला। प्रीतिपात्र=प्रेम का भाजन या पात्र, जिससे प्रेम किया जाय। सहानुभूति=किसी को दुखी देखकर दुखी होने का भाव, हमदर्दी। रुचि=इच्छा, स्वभाव। आचरण=चाल-चलन, वर्त्ताव, चरित्र। समानता=एकता, एक-सा होना। वाञ्छनीय=आवश्यक, इच्छित, चाहने योग्य। उग्र=तेज, क्रोधी। उद्धत=उच्छृङ्खल, उद्दण्ड। प्रगाढ़=गहरा, अत्यधिक। उच्चाशय=ऊँचे या अच्छे विचार वाले। विभिन्नता=भेद, एक-सा न होना। चिन्ता शील=चिंता सोच या फिकर करने वाला या चिंता की आदत और स्वभाव वाला। प्रफुल्ल चित्त=हँसमुख, प्रसन्न, खुश मिजाजी। आकांक्षा = इच्छा। युक्ति = तरकीब, चतुराई। चाणक्य = एक इतिहास प्रसिद्ध कुशल और नीति को जानने वाला ब्राह्मण जिसने प्रसिद्ध राजा चन्द्रगुप्त को राज्य करने में राज्य और सहायता दी। मुँह ताकना = सहायता के लिए निर्भर रहना। नीतिविशारद = रीति या ढंग को जानने वाला। सामर्थ्य = शक्ति, पहुँच, योग्यता। पल्ला पकड़ना=साथ करना। आत्मबल=अच्छे और दृढ़ चरित्र की शक्ति, पवित्र आत्मा की शक्ति। प्रतिष्ठित = सम्मानित, इज्जतदार, मान, आदर वाले, अच्छे होने के कारण प्रसिद्ध। शुद्ध=स्वच्छ, पवित्र, साफ। मृदुल=कोमल। पुरुषार्थी=उद्योगी, परिश्रमी। शिष्ट=शीलवान, अच्छी चाल-चलन वाला। सत्यनिष्ठ=सत्य पर दृढ़ या अटल रहने वाले, सत्य के पक्के। योजना =व्यवस्था, प्रबन्ध। बर्क=अंग्रेजी का एक प्रसिद्ध विद्वान। दृष्टान्त=उदाहरण।

जब कोई युवा.....................परिणत हो जाता है।

प्रस्तुत गद्यांश 'मित्रता' नामक पाठ से लिया गया है। इसके विद्वान लेखक आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल हैं। इन पक्तियों में लेखक ने बतलाया है कि मित्रता कब और कैसे होती है।

बचपन में घर तथा घर के लोगों के बारे में ही लड़कों की जानकारी होती

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है। कुछ बड़े होने पर लड़का जब युवक होता है, संसार के अन्य लोगों के बीच पहुँचता, उनसे मिलता-जुलता और अपनी जानकारी बढ़ाता है। उस समय उसके सामने सबसे पहले नयी कठिनाई आती है वह कठिनाई है मित्र को छाँट कर निकालने में। इतने लोगों में से किसको वह मित्र बनावे यह काम उसे मुश्किल होता है। यदि वह अकेले में रहने वाला चुपचाप, शान्त और विचित्र स्वभाव वाला नहीं होता तो उसकी जान-पहचान के लोगों की संख्या बहुत अधिक हो जाती है। उसकी जानकारी और परिचय बहुत-से लोगों से, थोड़े समय में ही हो जाता है। उनमें से कुछ लोगों के साथ बराबर कुछ ही दिनों में उसकी घनिष्टता हो जाती है। इन थोड़े लोगों से उसका मिलना-जुलना और संग-साथ अधिक होने लगता है और इस प्रकार धीरे-धीरे कुछ दिनों का गाढ़ा परिचय मित्रता का रूप ले लेता है।

मित्रों के चुनाव की........................चाहे देवता।

ये पंक्तियाँ प्रसिद्ध निबन्धकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा लिखित 'मित्रता' नामक पाठ से ली गयी हैं। लेखक ने इस पद्यांश में मित्रों के उचित चुनाव से जीवन में सफलता मिलती है तथा मित्रों की संगत या संग-साथ का प्रभाव हमारी चाल-चलन पर पड़ता है इस सम्बन्ध में अपने विचार समझा-समझा कर प्रस्तुत किये हैं।

युवक संग-साथ द्वारा हेल-मेल और घनिष्टता बढ़ाकर लोगों से मित्रता तो कर लेता है, किन्तु मित्रता के साथ-साथ उसकी जीवन की सफलता का गहरा सम्बन्ध है। मित्रों के चुनाव में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि चुनाव उचित हुआ है अथवा नहीं। जिनसे हमारी मित्रता हुई है, जो हमारे मित्र हैं वे हमारे मित्र होने लायक हैं अथवा नहीं। वे साथी ठीक समझ कर बनाये गये हैं अथवा नहीं। क्योंकि इस विचार के साथ-साथ ही हमारे जीवन की सफलता लगी हुई है। हम जीवन में तभी उन्नति कर सकते हैं जब हमने मित्रों के चुनाव के ठीक-ठीक होने पर सोच-विचार से काम किया हो। यह विचार इसलिये आवश्यक है कि हमारा मित्रों से संग-साथ रहता है और हमारी चाल-चलन, बर्ताव और स्वभाव पर संग-साथ वाले लोगों का ऐसा असर पड़ता है जो

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हमें दिखाई नहीं पड़ता, हमारी समझ में नहीं आता। हम लोग ऐसी उम्र में, इस हालत में बहुत से लोगों के बीच आकर अपने जीवन का काम शुरू करते हैं जब हमारा मन और हृदय अत्यन्त सुकुमार, नरम और सरल होता है इस कारण हर तरह का देखा-देखी और सीख का इस पर वैसा प्रभाव पड़ना ठीक ही है, क्योंकि सुकुमार और सरल वस्तु पर ही प्रभाव पड़ता है। हमारे हृदय में उठने वाली भावनाएँ उस समय बिना मँजी या शोधी हुई होती हैं और हमारी बुद्धि कच्ची रहती है। मन के भावों की प्रबल शक्ति तथा अपने स्वभाव की कोमलता के बारे में हमें ज्ञान नहीं रहता। उस समय हमारी हालत उस बिना पकी हुई गीली मिट्टी की मूर्ति के समान होती है जो ठीक से होने के कारण देवता या गलत ढंग से बनाए या छू जाने पर बिगड़ जाती है और राक्षस का रूप ले लेती है। इसी प्रकार हमारी प्रकृति को यदि अच्छा संग-साथ मिला तो वह पवित्र गुणों के कारण हमको देवता जैसा अच्छा बना देगी या बुरे संग-साथ के कारण हम राक्षस जैसे ही ढल जायेंगे। संग-साथ के अनुसार हम पर भी अच्छाई या बुराई का वैसा ही प्रभाव पड़ेगा।

कैसे आश्चर्य की..........................सुगम हो जाता है।

प्रस्तुत गद्यांश मित्रता नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। मित्र को चुनने में भले-बुरे का विचार आवश्यक है, किन्तु ऐसा ज्ञान नव-युवक को नहीं रहता। यह विचार लेखक ने यहाँ स्पष्ट कर दिया है।

मित्रों के चुनाव में युवक समझदारी से काम नहीं लेते। लेखक स्वयं आश्चर्य करता है कि ऐसी असावधानी क्यों की जाती है। मनुष्य एक घोड़ा खरीदने के समय पचास तरह से उसकी अच्छाई या बुराई आदि का विचार करते हैं।। तरह-तरह से उसकी परीक्षा करते हैं, किन्तु जब किसी से मित्रता प्रारम्भ करते हैं तो उसके पहले उसकी चाल-चलन और स्वभाव के बारे में न तो कुछ सोचते समझते हैं और न पता लगाने की कोशिश करते हैं। यह जानना आवश्यक है किन्तु मित्र के चुनाव में इसकी आवश्यकता को वे भुला देते हैं। मित्रता करने के समय वे यह समझते हैं

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

८

कि मित्र में सब सुन्दर और भले गुण ही भरे हैं और इस तरह का पक्का विचार मित्र के सम्बन्ध में उनके हृदय में बैठ जाता है। प्रसन्न मुख, बातचीत करने का ढंग, कुछ-कुछ चतुराई और हिम्मत आदि दो-चार बातें जहाँ उन्होंने किसी में देखीं तो उससे प्रभावित होकर शीघ्र ही उससे मित्रता जोड़ लेते हैं। इस प्रकार मित्र बना लेने में उनके हृदय का यह विचार जाता रहता है कि मित्रता का लक्ष्य क्या है—किसलिए मित्रता की जाती है। इस मित्रता का जीवन के भिन्न-भिन्न कार्यों के साथ परस्पर का सम्बन्ध है और वह सम्बन्ध बड़ा महत्व रखता है। जीवन के प्रत्येक कार्य पर मित्रता का प्रभाव पड़ता है। हमें इस बात का ध्यान ही नहीं रहता कि मित्रता एक ऐसा महत्त्वपूर्ण साधन है जिसके द्वारा हम अपनी शिक्षा, अपने में अच्छे-अच्छे, सुन्दर और श्रेष्ठ गुणों को भरने का काम आसानी से कर सकते हैं। क्योंकि मित्रता वास्तव में इसका ही एक सरल जरिया है।

सच्ची मित्रता.................................करना चाहिये।

ये पंक्तियाँ विद्वान् निबन्ध लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के मित्रता नामक पाठ से ली गयी हैं। लेखक सच्चे मित्र के लक्षण बतला चुका है यहाँ पर वह सच्ची मित्रता का निचोड़ कुछ शब्दों में प्रस्तुत करता है—

कुशल और योग्य वैद्य रोगों को अच्छी प्रकार जानता है और उसी के अनुसार बड़ी कुशलता से उसका इलाज कर रोग दूर कर देता है ठीक उसी प्रकार सच्चा और वास्तविक मित्र हमारी बुराइयों और दोषों को अच्छी तरह जानता है और उसको बड़ी योग्यता से दूर करता है। ऐसा करने वाला मित्र ही वास्तव में मित्र है और उसकी मित्रता सच्ची मित्रता। योग्य माता बालक के धीरज खोने या घबड़ा जाने पर उसकी घबड़ाहट दूर कर धैर्य बँधाती है और बिना डाँट-डपट किए सरल और नरम व्यवहार करती है। सच्ची मित्रता में भी मित्र का ऐसा ही बर्त्ताव मिलता है। सच्ची मित्रता का यह लक्षण है। इसी तरह की मित्रता स्थापित करने की कोशिश करना प्रत्येक नवयुवक के लिए आवश्यक है। मित्रता करने के पहले मित्र में इस प्रकार के गुणों को देखकर ही मित्रता करनी चाहिये।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मित्र हों तो..किसी से नहीं।

प्रस्तुत पंक्तियाँ मित्रता नामक पाठ से ली गयी हैं, जिसके विद्वान् ले हैं सुप्रसिद्ध निबन्धकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल। लेखक ने मित्र का क बतलाया है तथा मित्र के गुण गिनाए हैं। उसी प्रसंग में लेखक स्पष्ट करत कि हमारे मित्र कैसे हों तथा उसके अनुसार मित्रता क्या है।

लेखक का विचार है कि यदि हम मित्रता स्थापित करें और किसी मित्र बनावें तो ऐसे लोगों को ही, जो समाज में आदर और सम्मान के पात्र गुणों के कारण जो प्रसिद्ध हों। जिनके हृदय के विचार पवित्र और निर्मल तथा जो सरल और कोमल चित्त वाले और साथ ही साथ उद्योग में परि करने वाले हों वे आलसी और निकम्मे न हों। उनका चालचलन और आच अच्छा हो तथा सत्य के पक्के या सत्य पर दृढ़ रहने वाले हों। किसी भी द सत्य को न छोड़ें। वे ऐसे हों ताकि हम उनके अनुसार बड़े विश्वास से अ को जीवन में चलने दें और इस बात का जरा भी विचार न आवे कि मित्र हमें किसी प्रकार का भ्रम या भुलावा होगा या झूठे व्यवहार के कारण मि जानकारी का अनुभव होगा। दूसरे शब्दों में मित्र ऐसे हों जिन पर पूरा विश्वास कर सकें। मित्रता से एक नयी शक्ति, एक प्रकार की नयी ता नये बल का निर्माण होता है एक नये प्रकार की शक्ति का प्रबन्ध या योज हमें प्राप्त होती है। प्रसिद्ध अंग्रेज विद्वान बर्क ने एक जगह लिखा है कि चा चलन के उदाहरण ही से सारे मनुष्य वह सीखते-समझते और जानते हैं एक बालक पाठशाला में। मनुष्य अपने सामने उदाहरण या नमूना रख सीखने में जैसा योग्य अथवा समर्थ होता है वैसा वह किसी मनुष्य से नहीं सकता। चाल-चलन या बर्त्ताव का उदाहरण ऐसा महत्त्वपूर्ण है जो मित्र में हमारे सामने बराबर प्रस्तुत होता रहता है।

अनुच्छेद ४—६

शब्दार्थ—बदौलत=कारण। समर्थ=योग्य, शक्तिशाले। कुमार्ग के गह =बुरे रास्ते की गहराई, पतन की गहराई। मन्त्रणा=सलाह, राय। शिखर=

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चोटी। सात्विकता=अच्छे गुण, शुद्ध विचार। सौभाग्य=भलाई। निरन्तर=लगातार, बराबर। उत्तेजित करना=उभाड़ना, जगाना। उद्यत=तैयार। टूटे जी को जोड़ना=हताश या निरुत्साहित होने पर आशा या धैर्य बँधाना। लड़खड़ाते पाँव=निर्बल पाँव। ठहराना=स्थिर करना, शक्ति देना। आशय=ध्येय, उद्देश्य। कर्मक्षेत्र=जीवन जो कर्म करने का स्थान है। गुल्छर्रे=मौज, शौक। उन्नत=श्रेष्ठ। सत्यशील=सत्य का आचरण। पराक्रमी=वीरता का कार्य करने वाले। स्वसंस्कार=अपना सुधार। प्रभाव=असर। विवेचना=सोच-विचार, अच्छे-बुरे का निर्णय। मन्द=धीमी। विवेक=भले बुरे का ज्ञान। आयोजन=व्यवस्था, प्रबन्ध, उपक्रम। हाथों में सौंपना=जिम्मे या सुपुर्द करना। पदार्थ=वस्तु। लेखा=हिसाब-किताब, ब्यौरा। वृद्धि=बढ़ाकर। प्रहसन=तमाशा, मजाक से भरा खेल, हँसी से भरा वार्त्तालाप या छोटा नाटक। विपत्ति॥ कष्ट। डिमास्थिनीज = यूनान देश का प्रसिद्ध विद्वान, वक्ता और सन्त। एथेन्स=यूनान का एक छोटा प्रदेश और राजधानी। संगत = साथ, हेल मेल के आदमी। बाधा=रुकावट। चित्तवृत्ति=स्वभाव, चित्त की प्रकृति या दशा। अवनत=गिरे हुए, निम्न। हतोत्साह=निराश, हिम्मत या उत्साह हारे हुए। समूह=झुंड, दल। झाँझ की झंकार=झाँझ या एक प्रकार के मँजीरे की तरह आवाज की तरह निरस और व्यर्थ। आकृतियाँ=शकल, सूरत। चित्रवत=चित्र की तरह निर्जीव और निष्प्राण। विनोद=मनोरञ्जन। सहानुभूति=किसी को दुःखी देख दुःख का अनुभव और हमारे प्रति धैर्य के शब्दों के कथन की भावना। ढाढ़स बँधाना=धैर्य जगाना या देना, हिम्मत दिलाना। जड़=निर्जीव और चेतना हीन। मूर्तियाँ सजाना—चारों ओर प्राण और चेतना रहित मूर्तियों की तरह के आदमी इकट्ठे कर लेना। सैर-सपाटे=घूमने या दिल बहलाने के लिए भ्रमण। निमन्त्रण=बुलावा, न्यौता। शोहदे=गुण्डे, आवारे। मनचले=बुरे मन वाले। कुलटा=बुरे चरित्र वाली स्त्री। महफिल नाच-गाने की सभा। शून्य=कोरा, खाली। निःसार=बिना तत्व या सार वाला, व्यर्थ। उक्तिवाले=कथन वाले। ग्रन्थकार=पुस्तकों के लेखक। इन्द्रिय-विषयों=इन्द्रिय-सुखों, विषय-वासना, भोग-विलास। कुत्सित=बुरे,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दोष-पूर्ण, पापी। लिप्त=डूबे हुए, रमे हुए। नाशोन्मुख=विनाश की ओर जाने वाले। पतित होना=नीचे गिरना। मन में ठानना=पक्का निश्चय कर लेना, दृढ़ या अटल विचार बना लेना। मकदूनिया—प्राचीन काल के ग्रीस या यूनान देश का एक प्रान्त जहाँ का विजयी सम्राट सिकन्दर संसार में प्रसिद्ध है। डेमेट्रियस—इसी देश मकदूनिया या मेशोडोनिया का राजा था। विषय-वासना=भोग-विलास, मन की बुरी इच्छा या भावना की तृप्ति।

मित्र अपना हाथ बढ़ाओ.........................ढाल मैं लिए हूँ।

प्रस्तुत गद्यांश विद्वान् लेखक रामचन्द्र शुक्ल के मित्रता नामक पाठ से लिया गया है। लेखक ने बतलाया है कि मित्रों ने महापुरुषों को बड़े-बड़े कार्य में प्रेरणा तथा सहायता दी है। कुछ ऐसे भी हुए हैं जो मित्रता से महान् और श्रेष्ठ हुए हैं तथा अपने मित्रों को भी श्रेष्ठ और महान बनाया है। मित्रों को परस्पर साहस-बुद्धि और एकता के द्वारा एक दूसरे की उन्नति करनी चाहिए और दोनों का लाभ और महानता के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए। इस प्रसंग में प्रत्येक मित्र के विचार कैसे हों उन्हीं का उल्लेख लेखक ने यहाँ किया है।

मित्रता करते समय हमारी भावना और विचार में दोनों की कल्याण-दृष्टि हो। उस समय हम अपने मित्र से यह कहें कि आओ मित्र! अपना हाथ आगे बढ़ाओ और मित्रता का सम्बन्ध स्थापित करने की स्वीकृति दो। हाथ मिलाकर सम्बन्ध स्थापित करना हमारी इस भावना का सूचक है कि यह हाथ जीने तथा मृत्यु के दिनों तक तुम्हारा सहायक होगा। यह हाथ कभी भी पीछे न हटेगा, सहायता के अवसर पर विमुख न होगा। तुम मेरा कल्याण करोगे, किन्तु हमारी मित्रता का मेरे हाथ मिलाने का यह लक्ष्य नहीं कि केवल मेरा ही भला हो और तुम्हारी सहायता के बोझ रूपी ऋण से मैं लद जाऊँ और बराबर तुम मेरी सहायता करते जाओ। यह ही केवल न होगा तुम्हारा भी उपकार होगा, तुम्हारी तरह मैं भी तुम्हारी सहायता के लिए तैयार रहूँगा। तुम्हारी की हुई सहायता मुझसे भी तुम्हारे लिए सहायता को प्रस्तुत रहने की चेतना देगी और मैं सहायता करूँगा जिससे तुम्हारा भी कल्याण होगा। तुम स्वभाव और प्रवृत्ति के सच्चे और शुद्ध

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

न्याय करने वाले तथा वीर भावना से युक्त रहना, इनको न छोड़ना ; क्योंकि यदि तुम इन बातों को छोड़ दोगे और गलती करोगे, तो तुम्हारे साथ-साथ मुझसे भी गलती होगी। सत्यता, न्याय और वीरता की भावना मुझसे भी छूट जायँगी ; क्योंकि मैं तुम्हारा अनुकरण करूँगा। जीवन में जो-जो और जैसा-जैसा कार्य तुम करोगे मुझसे भी वही होगा। यदि जीवन में तुम्हारी उन्नति होगी तो तुम्हारे साथ-साथ मैं भी उन्नत होऊँगा। जीवन जो एक युद्ध के सदृश है, इसमें तुम बहादुरी के साथ प्रवेश करो, कहीं पर किसी कष्ट या प्रहार के डर से पीछे न हटो, चुप न बैठो। तुम्हें कष्ट या प्रहार का दुख न पड़ेगा ; क्योंकि उन दुखों से बचाव करने, तुम्हारी रक्षा करने के लिए मित्रता-रूपी ढाल लेकर मैं तैयार हूँ। अतः तुम्हारी रक्षा और सहायता होगी, जीवन-संग्राम में भय का अनुभव न करो।

. जीवन का उद्देश्य.....................................वा वृद्धि के।

ये पंक्तियाँ प्रसिद्ध निबन्धकार रामचन्द्र शुक्ल के 'मित्रता' नामक पाठ से ली गयी हैं। लेखक का विचार है कि जीवन व्यर्थ नहीं, इसका कुछ उद्देश्य है और यह ईश्वर द्वारा प्राप्त होता है। ऐसे ईश्वर द्वारा दिए हुए जीवन का उद्देश्य लेखक ने यहाँ पर स्पष्ट किया है।

जीवन का क्या कोई ध्येय नहीं, यह हमें ईश्वर से व्यर्थ ही मिलता है जो हम भले-बुरे का विचार किये बिना यों ही बिता दें ? नहीं जीवन हमें एक ध्येय या सिद्धान्त की पूर्ति के लिए ईश्वर द्वारा प्राप्त होता है। मर जाने पर जब हमारा दूसरे लोक में प्रवेश हो तो उस अपने आगे के समय के लिए हम इस जीवन में अच्छे कार्यों द्वारा कुछ वहाँ भी ले जाने का प्रबन्ध कर लें। इसी ध्येय के साथ हमें परमात्मा से जन्म और जीवन मिला है। अच्छे बुरे का विवेक भी हमें जीवन के साथ परमात्मा द्वारा मिला है। जो-जो वस्तुएँ हमें ईश्वर से मिली हैं, उनका हमने क्या-क्या और कैसा-कैसा उपयोग किया, इसका हिसाब-किताब उस जन्म में परमात्मा के सामने रखना होगा। अपने जीव के साथ अपनी आत्मा के सम्मुख रखना होगा। ईश्वर के दिए हुए जीवन को अच्छे कार्यों में लगाकर, विवेक का

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उपयोग कर, बुद्धि को बढ़ा कर उसके लिए हमें तैयार होना चाहिये, क्योंकि जितने भी गुण या अच्छाइयाँ हमें मिली हैं, उसका नाश न हो बल्कि वे कई गुनी अधिक बढ़ें और उस बढ़ी हुई पूँजी को लेकर हम उस दूसरे लोक में परमात्मा और अपनी आत्मा के सम्मुख पहुँचे। हमारे लिए ऐसा उचित और आवश्यक है, क्योंकि जब कोई चीज दी जाती है या धन दिया जाता है, तो उसे ब्याज के साथ या बढ़ाकर और भी अधिक परिमाण में लौटाया जाता है। वैसे ही हमें जीवन तथा जीवन के गुणों को बढ़ाकर, कई गुना करके परमात्मा को लौटाना है। जीवन का यही उद्देश्य है कि उसका सुन्दर उपयोग, गुणों का अच्छा व्यवहार और विकास हो।

यदि जीवन एक प्रहसन.................गंभीर बातें और दृश्य भी है।

प्रस्तुत गद्यांश 'मित्रता' नामक पाठ से लिया गया है इसके लेखक हैं सर्वश्रेष्ठ निबन्धकार और प्रसिद्ध विद्वान रामचन्द्र शुक्ल। लेखक ने जीवन के महान् उद्देश्य के बारे में अपने विचार प्रकट किये हैं। इन पंक्तियों में उसकी महत्ता उपस्थित की गयी है।

लेखक पाठकों से कहता है कि यदि जीवन को आप लोग मजाक से भरा हुआ नाटक समझते हैं जो हँसी-विनोद से पूर्ण होता है और हलके मनोरञ्जन के सिवाय जिसका कुछ अर्थ नहीं होता, तो इसी प्रकार मजे-मौज और आनन्द में उद्देश्य से रहित होकर जीवन के दिन बिताएँ। यदि वास्तव में जीवन यही सब है तो पहले मैंने जीवन को उद्देश्य से युक्त महत्त्वपूर्ण होने की बात कही है उसका कोई मूल्य नहीं, किन्तु यह बात नहीं जीवन मजाक से भरा नहीं। जीवन में तो कितनी ही गहन-जटिल महत्त्वपूर्ण समस्याएँ उपस्थित होती रहती हैं कष्ट और मुसीबतों के अवसर भी आते हैं। इसलिए जीवन एक प्रहसन के समान नहीं, उसका महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। इसकी उपयोगिता है अतः इसको विनोद और आनन्द में व्यर्थ ही न बिताना चाहिये।

समूह का नाम.................................झनकार है।

प्रस्तुत पंक्तियाँ 'मित्रता' नामक पाठ से ली गयी हैं। इसके लेखक प्रसिद्ध निबन्धकार रामचन्द्र शुक्ल हैं। परिचय तथा जान-पहिचान के बढ़ने की बात

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लेखक ने कही है, किन्तु किसी-से जान-पहिचान का बढ़ जाना मित्रता या संगत नहीं। संगत का जो वास्तविक अर्थ है उसे विद्वान् लेखक ने अंग्रेजी के वेकन नामक प्रसिद्ध विद्वान के शब्दों में, उसका उदाहरण देकर स्पष्ट एवं प्रस्तुत किया है।

अंग्रेजी का महान् विद्वान वेकन का कथन है कि समूह या लोगों के झुंड को अपने साथ इकट्ठा कर लेने का नाम संगत नहीं। हमारी जान-पहचान एवं परिचय अधिक लोगों या मनुष्य की कुछ बड़ी संख्या से हो जाय तो वह संगत न कही जायगी। हम वहुत से लोगों के बीच उठ-वैठ सकते हैं, उनसे परिचित हो सकते हैं, किन्तु इतने से ही हमें सुख-दुख में उनका साथ, उनकी सहानुभूति तथा आवश्यकता पड़ने पर सहायता व सलाह आदि तो नहीं मिल सकती। उनके द्वारा हमारा और उनका कल्याण तो नहीं होता। हमारे-उनके हृदय की एकता तो स्थापित नहीं हो सकती। वे हमारे जीवन को प्रभावित करने में, उन्नति की ओर ले जाने में, मार्ग का निर्देश करने, जीवन-संग्राम में साथ देने के लिए तो लालायित नहीं रहते। संगत तो मित्र और मित्रता में ही दीख पड़ती है। जब जान-पहचान के लोग हमें ये सब बातें नहीं दे सकते। मित्रों की सी हृदय की रागभरी भावना, एकता का विचार-व्यवहार परिचितों में नहीं मिलता तो परिचितों का झुण्ड या बड़ी से बड़ी संख्या के लोग हमारे लिए चित्रों की तरह ही प्राण-चेतना-स्पन्दन और भावना से रहित शकल-सूरत मात्र ही हैं। उन परिचितों और चित्रों की शकल-सूरत में हमारे लिए कोई अन्तर नहीं रह जाता। चित्र की मुखाकृतियाँ आदि से हमारा कोई पारस्परिक सजीव व्यवहार नहीं होता; ठीक उसी प्रकार परिचित लोगों के समूह से। जब हम ऐसे समूह से बातचीत करते हैं तो उसमें कोई अपनापन नहीं होता कोई लगाव या प्रेम नहीं रहता, बातें नीरस और फीकी रहती हैं। उसमें हृदय का सच्चा भाव नहीं रहता। अतः जिस प्रकार झाँझ के शब्दों में व्यर्थ की आवाज मात्र रहती है संगीत की स्वर-लहरी नहीं निकलती, उसी प्रकार निरर्थक परिचित लोगों की बातचीत की आवाज भी रहती है। उसका कोई उपयोग या महत्त्व नहीं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उनके लिए न तो..............................शान्ति नहीं।

प्रस्तुत पंक्तियाँ 'मित्रता' नामक पाठ से ली गयी हैं। इस पाठ के प्रति लेखक हैं पं० रामचन्द्र शुक्ल। विद्वान लेखक ने मनचले युवकों तथा उन क्रिया-कलापों का अच्छा चित्र प्रस्तुत किया है। उन लोगों के लिए हँसी-ठ के अलावा कुछ भी जीवन में नहीं। वे नवयुवक अच्छी बातों के वास्तवि आनन्द को पसन्द नहीं करते। इसी प्रसंग में लेखक ने कुछ ऐसी बातें इ पद्यांश में गिनायी हैं, जिनके इस संसार में रहने या होने का अनुभव या ज्ञ उन्हें नहीं रहता।

निरर्थक जीवन व्यतीत करनेवाले सोचते हैं कि उनके मौ शोक के अलावा संसार में अन्य कुछ नहीं। वे नहीं जानते कि इस दुनिया में कितने ऐसे कवि हुए हैं, जिन्होंने अपनी कविताओं में मन को आकर्षित करने वाले सुन्दर-सुन्दर भावों से युक्त कथन को प्रस्तुत किया है शुद्ध और पवित्र चाल-चलन वाले अनेक महापुरुषों और सन्तों ने जन्म लेक अच्छी-अच्छी बातें कही हैं। ऐसे कितने ही साहसी और बलवान व्यक्ति पै हुए हैं जिन्होंने बड़ी कुशलता और पराक्रम के साथ वीरतापूर्ण कार्य किये हैं ऐसे असंख्य पुस्तकों के लेखक हो गये हैं, जिन्होंने पुस्तकों में ऐसे विचा और भावों को भरा है, जिनको पढ़कर सम्पूर्ण मानव-समाज के मन और चि में पवित्र विचारों और भावों का प्रबल वेग आता है। उनके हृदय में अ पुस्तकों को पढ़ने से शुद्धता और अच्छे विचार जगते हैं। फूलों और पत्तियों एक प्रकार की महान् सुन्दरता रहती है किन्तु उस प्राकृतिक सौन्दर्य का दर्श उन्हें नहीं होता। झरने जब कलकल का शब्द करते हुए बहते हैं तो उससे मीठ गीत उत्पन्न होता है जो उन्हें सुनायी नहीं देता। उस संगीत का आनन्द उन्हें नहीं मिलता। विशाल समुद्र में जब ऊँची-ऊँची लहरें उत्पन्न होती हैं, तो उनमें गहरे और गुप्त भेद की झलक मिलती है, किन्तु वह उन्हें दिखलायी नहीं पड़ता। जीवन में जो वास्तविक यत्न और सच्ची कोशिशें हैं जो सच्चा उद्यो और परिश्रम है उसको करने में जो खुशी प्राप्त होती है वह उनके लिए बनी ही नहीं उसको प्राप्त करना उनके नसीब में ही नहीं और न तो वास्तव

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उन्हें सुख-सन्तोष ही प्राप्त होता है और न निर्मल हृदय द्वारा पायी जाने वाली शांति या स्थिरता उनके पल्ले पड़ती है। उनका हृदय हमेशा चंचल बना रहता है और मन बराबर भटका करता है। जोवन में स्थिरता तो उन्हें मिलती ही नहीं।

अनुच्छेद ७—६

शब्दार्थ—कुसङ्ग=बुरी सङ्गत या बुरे लोगों का संग-साथ। ज्वर=शरीर का एक रोग या प्रबल विकार। नीति=न्यायपूर्ण रीति या ढंग। सद्वृत्ति=पवित्र, शुद्ध तथा अच्छे विचार। वृद्धि=विकास, उन्नति। क्षय=नाश। बाहु=हाथ, भुजा। निरन्तर=लगातार, सदा। सराहना=प्रशंसा या तारीफ करना। आध्यात्मिक=अध्यात्म विद्या सम्बन्धी, ईश्वर जीव और जगत के सम्बन्ध में। भ्रष्ट होना=बुरा, कलुषित या नाश होना। अटल=दृढ़, पक्का। धारणा=विचार, चित्त की वृत्ति। भद्दी=गन्दी। भावना=मन में उठने वाला भाव। ध्यान पर चढ़ना=ध्यान में आना। चौकसी=सावधानी। अश्लील=भद्दी, गन्दी। सामान्य=साधारण। कीचड़ में पैर डालना=बुरी बातों में पड़ना। अभ्यस्त=परिचित, आदत की निपुणता या अभ्यास। कुण्ठित=मन्द, क्षीण, मुरझाया। भक्त=उपासक, चाहने वाले। निष्कलंक=कालिमा या बुराई से रहित। छूत=शीघ्र फैलने वाली बीमारी। सयाना=चतुर बुद्धिमान। लीक=दाग, धब्बा, कालिमा। लागिहै पै लागिहै=अवश्य लगेगा। जीविका=रोजी, रोजगार। अनुकूल=अनुसार। निपुण=कुशल, चतुर। ठोकरें खाना=गलती के कारण हानि उठाना। नम्रता=विनय। अधीनता=अनुशासन। विस्तृत=व्यापक, फैली हुई। परेट=सैनिकों की कवायद यां युद्ध सम्बन्धी व्यायाम का अभ्यास। सद्गुण=अच्छे गुण। स्वसंस्काराभिलाषी=अपनी प्रकृति के सुधार की इच्छा से प्रेरित। अवहेलना=उल्लंघन, तिरस्कार, ध्यान न करना। भले मानुषों=सभ्य जनों, अच्छे शील स्वभाववाले लोगों। लक्षण=चिन्ह। मनोनीति=मन के अनुकूल, मन पसन्द, मन को स्वीकृत। उजड्ड=असभ्य, संस्कार और शील रहित। फूहड़ बातें=गन्दी या अशिष्ट बातें।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कुसङ्ग का ज्वर सबसे…… ……… ………और उठाती जायगी।

प्रस्तुत गद्यांश 'मित्रता' नामक पाठ से लिया गया है। इसके विद्वान लेखक सर्वश्रेष्ठ निबन्धकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। सङ्गति का जो अच्छा-बुरा प्रभाव हमारे चरित्र तथा जीवन पर पड़ता है उसका उल्लेख बड़ी कुशलता से लेखक ने इन पंक्तियों में किया है।

लेखक का विचार है कि कुसङ्ग एक प्रकार का ज्वर है। ज्वर से शरीर और स्वास्थ्य में गड़बड़ी उत्पन्न होती है उसी प्रकार कुसङ्ग रूपी ज्वर के रोग से जीवन और चरित्र में खराबी आती है। कुसङ्ग रूपी ज्वर साधारण नहीं किन्तु बड़ा ही प्रबल और भयदायक प्रभाव डालता है। इसकी बुराइयों के कारण केवल हमारी कार्य की रीति या ढंग ही नष्ट नहीं होता, हमारी अच्छी प्रवृत्ति, हमारी अच्छी चालचलन, आचरण और शुद्ध विचार ही समाप्त नहीं होते हमारे ज्ञान की शक्ति, अच्छे-बुरे का निर्णय करने का विचार ही नष्ट और समाप्त हो जाता। इस कारण हमारे में इतना विवेक नहीं रह जाता कि हम कुछ सोच सकें, सोचने की सारी योग्यता, सारा सामर्थ्य जाता रहता है। यदि कोई नवयुवक बुरे लोगों की संगति में पड़ जायगा तो वह पतन के गड्ढे में गिर जायगा। उसका ऐसा पतन होगा कि वह कभी उन्नति न कर सकेगा। उसका विकास हो ही न सकेगा। बुरी संगति उसी प्रकार युवक को असमर्थ बना देती है जैसे किसी व्यक्ति के पैर में चक्की के पाट बँधे हों और वह उचित ढंग से चल फिर न सके। जरा-सा लड़खड़ा कर गड्ढे में गिर पड़े। यदि संगति अच्छी या अच्छे विचार वालों से हुई तो वह अच्छे लोगों की संगति वाला युवक बराबर विकास करता जायगा और जीवन में सफलता प्राप्त करता रहेगा। उन्नति और सफलता के लिए वह अच्छी संगति उस हाथ की तरह सहायक होगी जो हमें ऊँचाई और महानता की ओर ले जायगी। इस प्रकार अच्छी संगति से हम ऊपर उठेंगे, महान बनेंगे।

समाज एक परेड……………………………आवश्यक समझी जाती है।

प्रस्तुत अवतरण प्रसिद्ध निबन्धकार रामचन्द्र शुक्ल के 'मित्रता' नामक पाठ से लिया गया है। विद्वान लेखक ने एक कहावत का उल्लेख कर बतलाया है

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कि बुरी संगति में पड़कर समझदार और महान् विवेकशील व्यक्ति भी उसके प्रभाव से नहीं बच सकता कुछ न कुछ धब्बा, बुराई अवश्य उसके साथ लगेगी। लेखक ने लिखा है कि मेरा यह विचार नहीं कि संगति न करनी चाहिए और लोगों को समाज में प्रवेश न करना चाहिए। समाज में प्रवेश बहुत लाभदायक और आवश्यक है। अपने इसी कथन के प्रसंग में इन पंक्तियों में समाज के महत्व को लेखक ने बतलाया है।

लेखक का कहना है कि मनुष्य के लिए समाज में आना-जाना, उठना-बैठना सैनिकों के व्यायाम की तरह लाभदायक और शक्ति बढ़ाने वाला है। यह एक प्रकार की परेड है। परेड में बहुत से सैनिक एक साथ मिलकर कवायद और व्यायाम आदि का अभ्यास करते हैं, जिससे युद्ध की शक्ति उनमें आती है। ठीक उसी प्रकार अनेक लोगों के साथ मिलने-जुलने, उठने-बैठने से अपने विकास और ज्ञान को बढ़ाने के लिए, हमें जीवन रूपी संग्राम में लड़ने के लिए आगे बढ़ने की शक्ति और योग्यता प्राप्त होती है। हम अपने जैसे अन्य लोगों को जीवन में बढ़ते हुए देखते हैं, उन लोगों के साथ मिलकर अन्य लोगों के कन्धों से कन्धा, कदम से कदम मिलाते हुए बढ़ने का ज्ञान प्राप्त करते हैं। परेड में सैनिकों को आज्ञा मानकर उसी के अनुसार कार्य करना पड़ता है। समाज में व्यक्ति को भी आदेश-पालन की शिक्षा का अभ्यास होता है। युवक का ज्ञान सीमित होता है। अपने थोड़े ज्ञान के कारण वह अकेला जीवन और संसार में बढ़ नहीं सकता, किन्तु समाज में आकर वह आज्ञा मानकर चलता है। दूसरों को बढ़ते देखता व बढ़ने का ढंग, उन्नति करने का तरीका उसकी समझ में आता है। उसकी उन्नति और प्रगति समाज में ही अधिक संभव होती है। उसमें गुणों का विकास आता है। समाज में रहकर दूसरों का विचार व्यक्ति करता है। दूसरों के लिए अपने मतलब या स्वार्थ को छोड़ने का ज्ञान होता है। लोगों के अच्छे-अच्छे गुणों के कारण मान करना तथा उन गुणों की इज्जत करने तथा अच्छे आचरण की तारीफ करना हमें आता है ये सब गुण समाज में रहकर सीखे जाते हैं। जो नवयुवक अपने में अच्छे आचरण और गुणों को भरने की प्रबल इच्छा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रखता है उसे चाहिये कि सज्जन और भले लोग जिस तरह का व्यवहार औ समाज में आवश्यक समझते और करते हैं वह भी उसी प्रकार करे। सज्ज लोगों की रीति-नीति और आचरण का उल्लंघन या तिरस्कार न करे, किन्तु सीखे और अपनावे।

प्रश्न १—रामचन्द्र शुक्ल की भाषा-शैली के सम्बन्ध में अपने वि व्यक्त कीजिए।

उत्तर—कृपया प्रारम्भ में देखें।

प्रश्न २—शुक्लजी के जीवन तथा साहित्य-साधना का परिचय देते एक लेख लिखो।

उत्तर—जीवन परिचय तथा साहित्य साधना देखो।

प्रश्न ३—निम्नलिखित अवतरणों की सन्दर्भ सहित व्याख्या कीजिए।

(क) यदि जीवन एक प्रहसन········व्यर्थ है।

(ख) कुसंग का ज्वर············और उठाती जायगी।

(ग) समाज एक परेड············समझी जाती है।

(घ) मित्र अपना हाथ बढ़ाओ············ढाल मैं लिये हूँ।

(ङ) मित्रों के चुनाव की············चाहे देवता।

उत्तर—कृपया पहले देखें।

प्रश्न ४—मित्रता कब और कैसे होती है।

उत्तर—प्रारम्भ के दो उद्धरणों की व्याख्याओं को मिलाकर देखें।

गाँव के कुछ उद्योग-धन्धे

(ले०—डा० राजेन्द्र प्रसाद)

जीवन परिचय—डा० राजेन्द्र प्रसाद का जन्म विहार प्रांत के सारन जिले जीरादेई नामक ग्राम में ३ दिसम्बर १८८४ के दिन हुआ था। आपके पिता का मुंशी महादेव सहाय था। मुंशी महादेव सहाय जी बड़ी साधु प्रवृत्ति के प्रति व्यक्ति थे। वे वैद्यक और यूनानी चिकित्सा का ज्ञान रखते थे, जिसके द्वा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गरीबों की सेवा किया करते थे। राजेन्द्र बाबू के घराने के लोग भिन्न-भिन्न राज्यों में दीवान के पद पर कार्य करते रहे हैं। राजेन्द्र बाबू की माता सरलता और दया की मूर्ति थीं। महादेव सहाय जी के दो लड़के और तीन कन्यायें थीं। उनमें सबसे छोटे राजेन्द्र बाबू ही थे। इनके बड़े भाई का नाम महेन्द्र प्रसाद था। छोटे होने के कारण राजेन्द्र बाबू को माता-पिता तथा परिवार का सबसे अधिक प्रेम मिला। ये अपने माता-पिता के गुणों से बहुत अधिक प्रभावित हुए।

राजेन्द्र बाबू की आयु जब ६-७ वर्ष की थी, तो गाँव की पाठशाला में पढ़ने के लिए भेजे गये, जहाँ उन्होंने उर्दू का अक्षर-ज्ञान आदि प्राप्त किया। ६ वर्ष की आयु में छपरा स्कूल में इनका नाम लिखाया गया। जहाँ अपनी तीक्ष्ण बुद्धि के कारण उन्होंने सबको प्रभावित किया। फिर बड़े भाई के साथ पटना और उसके पश्चात् भाई के डाक्टरी पढ़ने कलकत्ता जाने के कारण ये भी कलकत्ता गये, परन्तु बीमारी के कारण छपरा में आकर स्कूल में भर्ती हुए। सन् १९०२ में इन्होंने कलकत्ता विश्व-विद्यालय से 'एण्ट्रेन्स' की परीक्षा पास की और ये सर्वप्रथम हुए। १२ वर्ष की आयु में ही आपका विवाह हो गया था। उस समय वे स्कूल में पढ़ते थे। सन् १९०३ में कलकत्ता प्रेसीडेन्सी कालेज में नाम लिखवाया, जहाँ से आपने एफ. ए. पास किया। सन् १९०५ में आप एफ. ए. की परीक्षा पास कर चुके। उस समय बंग-भंग आन्दोलन में भाग लिया। इस प्रकार सामाजिक जीवन में आपने प्रवेश किया। बी.ए. के अध्ययन-काल में आपका हिन्दी के प्रति प्रेम जाग्रत हुआ। आपने बी.ए. के पश्चात् एम.ए. किया और मुजफ्फर पुर कालेज में प्रोफेसरी कर ली, किन्तु बड़े भाई की इच्छा के अनुसार कुछ मास में ही वकालत पढ़ने कलकत्ता चले गये जहाँ आपने बी.एल. और एम.एल. की परीक्षा पास कर वकालत प्रारम्भ की। सन् १९१६ में बिहार प्रान्त का निर्माण हो गया था और हाईकोर्ट पटना चला आया। राजेन्द्र बाबू भी पटना चले आये।

अपने विद्यार्थी-जीवन में राजेन्द्र बाबू ने कांग्रेस के स्वयंसेवक का कार्य किया था। विद्यार्थियों का संघटन किया था; अतः उनकी प्रसिद्धी हो चली थी।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बिहार प्रान्तीय विद्यार्थी सम्मेलन में भाग लेने तथा सामाजिक सेवा के परिणाम स्वरूप राष्ट्र के कितने ही नेता उनसे परिचित हो चुके थे। वकालत प्रारम्भ करने के समय उन्होंने गोखले से भेंट की। गोखले ने देश-सेवा के लिए राजेन्द्र बाबू को उपदेश दिया तथा आमंत्रित और उत्साहित किया। यद्यपि उन्होंने वकालत न छोड़ी फिर भी गोखले का प्रभाव और उपदेश का असर उन पर पड़ा।

सन् १९१४ की बंगाल-बिहार की भयंकर बाढ़ में राजेन्द्र बाबू ने बाढ़ पीड़ितों की सेवा की। सन् १९१४ में राजेन्द्र बाबू ने पटना की म्यूनिसिपल बोर्ड के सभापति पद पर काम किया, किन्तु १ वर्ष के बाद उस पद से त्यागपत्र दे दिया; क्योंकि उस पद पर रह कर जनता की सेवा में उन्होंने अपने को असमर्थ पाया। बिहार प्रान्त के निर्माण के साथ-साथ विश्वविद्यालय बिल धारा सभा में पेश हुआ, जिसका राजेन्द्र बाबू ने विरोध किया। विश्वविद्यालय की प्रबन्ध समिति में सरकारी आदमी को रखने में आपने विरोध किया। आपके परिश्रम और विरोध के कारण राजेन्द्र बाबू के इच्छानुसार बिल पास हो गया और विश्वविद्यालय की सीनेट बनने पर गवर्नर ने राजेन्द्र बाबू को उसका सदस्य बना लिया। इससे बिहार प्रान्त में उनकी ख्याति बढ़ गयी। सन् १९१६ में अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन लखनऊ में हुआ। इसी वर्ष से राजेन्द्र बाबू की कांग्रेस में रह कर देश-सेवा की व्यापक चेतना का उदय होता है। गाँधी जी को बिहार के समाज-सेवियों द्वारा चम्पारन आने का निमन्त्रण मिला और गान्धी जी चम्पारन आये तो राजेन्द्र बाबू ने उनसे भेंट की। गाँधी जी के साथ चम्पारन में राजेन्द्र बाबू ने बड़ी मेहनत की। गरीब किसानों पर होने वाले अंग्रेजों के अत्याचार का बयान आदि लेकर उस अत्याचार के विरोध और किसानों के दुख दूर करने में गहरा कदम उठाया। गांधीजी की इस सफलता और कार्य-प्रणाली को देख कर राजेन्द्र बाबू उनके भक्त बन गये और उनके आदर्शों पर चलने लगे।

राजेन्द्र बाबू ने बिहार में राष्ट्रीय शिक्षा का प्रचार और स्थापना की, असह योग आन्दोलन में गान्धी जी का साथ दिया। साइमन कमीशन का विरोध भी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उन्होंने बिहार में किया। इस कारण सरकार उनसे चिढ़ गयी। सन् १९३० में उन्हें ६ महीने की सजा हुई। सजा से वापस लौट कर उन्होंने गांधी जी से बम्बई में भेंट की। इस प्रकार गांधी जी का साथ देने तथा उनके अनुसार प्रान्त तथा देश के राष्ट्रीय आन्दोलनों में बराबर भाग लेने के कारण आपको जेल-यात्रा और बीमारियों का सामना करना पड़ा। सन् १९३४ में जब बिहार में भूकम्प आया, तो भूकम्प-पीड़ितों की सेवा का प्रबन्ध अपने बीमारी की हालत में ही किया। सन् १९३४ में आप अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के राष्ट्रपति चुने गये यह आपकी देश-सेवा और लगन का ही परिणाम था कि उत्तरदायित्व का ऐसा महत्त्वपूर्ण पद आपको प्राप्त हुआ। सन् १९३६ में आप प्रान्तीय चुनाव समिति के सदस्य बनाए गये। सन् १९३८ में कांग्रेस मन्त्रिमंडल की स्थापना तथा उसके भंग होने के पश्चात् आपको कई बार जेल की यात्रा करनी पड़ी। सन् ४२ के राष्ट्रीय आंदोलन में आप सदाकत आश्रम में पकड़ लिए गये; किन्तु आंदोलन का कार्यक्रम आप प्रस्तुत कर गये थे, जिसके अनुसार बिहार ने उस आंदोलन में महत्त्वपूर्ण योग दिया।

पश्चात् १५ अगस्त सन् १९४७ के दिन जब देश के शासन का भार कांग्रेस ने लिया, तो शासन के लिए जो विधान परिषद बनी उसके सभापति राजेन्द्र बाबू बनाए गये। आपने बड़ी कुशलता से खाद्यमंत्री का पद भी संभाला। कांग्रेस के राष्ट्रपति-पद से आचार्य कृपलानी के इस्तीफा देने पर उस पद को स्वीकार कर कांग्रेस का नेतृत्व आपने किया।

भारतीय गणतन्त्र के सर्वप्रथम राष्ट्रपति के पद के लिए जनता ने आपको चुना तब से आपके राष्ट्रपतित्त्व में देश आगे बढ़ रहा है।

हिन्दी-सेवा—एक साहित्यिक के रूप में राजेन्द्र बाबू ने हिन्दी की सेवा नहीं की। यद्यपि उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि नहीं लिखे फिर भी उनका हिन्दी के प्रति उत्कृष्ट प्रेम और श्रद्धा का भाव प्रारम्भ से ही रहा है। आज हिन्दी को जो सम्मान प्राप्त है, उसमें राजेन्द्र बाबू का भी प्रयत्न और योग है। राजेन्द्र बाबू जब बी० ए० का अध्ययन कर रहे थे तब हिन्दी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के प्रति उनका प्रेम जाग्रत हुआ। यह प्रेम दिनों-दिन बढ़ता गया। बिहार में जब राष्ट्रीय शिक्षा की व्यवस्था आपने की, तो हिन्दी का आपने उसमें विशे ध्यान रखा। अपने भाषणों तथा सेवा-कार्यों में आप इसी का प्रयोग करते थे। अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के तृतीय वार्षिकोत्सव के समय कल-कत्ते में आप उसकी स्वागत समिति के प्रधान-मन्त्री चुने गये। कार्य व्यस्त के परिणाम स्वरूप आप पटना कांग्रेस में भाग नहीं ले सके। मद्रास के कोक-नाड नगर में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के वार्षिकोत्सव पर उसके सभापति बनाए गये। दरभंगा के बिहार प्रान्तीय साहित्य-सम्मेलन और गुरुकु के संयुक्त प्रान्तीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का सभापतित्व ग्रहण कर हिन्दी के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए आपने भाषण दिये और जनता के हृदय में हिन्दी भाषा का चाव उत्पन्न किया। हिन्दी विद्यापीठ देवघर की प्रबन्ध समिति के सभापति आप हैं।

इस प्रकार अनेक संस्थाओं को सक्रिय सहयोग देकर आपने हिन्दी की सेवा की है और उसके गौरव को बढ़ा रहे हैं। इतना ही नहीं आपने अपनी 'आत्मकथा' हिन्दी में ही लिखी है जो एक महत्त्वपूर्ण आत्मकथा है साहित्य की दृष्टि से उसका मूल्य है। 'खण्डित भारत' आदि कई पुस्तकें आपने लिखी हैं तथा आपके लेख हिन्दी पत्रों में प्रायः छपते रहते हैं। आप देश की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक समस्याओं को सरल भाषा में प्रस्तुत करते हैं।

भाषा शैली—राजेन्द्र बाबू की भाषा सरल, सुबोध और सुन्दर है। आपके लेख देश की समस्त जनता के लिए होते हैं अतः उसी के अनुरूप बोलचाल की भाषा में अपने विचार व्यक्त करते हैं जिससे विषय सबको बुद्धिग्राह्य हो सके। भाषा में जटिलता और दुरूहता के स्थान पर स्वाभाविकता है। इसमें संस्कृत के नित्य व्यवहार के शब्द, उर्दू-फारसी के प्रचलित शब्द तथा प्रान्तीय या स्थानीय शब्द भी पाये जाते हैं। यही कारण है कि एक ओर जहाँ उत्पत्ति, स्वास्थ्यकर, जीवनतत्त्व, पौष्टिक, उपयुक्त आदि शब्द पाये जाते हैं तो दूसरी ओर इस्तेमाल, आबाद, वजह, फर्क, ख्याल, मुताबिक और बरबाद जैसे शब्द भी मिलते हैं। जहाँ हुचकुआ, बुहारन, उपला और बझाये हुए शब्दों का प्रयोग हुआ है

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तो 'कम्पोस्ट' जैसे शब्द भी घुसकर हिन्दी का शब्द भांडार बढ़ाते हैं। राजेन्द्र बाबू की भाषा सरल होते हुए भी सुसंस्कृत, परिमार्जित और शुद्ध है। यह राजनीतिज्ञों और नेताओं के लिए एक आदर्श है।

राजेन्द्र बाबू की शैली व्यावहारिक हृदयग्राही और प्रभावशाली है। वाक्यों में अच्छी गठन है एक श्रृङ्खला है जिससे उनमें शिथिलता नहीं आती। विचारों का सम्बन्ध और क्रम बना रहता है। स्वाभाविकता के कारण उनके कथन का बड़ा प्रभाव पड़ता है; क्योंकि विचारों में स्पष्टता रहती है।

अनुच्छेद १–३

शब्दार्थ—जीवनोपयोगी=जीवन के लिए लाभदायक या काम की। खाद्य पदार्थ=खाने की वस्तुएँ या अन्न आदि। उत्पत्ति=उपज, पैदावार, उत्पादन। उपयोग=व्यवहार, काम में लाना। स्वास्थ्यकर=शक्ति या बल देने वाला स्वास्थ्य के लिए लाभदायक या स्वास्थ्य बढ़ाने वाला। विचारणीय=विचार करने या सोचने विचारने का उचित। अत्यन्त=बहुत अधिक। संस्थाएँ=समुदायों के संगठन, समाज। शक्ति=बल, पोषक तत्व या गुण। धन्धा=रोजगार, पेशा। वैज्ञानिक=विज्ञान सम्बन्धी, विज्ञान के जानकार। अनुसन्धान=खोज। नतीजा=परिणाम, फल। जीवन-दायक=जीवन देने वाला। पोषण=करने वाला। तत्व=गुण, पोषक-तत्व। प्रोत्साहन=बढ़ावा, हिम्मत या उत्साह बँधाकर। प्रचार=फैलाना, चलन, रिवाज, व्यवहार या किसी चीज के उपयोग को बढ़ाने का काम आम लोगों में करना। प्रयोग=व्यवहार, उपयोग। सफलता=कामयाबी, सिद्धि, पूर्णता। दिक्कत—परेशानी। आलस्य=सुस्ती, आलस या अनुत्साह। इस्तेमाल=व्यवहार, प्रयोग, अभ्यास।

जीवनोपयोगी वस्तुओं··· ··· ··· ··· ···विचारणीय विषय है।

यह अवतरण 'गाँव के कुछ उद्योग-धंधे' नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक हैं भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद। विद्वान लेखक ने यहाँ पर खाद्य-पदार्थ तथा स्वास्थ्यकर पौष्टिक भोजन की आवश्यकता के सम्बन्ध में अपने विचार प्रस्तुत किये हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ऐसी बहुत-सी चीजें हैं, जिनके बिना हमारा निर्वाह नहीं हो सकता, जीवित नहीं रह सकते। बहुत-सी चीजें जीवन को बनाए रखने में सहायता करती हैं। उन वस्तुओं में खाने-पीने की चीजें बड़ी महत्वपूर्ण हो सकता है, ये वस्तुएँ सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण न हों, किन्तु उन महत्वपूर्ण आवश्यक वस्तुओं में से खाद्य की वस्तुएँ भी एक हैं। वह कौन-सा उपाय जिससे इन वस्तुओं की उपज या पैदावार अधिक हो और किस रीति से इनको अपने नित्य के व्यवहार या कार्य में लावें ताकि हमें इनका अधि अधिक उपयोग और लाभ मिले। इस बारे में उचित ढंग से सोचा और कि किया जा सकता है और पता लगाया जा सकता है कि मनुष्य कम से कम किन्तु कम खाने पर भी उसे अपना जीवन चलाने के लिए ऐसा भोजन मिल जिससे उसके शरीर में शक्ति और बल बढ़ता रहे। इस प्रकार के गुण और तत्व युक्त भोजन उसे सुलभ रहे कि बलवर्द्धक भोजन पाकर वह अपना जीवन च सके। ऐसे भोजन के लिए भोजन में स्वास्थ्य और शरीर को लाभ पहुँचाने गुण होना जरूरी है जो एक ऐसा प्रसङ्ग है, जिसके बारे में ध्यान देना हम लिए आवश्यक है।

गान्धी जी ने ग्रामोद्योगों को························प्रचार हुआ।

ये पंक्तियाँ 'गाँव के कुछ उद्योग धन्धे' नामक पाठ से ली गयी हैं। इ विद्वान् लेखक हैं देशरत्न बाबू राजेन्द्र प्रसाद जी। लेखक ने प्रारम्भ में बतला है कि अनाज तथा अन्य खाद्य-पदार्थों के मशीन द्वारा साफ करने, कूटने-पी आदि से उसका गुण नष्ट हो जाता है या कम हो जाता है। वह हमारे श के लिए वैसा लाभदायक नहीं रह जाता जैसा हाथ से कूटा पीसा और तै किया हुआ अनाज। इसके प्रसंग में एक और नुकसान के सन्बन्ध में गान्धी जी के कार्य का उल्लेख लेखक ने किया है।

मशीनों और कारखानों से अन्न तैयार करने के कारण गाँव के लोगों एक रोजगार और धन्धा उनके हाथों से छिन जाता है। इसी कारण गान्धी ने गाँवों के रोजगार धन्धों को बढ़ावा या उत्साह देने के विचार से ऐसा प्र किया कि गाँव के लोगों का यह रोजगार वे ही अपने हाथों से सँभालें, दू

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कोई इस रोजगार पर अधिकार न कर सके। अतः इन्होंने ऐसा करने का विचार और इच्छा की। इस रोजगार पर गाँव वालों का अधिकार बना रहने से गाँव वालों को खाने के लिए कम तो मिलेगा, किन्तु उतना खाकर भी जीवन को चलाने या जीवित रहने के लिए भोजन में जिस परिमाण में पुष्ट करने वाले गुणों की आवश्यकता है, वह उन्हें मिल सके और उनकी शारीरिक शक्ति, जो कम हो गयी है, उसकी पूर्ति हो सके वे हृष्ट-पुष्ट और बलवान हो जायँ। इसी विचार से गान्धी जी ने इस बात को लोगों के बीच में फैलाया। व्यवहार और उपयोग द्वारा आम लोगों में इसे फैलाने और बढ़ाने का काम किया, किन्तु इतना सब और इस प्रकार होने पर भी सारे देश के लोगों में इसकी वैसी धूम नहीं मची जैसी चर्खा और खादी की मची हुई है। सब लोगों में इसका रिवाज उतना नहीं फैला जितना चर्खा या खादी। चर्खा और खादी देश भर में खूब फैली उसी प्रकार इसको फैलने की आवश्यकता है।

अनुच्छेद ४५—६

शब्दार्थ—आवश्यक=जरूरी। ईख=गन्ना। विशालकाय=बहुत बड़े। खड़े हो जाना=स्थापित हो जाना। जीवन-तत्व=पोषक तत्व या गुण। वजह=कारण। फर्क=अन्तर। हिस्सा=भाग, अंश। प्रतिक्रिया=एक ओर कोई क्रिया या किसी प्रकार का काम होने पर दूसरी ओर परिणाम स्वरूप कोई क्रिया या किसी प्रकार का काम होना। गुजरकर=होकर। नतीजा=फल, परिणाम। आबाद करना=कहीं कोई स्थान व्यवहार या प्रयोग-उपयोग में लाकर सफल और सार्थक करना। जरूरत=आवश्यकता। मुताबिक=अनुसार। पैदावार=उपज। अनुपात=पहले के समान ठीक परिमाण, अंश या मात्रा। ख्याल=विचार। लालच=लोभ या किसी वस्तु को देख कर पाने की इच्छा। मवेशी=पशु, जानवर। चूँकि=क्योंकि। मौसम=ऋतु। चन्द=कुछ। खत्म=समाप्त। सुस्वादु=स्वाद में अच्छे। पौष्टिक=पुष्ट करने या शक्ति बढ़ाने वाले। वञ्चित=अलग, हीन, रहित। कतार=पंक्ति, श्रेणी। हुचकुआ=सीठा, रस निकालने के पश्चात् गन्ने या ईख का बेकार बचा हुआ भाग। जलावन=ईंधन।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बेकार = व्यर्थ । जनसाधारण = आम जनता या लोग ।

पिछले पच्चीस तीस·························चावल और पीसे आटे का

प्रस्तुत अवतरण 'गाँव के कुछ उद्योग धंधे' नामक पाठ से लिया गया है। इसमें विद्वान लेखक डा० राजेन्द्र प्रसाद ने बतलाया है कि आज से कुछ व पहले चीनी बनाने के बड़े-बड़े कारखाने नहीं थे। इन पंक्तियों का प्रस कारखानों के स्थापित होने पर जो बात हुई है उसी से सम्बन्धित है।

बड़े-बड़े चीनी के कारखानों के न होने पर किसान लोग कोल्हू द्वारा र तैयार कर अपने हाथ से गुड़ बनाते थे। पच्चीस-तीस वर्ष पहले गाँव के छ छोटे-छोटे कारखानों में गुड़ से चीनी बना लिया करते थे, किन्तु अब चीनी बड़े-बड़े कारखाने खुल जाने पर पिछले पच्चीस-तीस वर्षों में चीनी बनाने छोटे-मोटे गाँववालों के कारखाने समाप्त हो गये। करीब-करीब वे सबके स कारखाने अब गाँव वालों द्वारा चीनी तैयार नहीं करते, किन्तु उनकी चीनी जरूरतों को पूरा करने का काम बड़े-बड़े कारखानों द्वारा होने लगा। जहाँ वे छो छोटे कारखाने थे उस स्थान पर बड़े-बड़े कारखाने मिलें बन गयी हैं। जो वि विज्ञान शास्त्र के अच्छे जानकार और विद्वान हैं वे बतलाते हैं कि छो छोटे कारखानों की बनी चीनी में हमारे शरीर और स्वास्थ्य को लाभ पहुँचा हमारे जीवन को बढ़ाने का बहुत अधिक गुण रहता है। वैसा गुण बड़े कारखानों में तैयार की हुई चीनी में नहीं पाया जाता। मशीन का कूटा हु चावल तथा पीसे हुए आटे में शक्ति को बढ़ाने और पोषण करने वाला अ का गुण नष्ट हो जाता है यही बात बड़े-बड़े कारखानों में उत्पन्न हुई चीनी भी है। बड़े कारखानों की तैयार की हुई चीनी का गुण नष्ट हो जाता है उससे हमारे स्वास्थ्य और शरीर को कोई लाभ नहीं पहुँचता।

इसका यह नतीजा·······································मिलता था

प्रस्तुत अवतरण डा० राजेन्द्र प्रसाद लिखित 'गाँव के कुछ उद्योग धं नामक पाठ से लिया गया है। बड़े-बड़े चीनी तैयार करने के कारखानों के ह जाने पर गाँव वालों के रोजगार और जीवन पर उसका जो प्रभाव पड़ा, उ वर्णन लेखक ने इन पंक्तियों में दिया है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गाँवों के हजारों कोल्हू के बन्द हो जाने तथा उसका काम बड़े-बड़े कारखानों में मशीनों द्वारा होने का परिणाम गाँव वालों के लिए अच्छा न हुआ। किसानों का कोल्हू चलने से खेती का लाभ मिलता था और उनको अपने परिश्रम को हाथ से करने तथा उसका लाभ उठाने में एक प्रकार की खेती की उपज का आनन्द मिलता था। अब उस लाभ और आनन्द का मिलना बन्द हो गया; क्योंकि उनके उत्पन्न किये हुए गन्ने की उपज से वे रस पैदा नहीं करते किन्तु कारखानों में उसका काम होने लगा। गाँव के किसान अपने छोटे-छोटे बैलों से खेती कर गन्ना पैदा करते व अपने बैलों व खेतों को सफल और सार्थक कर आनन्द मनाते थे। उनका उपयोग व काम बराबर होता रहता था। बैलों का पालन होता रहता और खेत उपजाऊ व उपज के काम में आते रहते थे। उन खेतों में अपनी आवश्यकता के अनुसार तरह-तरह की उपज बोते, तैयार करते व काटते थे और जब रुपये-पैसे या धन की आवश्यकता होती तो ईख बोते और उसकी पैदावार होने पर कोल्हू के द्वारा रस और गुड़ तैयार कर लेते थे, जो उनके लड़के-बच्चों के खाने के काम में आता। धन की अधिक आवश्यकता पड़ने पर अपना तैयार किया हुआ गुड़ बाजार में बेच देते जिससे उन्हें अच्छे पैसे मिलते वे खेतों का लगान देते तथा पहिनने को आवश्यकता के अनुसार वस्त्र खरीदने में उन पैसों का उपयोग करते थे। इस प्रकार जीवन बिताने के कारण वे बिना रोजगार के खाली नहीं बैठते थे। उनका समय बेकार बैठने में नहीं खर्च होता था ; क्योंकि उनके पास रोजगार व कार्य रहता जिसे वह साल भर बराबर करते रहते। किसी भी समय खाली या बेकार उनको नहीं बैठना पड़ता। किन्तु कारखानों में चीनी तैयार होने के कारण उनका रोजगार छिन गया और साल भर के लिए उन्हें पूरा काम नहीं रहता। बेकार बैठना पड़ता है।

अनुच्छेद ७—६

शब्दार्थ—बहुतायत=अधिकता, ज्यादती। आयुर्वेद=भारतीय चिकित्सा-प्रणाली या उसका शास्त्र। चिकित्सक=चिकित्सा या इलाज करने वाले;

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

डाक्टर, वैद्य, हकीम आदि। उपयुक्त=योग्य, उचित, लायक। ताड़ी= एक प्रकार के ताड़ नामक पेड़ से प्राप्त होने वाला रस जो नशे के पदार्थ के रूप में पिया जाता है। वझाये हुए=काम में लगाये या फँसाए हुए। अंश=हिस्सा, भाग। वरबाद=नष्ट, व्यर्थ जाना। दुर्गन्ध=बुरी बास या गन्ध। संग्रह करना=इकट्ठा करना। धारण कर लें=ले लें। उपजाने=पैदा करने। ग्राम-सुधार=गाँवों का सुधार या उन्नति। ग्रामोद्योग=गांव अथवा गांव वालों के रोजगार-धंधे। बुहारन=कूड़ा-कर्कट, गन्दगी। जलावन=ईंधन। उपला= कंडे, गोबर से बनाया हुआ जलाने का एक प्रकार का ईंधन। साधन=जरिया। मुमकिन=सम्भव। आसानी=सरलता। कुप्रथा=बुरा रिवाज या चलन। नजदीक=पास। जलाशय=कुंआ, तालाब, नदी आदि जल का स्थान जिनसे जल मिलता है। खाद=वह पदार्थ जो खेत में उपज बढ़ाने के लिए डाला जाता है। कम्पोस्ट=एक प्रकार की खाद तथा उसको इकट्ठा कर सड़ा-कर बनाने की क्रिया। परिवर्त्तित करना=बदलना, नया या अन्य रूप देना। प्राकृतिक=प्रकृति से सम्बन्ध रखने वाली, साधारणतः पायी जाने वाली। कृषि=खेती। समस्या=प्रश्न, कठिन अवसर या प्रसंग। बहुत हद तक= काफी अंशों में, अच्छी सीमा तक, पर्याप्त मात्रा में, अधिकांश।

आजकल गाँवों में ऐसी··· ··· ··· ··· ···सुन्दर खाद मिल जाए।

यह अवतरण 'गांव के उद्योग धंधे' नामक पाठ से लिया गया है। इसके विद्वान लेखक डा० राजेन्द्र प्रसाद का कहना है कि लोग गाँवों में गोबर, मल-मूत्र आदि को व्यर्थ ही इधर-उधर नष्ट करते हैं जिसका खाद के रूप में अच्छा उपयोग हो सकता है तथा सफाई भी आँखों में आ सकती है। गाँवों की गन्दगी के सम्बन्ध में यहाँ पर लेखक ने उसी प्रसंग में विचार प्रस्तुत किया है।

आजकल गांवों में एक बुरी चलन पायी जाती है, जो हर जगह देखने में आती है। वहाँ लोग घरों के आसपास, सड़कों और गलियों में खुले स्थान पर बीच में ही जहाँ से लोग आया जाया करते हैं अथवा कुओं, तालाबों, नदियों आदि पानी मिलने के स्थानों के चारों ओर पेशाब तथा मैले आदि का विसर्जन करके गन्दगी फैला देते हैं। लोग इस बात का विचार रखें कि खाद के रूप में

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

खेतों के लिए इनका अच्छा उपयोग हो सकता है। इन गन्दे पदार्थों से उपज को बड़ा लाभ पहुँचता है और ये वस्तुएँ ही खाद का रूप ले सकती हैं। इस बात का ध्यान रखने पर गाँव वाले यदि थोड़ा-सा भी प्रयत्न करें, तो गावों में घरों के आस-पास या पानी मिलने वाले स्थानों के चारों ओर वह गन्दे पदार्थ इकट्ठे न हों और उनसे बीमारियाँ न फैलें। गन्दगी का उत्पन्न होना और उससे बीमारियों का फैलना बन्द हो जाय। इससे सफाई और स्वास्थ्य का गाँव वालों को लाभ तो होगा ही किन्तु एक फायदा इसी के साथ-साथ और होगा कि खेतों को उपजाऊ बनाने के लिए उन्हें जो खाद खरीदनी पड़ती है वह न खरीदनी पड़े, किन्तु यही गन्दी वस्तुएँ उनके खेतों के लिए खाद का काम करें।

इसी तरह बुहारन को.....................हुआ करती हैं।

प्रस्तुत गद्यांश 'गाँव के कुछ उद्योग-धन्धे' नामक पाठ से लिया गया है। इस पाठ के विद्वान् लेखक देशरत्न राजेन्द्र प्रसाद हैं। लेखक ने खाद के सम्बन्ध में मलमूत्र-गोबर, गन्दगी आदि के पदार्थों को व्यवहार में लाने के लिए अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। इस अवतरण में झाड़ने-बुहारने से निकली हुई गन्दगी को एक ढंग से कम्पोस्ट खाद के रूप में बदलकर उसके तरीके और उपयोग सम्बन्धी विचार प्रकट किये हैं।

मलमूत्र की तरह घर के झाड़ने-बुहारने से निकले हुए कूड़े-कचड़े को भी कम्पोस्ट के ढंग से खाद के रूप में बदला जा सकता है। कूड़ा-कचड़ा अच्छी खाद बन सकता है। कम्पोस्ट ढंगसे बनायी हुई खाद जो कम्पोस्ट कही जाती है उसका तैयार करना बड़ा सरल और आसान है, उसमें कठिनाई जरा भी नहीं पड़ती। एक-दो फुट गड्ढे को खोदकर उसमें कूड़ा-कचड़ा डालकर समतल कर दिया जाता है उसके बाद फिर गोबर की तह लगाई जाती है। इसी प्रकार एक बार कूड़े की तह और फिर गोबर की तह बराबर बिछाते जाते हैं यही कम्पोस्ट बनाने का तरीका है। बीच में पानी भी डालते रहना पड़ता है। इस प्रकार पानी का सिंचाव करते रहने और गोबर तथा कूड़े की तह लगाते रहने से चार-छः महीने में वे चीजें खाद के रूप में तैयार हो जाती हैं। इस तरह बनाई हुई खाद अन्य खादों की अपेक्षा अच्छी और अधिक लाभदायक होती है

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इसका कारण यह है कि इसमें कूड़ा-कर्कट तथा गोबर के रूप में आम तौर पर पायी जाने वाली स्वाभाविक वस्तुओं का संग्रह होता रहता है जो खाद को अच्छा गुण और तत्व देता है।

हर्ष और राज्यश्री

ले० श्री जयशङ्कर 'प्रसाद'

परिचय—साहित्य की सर्वतोमुखी प्रतिभाशाली स्वनामधन्य लेखक, कवि और नाटककार श्री जयशङ्कर 'प्रसाद' का जन्म संवत् १९४६ (सन् १८८९) में काशी के एक प्रतिष्ठित वैश्य परिवार में हुआ था। आपके पितामह श्री शिवरत्न साहु उदार, दानशील तथा साहित्य प्रेमी थे। इनके समय से ही सुँघनी-सुरती आदि का व्यवसाय होता था अतः सुँघनी साहु नाम से ही इनका परिवार प्रसिद्ध हो गया। 'प्रसाद' जी के पिता का नाम देवी प्रसाद साहु था जो बड़े उदार, सज्जन और साहित्य प्रेमी थे। दादा तथा पिता के काल से ही इनके यहाँ कवियों, गायकों, कलाकारों एवं विद्वानों का आना-जाना लगा रहता था। पिता एक ओर जहाँ कसरत और शारीरिक-व्यायाम के प्रेमी थे तो दूसरी ओर काव्य के रसिक भी। उनके यहाँ काव्य-चर्चा होती रहती। ऐसे कुल में जन्म पाकर लड़कपन से ही उदारता, व्यायाम, कवि-चर्चा, सत्संग आदि का प्रभाव बालक 'प्रसाद' पर अच्छी तरह पड़ा। साहित्य और काव्य-रचना की रुचि इनमें जाग्रत हुई। ये लुक-छिप कर कविता करने लगे।

प्रसाद जी को स्कूल में शिक्षा प्राप्त करने का अच्छा अवसर प्राप्त न हो सका। आपने हिन्दू स्कूल तथा क्वींस कालेज में शिक्षा पायी। किन्तु क्वींस-कालेज से सम्बद्ध स्कूल में जब आप सातवीं कक्षा में पढ़ रहे थे तो कई कारणों से आपको स्कूल छोड़ देना पड़ा। 'प्रसाद' जी की शिक्षा का प्रबन्ध उनके बड़े भाई शम्भुरत्नजी ने घर पर ही कर दिया। आपने हिन्दी-संस्कृत, अंग्रेजी, फारसी तथा भारतीय इतिहास का अध्ययन घर पर ही किया। दीनबन्धु ब्रह्मचारी नामक एक सज्जन आपको संस्कृत पढ़ाते थे जो वेद और उपनिषद् के अच्छे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ज्ञाता एवं सात्त्विक वृत्ति के सभ्य और सदाचारी व्यक्ति थे। उनके जीवन तथा वेदों, उपनिषदों एवं पुराणों के शिक्षण का प्रसाद जी पर अच्छा प्रभाव पड़ा। इसमें उन्होंने बड़ी रुचि दिखलाई।

संवत् १९५७ में आपने अपनी माता के साथ धारा-क्षेत्र, ओंकारेश्वर, पुष्कर, उज्जैन, जयपुर, व्रज, अयोध्या आदि प्रसिद्ध स्थानों की धार्मिक यात्रा की। नर्मदा नदी के उद्गम-स्थान अमरकण्टक की यात्रा के समय पर्वत मालाओं की प्राकृतिक शोभा और उस प्रदेश की वन-श्री ने आपके हृदय में अपार उल्लास और प्रेरणा का समावेश किया। वहाँ की नौका-यात्रा तथा प्रकृति का मनोरम दृश्य सदा आपकी आँखों के सामने झूमता तथा आजीवन आनन्द-विभोर करता रहा।

बारह वर्ष की आयु में आप के पिता का देहावसान हो गया। इसके तीन वर्ष बाद सं० १९६१ में इनकी माता का भी देहान्त हो गया, जिससे इनके हृदय पर चोट लगी। यद्यपि परिवार तथा व्यापार का कार्य इनके भाई शम्भुरत्न जी सँभालते थे; फिर भी कुछ न कुछ कार्य इन्हें भी देखना पड़ता। इन दिनों प्रसाद का व्यथित हृदय तुकबन्दी जोड़ने लगा। ये प्रायः चोरी-चोरी कविता करते। इनकी कविताएँ इस समय व्रज भाषा में होती थीं। सं०१९६२ में प्रसादजी ने व्रजभाषा में प्रेम-पथिक की रचना की तथा बहुत-सी फुटकर कविताएँ लिखीं।

दुर्भाग्यवश सं० १९६३ में इनके बड़े भ्राता शम्भुरत्न जी का भी स्वर्गवास हो गया। इस प्रकार यौवन के द्वार पर पैर रखते ही प्रसाद जी पर यह पारिवारिक आघात था। आपका हृदय आघातों से जर्जरित होता रहा। अपने वैवाहिक जीवन में भी दो बार आपको पत्नी-वियोग सहना पड़ा। परिवार में केवल भ्रातृवधू रह गयीं। प्रसाद जी उनका अत्यधिक सम्मान करते थे। वे भी इन्हें पुत्र की तरह प्यार करती थीं। दो पत्नियों की मृत्यु के पश्चात् आपने विधुर रहने का निश्चय किया था, किन्तु भाभी के कहने पर आपने तीसरा विवाह भी किया। इसी पत्नी से एक पुत्र का जन्म हुआ, जिसका नाम इन्होंने रत्नशंकर रखा।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस प्रकार कवि के जीवन पर कौटुम्बिक और पारिवारिक परिवर्त्तनों और मानसिक उथल पुथल ने बड़ा प्रभाव डाला। उनका पारिवारिक जीवन सुखमय नहीं रहा। कठोर परिस्थितियों के कारण ऋण लेना पड़ा और वे चिन्तित रहने लगे। इनके कन्धों पर गृहस्थी का भार था। कुछ पैतृक सम्पत्ति को बेचकर ऋण से मुक्त होना पड़ा।

इनका परिवार कट्टर शैव था। प्रसाद जी ने शैव-दर्शन और उसके तत्त्व-ज्ञान का अच्छा अध्ययन किया था, जिस कारण जीवन के प्रति आनन्द का भाव उनमें था। वेद-उपनिषद्, पुराण का गंभीर अध्ययन-चिन्तन तथा संस्कृत भाषा एवं भारतीय इतिहास का उन्होंने अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। उन्होंने बौद्ध-दर्शन का भी साक्षात्कार किया। वे सरल प्रकृति के चिन्तन और मननशील व्यक्ति थे। अपने व्यवसाय के साथ-साथ साहित्य-सेवा में वे प्रवृत्त हुए। दूकान पर नित्य ही साहित्य-मंडली एकत्रित होती और काफी देर तक साहित्य-चर्चा होती रहती।

सं० १९६४ के लगभग 'भारतेन्दु' में पहली बार आपकी कविता प्रकाशित हुई, किन्तु आपकी सेवा और साहित्य-सर्जना का श्री गणेश इन्दु के प्रकाशन के साथ-साथ सन् १९१० से प्रारम्भ होता है। बीस वर्ष की आयु तक तो आपने बराबर ब्रजभाषा में ही कविता की है। बाद में आप खड़ी बोली या हिन्दी से प्रभावित हुए और उसी में रचनाएँ कीं। आपके भाञ्जे बाबू अम्बिका प्रसाद गुप्त ने इन्दु का प्रकाशन प्रारम्भ किया। आपका पहला गद्यलेख तथा सर्वप्रथम कहानी 'ग्राम' १९११ में उसमें प्रकाशित हुई। फिर तो नियमित रूप से आपकी कविता; कहानी, उपन्यास, नाटक और निबन्ध उसमें प्रकाशित होने लगे। हिन्दी में आपने नवीन-युग का द्वार खोला। कविता में नई धारा का प्रवर्तन, नये भावों और नयी शैली को जन्म दिया। हिन्दी में मौलिक नाटकों की रचना की। आप हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ नाटककार के रूप में प्रसिद्ध हुए। उपन्यास और कथा-साहित्य में अपनी देन के द्वारा हिन्दी के भाण्डार को भरा। कथा-साहित्य में आपने एक स्कूल की स्थापना की, जो आपकी विशिष्ट शैली का ही परिणाम

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है। साहित्य के खोज सम्बन्धी निबन्धों की रचना की जिनका साहित्य में बड़ा महत्त्व है।

भावों और छन्दों की नवीनता आदि के कारण आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी से आपका साहित्यिक मतभेद हुआ। इस कारण आपकी रचना 'सरस्वती' में न छप सकी, किन्तु काव्य में आपने नये-नये भाव और अतुकान्त छन्दों का सर्वप्रथम प्रवर्तन किया। आपने छायावाद का प्रारम्भ किया, जिसके चलाने में आपके अलावा निराला और सुमित्रानन्दन पन्त का योग हिन्दी की समृद्धि में सहायक हुआ। सारा हिन्दी-जगत आपसे प्रभावित हुआ। प्रेमचन्द, विनोद शंकर व्यास, वाचस्पति पाठक, पं० शान्तिप्रिय द्विवेदी, रायकृष्ण दास आदि कितने ही लेखक और कवि आपके मित्र थे।

साहित्य को आपने व्यवसाय के रूप में नहीं माना। यह आपके जीवन की चेतना रहा है। साहित्य से प्राप्त तथा पुरस्कार आदि के रूप में मिला हुआ धन आपने नागरी-प्रचारिणी को दान में दे डाला। आपको प्रचार आदि से चिढ़ थी, अतः कवि-सम्मेलनों आदि में शायद ही कभी गये हों। आप स्वतन्त्र, संयमी धार्मिक और उदार प्रवृत्ति के महान् साधक और साहित्य-सेवी थे। आधुनिक साहित्य को आपने प्राचीनता का सुदृढ़ आधार तथा नवीन दृष्टिकोण और विचार दिये। आप बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न मौलिक और सर्वप्रथम साहित्यकार थे।

संवत् १९९४ में 'प्रसाद' जी राजयक्ष्मा रोग से पीड़ित हो गये और इसी रोगने अल्पकाल में ही हिन्दी के इस साहित्यकार को छीन लिया। १५ नवम्बर सन् १९३७ के दिन आपकी इहलीला समाप्त हुई।

साहित्य साधना—श्री जयशंकर 'प्रसाद' की साहित्य-साधना बहुमुखी है। प्रसाद जी हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ मौलिक नाटककार, महान् कवि, अमर कहानीकार एवं उपन्यासकार तथा एक अच्छे निबन्ध लेखक थे। साहित्य के इन सभी अङ्गों, सभी रूपों में उन्होंने श्रेष्ठ रचना की है। इस महान् साहित्यकार की गति सर्वत्र समान रूप से दृष्टिगोचर होती है। उनकी प्रसिद्धि का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि उनकी सम्पूर्ण रचनाएँ कालेज के एफ़० ए०, बी० ए० और

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एम. ए. के पाठ्य-क्रम में पढ़ाई जाती हैं। उनकी रचनाओं पर कितने लोगों ने डाक्टर की उपाधियाँ प्राप्त कर ली हैं। सारी हिन्दी-जनता उनकी रचनाओं को आदर और भाव के साथ पढ़कर अपनी श्रद्धा समर्पित करती है। यहाँ हम उनकी विभिन्न रूपों की अलग-अलग सेवा का विचार करेंगे।

नाटककार—'प्रसाद' जी के नाटक हिन्दी में सर्वश्रेष्ठ और अनुपम हैं। नाटककार के रूप में उनका स्थान सर्वोच्च है। प्रसाद के पहले भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने कई नाटक लिखे थे। हरिश्चन्द्र के समकालीन लेखकों में भी नाटकों की मौलिक प्रतिभा न थी। उनके नाटकों में नाटक के गुण-तत्त्व का समावेश ठीक न था। न कथानक की स्पष्टता, न चरित्र-चित्रण और न कोई उद्देश्य ही ठीक-ठीक लक्षित हो पाता। प्रसाद ने सर्वप्रथम अपने नाटकों में भावों की परिपक्वता, रस सिद्धान्त और पश्चिम के शील-वैचित्र्य का समावेश किया, उनके चरित्रों में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण आया। कथोपकथन, दृश्यों और अंकों की योजना, घटनाओं के अच्छे क्रम द्वारा सुन्दर प्रभाव उत्पन्न हुआ। भारतीय इतिहास के स्वर्णिम-युग से उन्होंने अपनी कथा और पात्रों को लिया और कल्पना द्वारा सुन्दर नाटकों की सृष्टि की। प्रसाद के अधिकांश नाटक ऐतिहासिक हैं, किन्तु पौराणिक घटना और प्रसङ्ग को लेकर भी 'जनमेजय का नागयज्ञ' जैसा सुन्दर नाटक प्रस्तुत किया, 'कामना' और 'एक घूँट' जैसे भावनात्मक नाटक लिखे। ऐतिहासिक कथानक को लेकर ऐतिहासिक पात्रों की सृष्टि और देश-काल का चित्रण करना बड़ा दुष्कर कार्य है। कल्पना के कारण ऐतिहासिक घटनाओं पर आघात नहीं हुआ, किन्तु ऐतिहासिक पात्र बड़ी कुशलता से सजीव और क्रियाशील रूप पा गये हैं।

हिन्दी का रंगमंच न होने से 'प्रसाद' के नाटकों को खेलने में कठिनाई मानी जा सकती है, किन्तु वे सफलतापूर्वक अभिनीत किये जा सकते हैं। उसको पढ़कर भी अपार आनन्द प्राप्त किया जा सकता है। राज्यश्री नाटक में हर्षकालीन राजनीतिक, सामाजिक स्थिति का बड़ा सुन्दर चित्रण हुआ है। उस समय की धार्मिक स्थिति का भी हमें उक्त नाटक में अच्छा परिचय मिलता है। प्रसाद जी ने नाटकों में नयी शैली को अपनाया है। उनके

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चरित्र इतिहास के मुर्दे नहीं किन्तु जीवित पात्र हैं। वे जब बोलते हैं तो वातावरण गूँज उठता है, लड़ने के अवसर पर हमारी भुजायें फड़क उठती हैं। प्रेम-विभोर हो जब मधुर भाव में तन्मय होते हैं, तो हमें आनन्द का अनुभव होता है। उनपर जब कष्ट आते हैं तो हमारी सहानुभूति जाग पड़ती है। प्रसाद के चरित्र-चित्रण और कथोपकथन में भावों और विचारों का ऐसा ही वेग और प्रभाव है। कहीं-कहीं कथोपकथन में भावुकता और भावावेग अधिक हो गया है और वे आवश्यकता से अधिक लम्बे हो गये हैं। कुछ दोषों के रहते हुए भी वे अनुपम हैं।

नाटकों की भाषा गंभीर और प्रभावपूर्ण है। नाटकों में प्रेम की व्यंजना होते हुए भी उसमें ओछापन या छिछलापन नहीं। मानव के सभी भावों और वृत्तियों का समावेश उनके भिन्न-भिन्न पात्रों में होता है। उनके नारी पात्र आदर्श और शक्ति की मूर्त्ति और प्रेरणा तथा चेतना का उद्‌गम हैं। देश-प्रेम, राष्ट्र-प्रेम, समाज-सेवा आदि की भावना से उनके नाटक ओतप्रोत हैं। ऐतिहासिक पात्रों को लेकर भी नाटककार ने सुन्दर सृष्टि की है। वे एक ऊँची कोटि के श्रेष्ठतम नाटककार हैं।

कवि—प्रसाद जी की बीस वर्ष तक के जीवन की प्रारम्भिक रचनायें ब्रज भाषा में थीं और उनमें से अधिकांश रचनायें समय के अनुसार खड़ी बोली में लिखी गयीं। इनकी ब्रज भाषा की रचनायें 'चित्राधार' में संग्रहित हैं। 'कानन कुसुम', 'महाराणा का महत्व', 'करुणालय', 'प्रेम-पथिक' और 'झरना' थे खड़ी बोली की पाँच कविता-पुस्तकें हैं। जो सन् १९२० के पहले निकलीं। इन रचनाओं में द्विवेदी-युग की इतिवृत्तात्मकता है, किन्तु इन पाँच पुस्तकों के रचना-काल में हिन्दी के कवि का अच्छा विकास हो गया। इसकी भाषा मँज गयी और शैली में प्रौढ़ता आ गयी। 'प्रेम-पथिक' तथा 'महाराणा का महत्व' द्वारा प्रसाद ने हिन्दी में अतुकान्त छन्दों का प्रचलन प्रारम्भ कर एक नया रूप सामने रखा। 'झरना' में कवि ने नूतन पद्धति अपनायी तथा इसके दूसरे संस्करण में छायावाद की सारी विशेषता तथा भावों की नवीन अभिव्यक्ति का समावेश हो गया। प्रसाद जी में माधुर्य, भाव की व्यञ्जना, भावुकता एवं कल्पना

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

की अनोखी सूझ प्रारम्भ से ही थी। संस्कृति की कोमल-कांत पदावली से युक्त मँजी हुई गम्भीर और सशक्त भाषा ने भावों को मार्मिक और सरस बना दिया और इस प्रकार से काव्य-कला का सुन्दर रूप 'आँसू' द्वारा सामने आया। इस रचना ने हिन्दी में धूम मचा दी। इसमें रहस्य भावना और अनुभूति मधुर कल्पना, कोमल व्यञ्जना तथा संगीत सभी कुछ मुखरित हो उठा। इसके पश्चात् 'लहर' द्वारा रहस्यवादी वाणी और भी गूँजी। गीत-शैली अच्छी तरह स्फुट हुई। अभी तक कवि में दार्शनिकता का समावेश न था, 'कामायनी' में उसका पूरा-पूरा समावेश हो गया। इस महाकाव्य में मानवों के आदि पुरुष मनु द्वारा नूतन मानवी सृष्टि के प्रादुर्भाव की कथा के साथ-साथ उसके मूल में मानवता के विकास के आध्यात्मिक आधार की विवेचना की गयी है। इस प्रकार एक विशाल और उच्च भावना को रूप देकर शैवों के 'आनन्दवाद' की प्रतिष्ठा कवि ने की है। प्रकृति के विशाल प्रांगण में विशद् कल्पनाओं और मार्मिक उक्तियों के साथ मनु, श्रद्धा, इड़ा और मानव के जीवन का चित्रण हुआ है। रूपकों की सुन्दर-सुन्दर उद्भावना के द्वारा जीवन में बुद्धि और हृदय के सामञ्जस्य का विचार प्रतिपादित हुआ है। हृदय की रागात्मिका वृत्ति है 'श्रद्धा', बुद्धि की व्यवसायात्मिका वृत्ति है 'इड़ा'। एक का आधार है विश्वास और कार्य तो दूसरी का आधार है तर्क और कारण। श्रद्धा है आनन्द का स्रोत, इड़ा है उसको जलाने और तपाने वाली प्रचण्ड ज्वाला। एक है जीवन का मार्ग दूसरा है अवरोध। एक में है समर्पण दूसरे में है अधिकार। दोनों दो सीमाएँ हैं। इन दोनों का सामञ्जस्य ही है मानव जीवन का इष्ट और सुन्दर विकास। इस प्रकार प्रबन्ध-काव्य के क्षेत्र में छायावाद का बड़ा सफल प्रयोग कवि ने किया है।

कवि प्रसाद के काव्य में संगीत और ध्वन्यात्मकता है। सौन्दर्य है, प्रेम है, वासना है और है इन तीनों की मीमांसा। प्रेम का घृणित स्वरूप नहीं उसमें शुद्ध और स्वस्थ लौकिक प्रेम तथा पारलौकिक प्रेम दोनों हैं लौकिक प्रेम में वियोग और विदग्धता तथा पारलौकिक प्रेम में भी उसकी अनुभूति है। नयी भावना, नयी अनुभूति, नयी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कल्पना तथा इनकी अभिव्यक्ति की शैली भी नयी है। मानवीय सौन्दर्य के शारीरिक और प्राकृतिक एवं प्रकृति के चित्र भी अनुपम हैं, उनमें सजीवता और चित्रात्मकता है। भावनाओं में अपूर्व और अनूठी मूर्तिमत्ता है। छायावाद का प्रयोग एक ओर जहाँ रहस्यवाद के अर्थ में अनन्त और अज्ञात प्रियतम को आलम्बन बनाकर अत्यन्त चित्रमयी भाषा में हुआ है तो दूसरी ओर काव्य शैली या पद्धति विशेष के व्यापक अर्थ में प्रस्तुत के द्वारा अप्रस्तुत के कथन में उसकी व्यंजना करने वाली छाया के रूप में प्रस्तुत हुआ है। इस तरह काव्य में प्रतीक शैली का सुन्दर निर्माण प्रसाद जी ने किया है। छायावाद अपने दोनों रूप में उनके काव्य में मिलता है। अप्रचलित छन्दों के प्रयोग द्वारा भी कवि ने साहित्य को समृद्ध किया।

प्रसाद ने हिन्दी काव्य को ऊँचे आसन पर बैठाया। उनके काव्य में मानव की उदार भावनाओं के साथ-साथ एक आदर्श, एक उद्देश्य और विश्व भावना का एक उच्च स्वर है। जीवन का मधुर-सरस संगीत है और सर्वोपरि है एक सत्य। युग-युग के मानव के लिए उनका काव्य एक सन्देश देता रहेगा।

उपन्यासकार—प्रसाद जी ने अपने मौलिक और कलात्मक उपन्यासों द्वारा हिन्दी के उपन्यास-साहित्य को समृद्ध और उसके अभाव को दूर किया है। उनके उपन्यासों में कंकाल और तितली ने समाज की नयी-नयी समस्याओं को उसके समाधान के साथ चित्रित किया है साथ ही समाज की विषमता और खोखलेपन को प्रस्तुत किया है। आडम्बर और धर्म के नाम पर प्रचलित ढोंग के कारण पीड़ित व्यक्तियों के चित्रण में देश-काल-पात्र का यथार्थ दिग्दर्शन कराया है। कंकाल और तितली ऐसे ही उपन्यास हैं। एक में नागरिक जीवन की और पात्रों का चित्रण, विश्लेषण और विकास तथा दुर्बलताएँ हैं तो दूसरे में ग्रामीणों का जीवन, उनकी समस्याएँ तथा उसका समाधान है। प्राकृतिक दृश्यों के उचित और यथावसर वर्णन के साथ-साथ नाटकीय कथोपकथन का सुन्दर समावेश है, जिससे घटनाएँ उत्पन्न होती और बड़े स्वाभाविक ढंग से उसकी शृंखला स्थापित होती है। भावावेश की व्यंजना होने पर भी भाषा में सरलता और स्वाभाविकता है। मानव के स्थायी अन्तर्द्वन्द्वों का प्रसंगानुसार

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सफल विवेचन हुआ है ; अतः उसमें उपन्यासों का साहित्यिक गुण है जो किसी देश-काल की सीमा में बँधकर नहीं रह जाते। मानसिक अन्तर्द्वन्द्व सर्वत्र और सब काल में रहेगा अतः उपन्यासों के इस गुण के कारण उपन्यासों का महत्त्व सदा बना रहेगा।

कहानीकार—इस रूप में 'प्रसाद' जी का गौरव और देन बड़ी महत्वपूर्ण है। 'प्रसाद' जी ने भावना-प्रधान, चरित्र-प्रधान तथा ऐतिहासिक कहानियाँ लिखी हैं। कई कहानियों में कहानी के सभी तत्वों का पूर्ण निर्वाह हुआ है, तो कुछ कहानियाँ मानसिक अन्तर्द्वन्द्व और चरित्र-चित्रण के कारण बड़ी सुन्दर हैं। उनकी भावना-प्रधान कहानियाँ आकार में छोटी हैं। बिसाती उसका सुन्दर उदाहरण है। 'मधुआ', 'गुंडा' आदि चरित्र प्रधान कहानियों में श्रेष्ठ हैं। ऐतिहासिक कहानियों में 'ममता' 'पुरस्कार', 'आँधी' आदि ऐसी कहानियाँ हैं जो अनूठी हैं। 'आकाश दीप' जैसी कुछ कहानियों में अन्तर्द्वन्द्व के साथ-साथ भारतीय रीति-रिवाज और संस्कृति का अच्छा आभास दिया है। कहानियों का प्रारम्भ और अन्त करने में प्रसादजी सिद्धहस्त थे। किसी-किसी कहानी का नाटकीय और कथोपकथन से प्रारम्भ कहानी में रोचकता के साथ-साथ घटना को बड़े स्वाभाविक ढंग से आगे बढ़ाता है। कहीं-कहीं बड़े सांकेतिक ढंग से उसका अन्त होता है, जिससे एक महान प्रभाव पाठक पर पड़ता है। इन कहानियों में भावों का बड़ा सुन्दर चित्र प्रस्तुत हुआ है। कहानियों की भाषा सरल और वाक्य छोटे-छोटे हैं। कहीं-कहीं पर भावावेश के कारण कुछ स्थल विशेष पर वाक्य लम्बे और जटिल हो गये हैं। प्रकृति-चित्रण का अच्छा समावेश हुआ है।

कहानीकार के रूप में प्रसाद जी की एक देन है कहानी की विभिन्न शैलियों का प्रयोग। 'देवदासी' नामक कहानी में उन्होंने पत्रात्मक शैली अपनायी है। कहीं-कहीं बड़ी सांकेतिक और मार्मिक व्यञ्जना हुई है।

संक्षेप में कहानीकार के रूप में उनकी श्रेष्ठता और देन साहित्य में एक निश्चित स्थान और महत्त्व रखती है।

निबन्धकार—'प्रसाद' जी के कुछ प्रारम्भिक निबन्ध चित्राधार में तथा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गंभीर निबन्ध 'काव्य-कला तथा अन्य निबन्ध' नामक पुस्तक में संग्रहीत हैं। प्रसाद जी ने अधिकांश साहित्यिक विषयों से सम्बन्धित विषय लिखे हैं जैसे काव्य और कला, रस, रहस्यवाद, आदर्शवाद और छायावाद, आरम्भिक पाठ्य-काव्य, रङ्गमञ्च, नाटकों में रस का प्रयोग आदि विषय की गंभीरता के कारण ये निबन्ध पांडित्यपूर्ण तथा अपेक्षाकृत अधिक गंभीर शैली में हैं। इसकी भाषा भी क्लिष्ट है तथा उद्धरणों से युक्त हैं। अतः विषय प्रधान होने के कारण इनका प्रयोजन और उद्देश्य सीमित है। इनसे विषय का ज्ञान और लेखक के विचारों की जानकारी हो सकती है, किन्तु रोचकता या भाषा-शैली की धारावाहिकता या प्रभाव की आशा रखना व्यर्थ है। निबन्धकार के रूप में उन्हें वैसी सफलता भी नहीं मिली फिर भी इनके निबन्धों का साहित्यिक महत्त्व है।

रचनाएँ—

नाटक—सज्जन, प्रायश्चित्त, राज्य श्री, विशाख, अजातशत्रु, जन-मेजय का नागयज्ञ, कामना, चन्द्रगुप्त, स्कन्दगुप्त, एक घूँट और ध्रुवस्वामिनी।

काव्य—कानन-कुसुम, करुणालय, महाराणा का महत्त्व, प्रेम-पथिक, झरना, लहर, आँसू, कामायनी।

उपन्यास—कंकाल, तितली, इरावती (अपूर्ण)।

कहानी-संग्रह—छाया, प्रतिध्वनि, आँधी, इन्द्रजाल, आकाश-दीप।

निबन्ध—चित्राधार, काव्य और कला तथा अन्य निबध।

भाषा—प्रसादजी की भाषा के दो रूप दिखायी पड़ते हैं। एक व्यावहारिक और दूसरी संस्कृत प्रधान प्राञ्जल और प्रौढ़-गम्भीर भाषा। गद्य में प्रसादजी ने व्यावहारिक भाषा का प्रयोग किया है, किन्तु प्रारम्भ से ही संस्कृत-साहित्य का गम्भीर अध्ययन मनन एवं चिन्तन करने के कारण व्यावहारिक भाषा में भी कुछ गम्भीरता और प्रौढ़ता है, उसमें प्रयोग है, किन्तु तत्सम शब्दों का व्यावहारिक भाषा में प्राञ्जल भाषा की अपेक्षा कम प्रयोग है। नाटक, उपन्यास तथा कहानियों में ऐसी ही भाषा व्यवहृत हुई है, किन्तु भावनात्मक उद्गारों

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तथा प्राकृतिक चित्रण में तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग है और भाषा में कलात्मकता अधिक है। व्यावहारिक भाषा में भी मुहावरों का प्रयोग नहीं हुआ। उर्दू के शब्द बहुत कम पाये जाते हैं। उर्दू के शब्दों का सर्वथा अभाव है। भाषा में गति और प्रवाह है। शब्दों का लाक्षणिक और व्यंग्य प्रयोग भी कहीं-कहीं पर हुआ है। अन्य प्रकार की संस्कृत प्रधान प्राञ्जल और प्रौढ़ गम्भीर भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है, भाषा का अधिक गंभीर और प्रौढ़ रूप है। कहीं-कहीं वह जटिल और कहीं अत्यन्त जटिल और क्लिष्ट हो गयी है। संस्कृत गर्भित समासयुक्त पदावली का अधिक प्रयोग हुआ है। लाक्षणिक और व्यंग्य प्रयोगों की भरमार है। फिर भी गति प्रवाह अधिक नहीं तो पर्याप्त है। प्रसाद की ऐसी अलंकृत भाषा भी विशुद्ध है। कहीं-कहीं भाषा की व्याकरण सम्बन्धी त्रुटियाँ भी पायी जाती है, किन्तु ऐसी त्रुटियाँ बहुत कम हैं। कुछ प्रान्तीय तथा स्थानीय शब्दों का प्रयोग भी हुआ है। फिर भी प्रसादजी की दोनों प्रकार की भाषा भावों, विचारों, पात्रों और विषय के अनुकूल चलती है। शब्दों में स्वरूप और चित्र उपस्थित करने की क्षमता है। भाषा में मौलिकता है तथा प्रसाद का अपना अधिकार।

शैली—क्या गद्य और क्या पद्य सबकी शैली प्रसाद की अपनी शैली है, उसमें मौलिकता है और वह गम्भीर अध्ययन-मनन और चिन्तन का फल है। प्रसादजी की शैली प्रौढ़, परिष्कृत, परिमार्जित, प्रभावशालिनी और मार्मिक है। उसमें अपनापन और प्रसाद के व्यक्तित्व की छाप है। पदों और वाक्यों की योजना सुगठित है। कहीं-कहीं गम्भीर विषय और भावों की अभिव्यक्ति भी कुछ और छोटे-छोटे वाक्यों में करने में लेखक कुशल है। उपमाओं और उक्तियों का बड़ा स्वाभाविक प्रयोग प्रसादजी ने कहीं-कहीं किया है। प्रत्येक वाक्य में भंगिमा और सौन्दर्य है। शैली में काव्यात्मकता और चमत्कार है। जहाँ आलंकारिक शैली का प्रयोग किया है वहाँ काव्यात्मकता या भावुकता आ गयी है।

कलात्मक भंगिमा और प्रभावात्मकता का उदाहरण—

'तुम मनुष्य होकर हिंस्र पशुओं को क्यों लज्जित कर रहे हो। इस श्मशान

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

को कुरेदकर जली हड्डियों के टुकड़ों के अतिरिक्त क्या मिलेगा ?'

—'राज्यश्री'

आलंकारिक भावात्मक शैली—काव्यात्मकता का उदाहरण—

'सामने शैलमाला की चोटी पर, हरियाली में, विस्तृत जल-प्रदेश में नील पिंगल सन्ध्या, प्रकृति की एक सहृदय कल्पना, विश्राम की शीतल छाया, स्वप्न लोक का सृजन करने लगी। उस मोहिनी के रहस्य-पूर्ण नील जाल का कुहक स्पष्ट हो उठा × × × सृष्टि नील कमलों से भर उठी।'

—'आकाश दीप'

व्यावहारिक शैली—

'अच्छा, वैसा ही होगा। चलो सब लोग आश्रम पर। रेवा तट पर कुमार हर्षवर्द्धन और पुलकेशिन चालुक्य का युद्ध चल रहा है। अनेक लोग हताहत हो गये हैं। क्या तुम लोग उन आहतों की सेवा-शुश्रुषा कर सकोगे ?'

—'राज्यश्री'

'प्रसाद' जी की शैली में चमत्कार भी है, प्रभाव भी और वह व्यावहारिक सरल भी है। उनकी शैली सभी दृष्टियों से. असाधारण अपूर्व एवं अनुपम है।

दृश्य १

राज्यश्री— मैं दुखी हूँ. दस्यु..........आश्रम समीप है।

शब्दार्थ— दस्यु=डाकू, चोर, असुर, अनार्य। विस्तीर्ण=विशाल,फैले हुए, लंबे-चौड़े। विश्व=संसार। हिंसु=भयानक, खूँखार। लज्जित करना=लजाना। श्मशान=मरघट। अतिरिक्त=सिवाय, अलावा। नेपथ्य=मार्ग, नाटक आदि में परदे के भीतर का दोनों ओर का स्थान। परितापित=पीड़ित, दुखी, व्यथित। धरा=पृथ्वी। तृष्णा=प्यास, प्राप्ति के लिए आकुल करने वाली इच्छा। पाश=बन्धन। कण्ठ=गला, गर्दन। करुणा-सरोवर=करुणा या दया रूपी जलाशय या झरना। कींच=गन्दगी, बुराई। क्षणिक=नाशमान, नष्ट होने वाला, थोड़े समय तक रहने वाला। महाशून्य=अत्यन्त खाली या एकान्त,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निस्सार। इन्द्रजाल=मायाजाल, मृग मरीचिका, छलना। भ्रान्त करना=धोखा देना, चक्कर खिलाना, व्यर्थ भटकना। शास्त्र=विद्या। परास्त करना=हराना। मुँह बन्द करना=उत्तर रहित करना, चुप कर देना जिससे उनकी हार, अयोग्यता या असामर्थ्य प्रकट हो। अवलम्ब=सहारा। क्रोड़=दोनों बाहों के बीच, भुजराश, गोद, अँकवार। चिरकालिक=स्थायी। विश्राम=शान्ति, आराम, सुख-चैन। वनलक्ष्मी=वन की देवी। विषाद=दुख, पीड़ा के कारण कष्ट और चिन्ता। कालिमा=मुँह का कालापन। विपन्न=त्रस्त, सतायी हुई, दुखी, कष्टों या आपत्तियों की मारी। मलीन=काली, मटमैली। आत्महत्या= खुदकशी, अपनी हत्या। प्रस्तुत=तैयार। स्वेच्छा=अपनी इच्छा या मरजी। अवज्ञा=अवहेलना, अपमान, अनादर। अधीर=व्याकुल। धरोहर=दूसरे की सौंपी हुई सम्पत्ति। कुटीर=झोपड़ी, घासफूस की बनायी हुई कुटी। पद-रज= पैर की धूल। विभूति=ऐश्वर्य, सम्पत्ति, भस्म या राख का प्रसाद। हताहत= आहत, घायल। सेवा शुश्रूसा=परिचर्य्या, सहायता और इलाज। आश्रम= ऋषि-मुनियों तथा सन्तों का पवित्र स्थान।

मैं दुखी हूँ·····························क्या मिलेगा।

यह अवतरण 'हर्ष और राज्यश्री' नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक हिन्दी के सुप्रसिद्ध नाटककार श्री जयशंकर 'प्रसाद' हैं। हर्ष की बहिन, कन्नौज के राजा ग्रहवर्मा की पत्नी, राजरानी जयश्री पति की हत्या के पश्चात् कारागार से निकलकर विन्ध्य-पर्वत के प्रदेश में इधर-उधर भटक रही है। वहाँ उसे कुछ डाकुओं से भेंट होती है जो धन की लालच में उसे लूटना चाहते हैं। यह प्रसंग उसी समय का है। इस पद्यांश में राज्यश्री का वही कथन है जो वह उन डाकुओं के सम्मुख कहती है।

राज्यश्री उन्हें सम्बोधित कर कहती है ओ! डाकुओं तुम्हें तो धन की इच्छा है और तुम धन की माँग प्रकट कर रहे हो, . परन्तु धन मेरे पास यहाँ जरा भी नहीं। लम्बे-चौड़े और इतने बड़े संसार में मुझे न तो आनन्द मिलता है और न शान्ति। इस संसार के इतने महान् होने का मेरे लिए कोई महत्व नहीं किन्तु फिर भी ऐसे संसार में जीना पड़ता है, किन्तु असमर्थ होकर कैसे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जीवित रहा जाय। यह कितना कष्ट कर है उसके सोचने मात्र से दुख को प्रकट करने वाली टीस 'आह' के शब्दों में मुँह से निकलती है। जीवन के जितने दिन और घड़ियाँ बितानी हैं वे तो पूरी होकर ही रहेंगी। जीवन का अन्त इच्छानुसार नहीं हो सकता। मुँह से जितनी साँसें बाहर निकालनी हैं उनकी समाप्ति तो पूरा करने से ही होगी तुम लोग तो मानव और विचारशील प्राणी हो, किन्तु ऐसी बातें कह रहे हो, ऐसा काम कर रहे हो जो भयानक और खूँखार जानवर भी नहीं करता जिनमें बुद्धि और विचार की शक्ति नहीं रहती। ये जानवर भी सीधे-सादे आदमी को व्यर्थ नहीं छेड़ते जब तक कि वे उनका नुकसान न करें। मैंने तुम्हारा कोई नुकसान नहीं किया। अपने रास्ते पर चली जा रही हूँ। इस प्रकार का तुम्हारा काम जानवरों से भी गया-गुजरा है। तुमने उनको भी हराकर लज्जित कर दिया, जो अपने दुख से श्मशान की तरह जल रही है, श्मशान की तरह जो वस्तु रहित और खाली है, जिसके पास कुछ नहीं ऐसी मुझ दुखिया को छेड़कर तुम्हें कुछ न मिलेगा। जिस प्रकार श्मशान को कुरेदने से जली हुई हड्डियों के कुछ टुकड़े मिलते हैं जिनसे कोई लाभ नहीं होता। मैं भी उसी समय श्मशान की तरह हूँ, मेरे पास भी कोई मूल्यवान और तुम्हारे काम की कोई वस्तु या धन नहीं। तुम मुझसे किसी प्रकार के धन के पाने की व्यर्थ और निष्फल कोशिश न करो।

क्षणिक संसार.................. ....कौन हो भाई ?

प्रस्तुत अवतरण प्रसिद्ध लेखक जयशङ्कर 'प्रसाद' के 'हर्ष और राज्यश्री' नामक पाठ से लिया गया है। विंध्याचल-प्रदेश में उस स्थान की ओर जहाँ राज्यश्री और दस्युओं की बातचीत होती है, दिवाकर नामक हर्ष के मित्र और महात्मा कुछ सोचते-विचारते आते हैं। इन पंक्तियों का प्रसङ्ग उसी प्रकार का है।

महात्मा दिवाकर सोच रहे हैं कि यह संसार नाशवान है। यहाँ कोई भी चीज या व्यक्ति हमेशा स्थायी नहीं रहता। ऐसे इस सार रहित और खाली संसार में माया का जाल, छलना सबको धोखा देकर, भुलावा देकर नचाती रहती है। झूठे भ्रम में लोग फिरा करते हैं। बहुत समय मैंने भिन्न-भिन्न विद्याओं को पढ़-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर ज्ञान प्राप्त करने में लगाया। विद्वानों को अपने उस ज्ञान से हराया। प्रमाण के साथ-साथ विद्या और ज्ञान के कारण बहुत से लोगों का मुँह मेरी बातों का कुछ उत्तर न दे सका। लोग मेरे ज्ञान से चुप रह गये। इतना होते हुए भी मुझको हृदय में सुख और सन्तोष का अनुभव नहीं हुआ। मेरा चित्त स्थिर और प्रसन्न नहीं हो पाया। फिर भी मेरे निराश होने का कोई कारण नहीं। ईश्वर की दया का सहारा अभी बाकी है। भगवान् की दया से मैं प्रार्थना करता हूँ, तू ही इस कष्टों से भरी हुई पृथ्वी को अपनी भुजाओं में भरकर, गोद में समेटकर या लेकर हमेशा रहे ऐसा परम सुख और आनन्द दे। यह संसार और सांसारिक भाव तथा विचार चैन और स्थिरता पावें। उसको सुख से स्थिर रहने का निवास मिल जाय। अपने भावों में इसी तरह खोये हुए थे एकाएक वे जयश्री को देखते हैं और आश्चर्य में पड़कर कहते हैं—अरे! यह वन की देवी के रूप और सौन्दर्य वाली यहाँ पर यह स्त्री कौन है, ऐसी स्त्री तो यहाँ वन में नहीं आती। उसके मुख की ओर देखकर फिर कहते हैं कि मुख पर दुख को प्रकट करने वाला कालापन क्यों है वह तेज कहाँ गया और वे दस्युओं आदि को देखकर पूछते हैं कि वे लोग कौन हैं। उनका क्या परिचय है।

जब विपत्ति हो..............................मृत्यु चाहती हूँ।

प्रस्तुत अवतरण 'हर्ष और राज्यश्री' नामक पाठ से लिया गया है इसके लेखक प्रसिद्ध नाटककार श्री जयशङ्कर 'प्रसाद' हैं।

इन पंक्तियों में महात्मा दिवाकर द्वारा परिचय पूछे जाने पर ये शब्द जयश्री कहती है।

राज्यश्री कहती है कि मैं कष्ट में हूँ। मेरी हालत मेरी स्थिति को सूचित करती है। ऐसे अवसर पर जब मनुष्य पर दुख पड़ रहे हों और उन दुखों के कारण चेहरे पर बुरी हालत का भाव प्रकट होता हो, शरीर का तेज नष्ट हो गया हो तब मनुष्य को अपने प्रसिद्ध वंश का परिचय न देना चाहिये। इस अवसर पर अपने वंश, परिवार आदि के बारे में बतलाने से उसका सम्मान जाता रहता है। प्रतिष्ठा नष्ट हो जाती है अतः वंश के नाम को बतला कर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मैं वैसा करना नहीं चाहती। केवल मेरा परिचय इतना ही है कि मैं कष्ट में पड़ी हुई मुसीबत की मारी एक असहाय स्त्री हूँ जिसका कोई स्वामी या रक्षक नहीं रहा। मेरी इच्छा है कि मैं अब जीवित न रहूँ और मेरी मृत्यु हो जाय मृत्यु के अलावा मेरी अन्य कोई इच्छा नहीं है।

दृश्य २

रेवा-तट की युद्ध-भूमि.....................तो आओ भाई।

शब्दार्थ—रेवा-तट=नर्मदा नदी का किनारा। रणवाद्य=युद्ध के बाजे। हूण=एक प्रबल और प्राचीन मंगोल जाति जिसने भारत पर बार-बार राज्य-विस्तार की दृष्टि से आक्रमण किया था। विताड़ित करना=परास्त करना, हराना, मार भगाना। शस्त्र=वे हथियार जो पकड़ कर किसी को मारे जायँ जैसे तलवार। अस्त्र=वे हथियार जो फेंक कर किसी को मारे जायँ जैसे तीर। साम्राज्य=विशाल राज्य। सीमा=भूमि का घेरा या हद। वसुन्धरा=पृथ्वी। प्रवीर=महान् योद्धा, बहादुर, पराक्रमी वीर। दक्षिणापथ=विंध्यपर्वत के दक्षिण की ओर का सारा प्रदेश और वहाँ का राज्य। अभाव=कमी। वीर निवास=वीरों की भूमि या स्थान। गजवाहिनी=सेना, हाथियों की फौज। अश्वारोही=घुड़सवार। सन्धि=सुलह। प्रार्थी=प्रार्थना के इच्छुक। दुर्बलता=कमजोरी। अरक्षित=रक्षा से हीन, बचाव से रहित। आपाततः=अकस्मात, अचानक, अंस में। आत्मीय=निकट के सम्बन्धी। मौखरी=भारत का एक प्राचीन राजवंश। षड्यन्त्र=छल या कपट, गुप्त चाल, कपट का आयोजन। वध=हत्या। अकारण=बिना किसी कारण। हड़पना=छीन लेना या अधिकार जमाना। संयोग=योग, अकस्मात हो जाने वाली कोई बात या घटना। कामरूप=आसाम का एक जिला। सुराष्ट्र=गुजरात प्रान्त। सुव्यवस्थित=अच्छी तरह शासित या प्रबन्ध वाला। अहेर करना=शिकार करना। प्रहार=चोट। वीरोन्माद=वीरता की भावना का पागलपन या प्रबल वेग। विन्ध्यपाद=विन्ध्यप्रदेश। चर=दूत, गुप्तचर। दक्षिणापथेश्वर=दक्षिणापथ राज्य के स्वामी।

मुझे साम्राज्य की सीमा.....................द्वार की ही रक्षा करनी है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यह अवतरण 'हर्ष और राज्यश्री' नामक पाठ से लिया गया है। इसके प्रतिभाशाली और स्वनामधन्य नाटककार और लेखक श्री जयशङ्कर 'प्रसाद' हैं। युद्ध-क्षेत्र में रेवा के तट पर एक ओर हर्षवर्द्धन तथा दूसरी ओर विपक्षी पुलकेशिन की सेना खड़ी है। युद्ध प्रारम्भ की सूचना देने वाले बाजे बजते हैं। प्रथा के अनुसार हर्ष और पुलकेशिन आमने-सामने आकर मिलते हैं। हर्ष युद्ध को एकाएक बन्दकर देने की घोषणा करते हैं। उनके विरोधी राजा पुलकेशिन ने युद्ध से विश्राम लेने का कारण हर्ष से पूछा। प्रस्तुत प्रसंग में सम्राट हर्षवर्द्धन उनके प्रश्न का उत्तर देते हैं।

हर्षवर्द्धन कहते हैं कि मैं अपने राज्य को बढ़ाना नहीं चाहता। राज्य-विस्तार और अधिक भूमि पर अधिकार करने की इच्छा मुझे नहीं। पृथ्वी पर राज्य-सम्बन्धी प्रबन्ध के कार्य को करने के लिए यह जरूरी है कि एक महान् वीर योद्धा ऐसा हो जो उसकी रक्षा कर सके और इस दक्षिण के प्रदेश पर राज्य का प्रबन्ध चलाने के लिए वैसा कुशल वीर और राज्य का शासक वर्तमान है। उसकी कमी नहीं। दक्षिणा-पथ राज्य का प्रबन्ध सुचारु-रूप से होता रहेगा, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। महाराष्ट्र देश में शासन का संचालन अच्छी तरह हो रहा है। वहाँ एक से एक योग्य और कुशल वीर पुरुष रहते हैं। अतः सम्पूर्ण दक्षिण-भारत सुख और शान्ति से रह सकता है, इस भूमि पर युद्ध और अधिकार प्राप्त करना व्यर्थ है। मुझको तो भारत के लिए उत्तरा-पथ की सीमा की सुरक्षा-देखभाल आदि का काम करना है तथा उसकी ही देखभाल के लिए युद्ध करना है। यदि कोई संकट या आक्रमण राज्य के उत्तर की ओर से हो तो उसका बचाव करना है; क्योंकि यदि इस देश पर बाहरी शक्ति का आक्रमण हुआ तो वह उत्तरा-पथ की उत्तरी सीमा से ही हो सकता है। वहीं से युद्ध द्वारा भारत-राष्ट्र को विदेशियों से बचाने का कार्य मुझे देखना है।

मगध के सम्राटों की··· ········· ············कृतकृत्य हो जाऊँगा।

प्रस्तुत अवतरण प्रसिद्ध नाटककार 'जयशंकर प्रसाद' लिखित 'हर्ष और राज्यश्री' नामक पाठ से लिया गया है। हर्षवर्द्धन ने पुलकेशिन को युद्ध से विश्राम लेने का कारण बतलाया, किन्तु अपनी क्षात्र-धर्म की परीक्षा के लिए

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसने हर्ष से युद्ध का आग्रह किया जिस पर सम्राट हर्ष ने अस्वीकृति दी और उसे स्थिति को और भी स्पष्ट कर समझाया प्रस्तुत प्रसंग का विषय उसी से सम्बद्ध है।

मगध के राजाओं की कमजोरी के कारण उत्तरा-पथ का प्रदेश ऐसा था जिसपर मंगोलिया की हूण जातियों के हमले का भय बना हुआ था। उनसे उत्तरा-पथ की रक्षा करना आवश्यक था। इसी कारण लाचार होकर मुझे अचानक युद्ध करना पड़ा। दूसरी ओर मौखरी वंश के कन्नौज के राजा और मेरे निकट सम्बन्धी, बहनोई ग्रहवर्मा उसी काल के लगभग छल कपट से मारे गये थे। मेरे बड़े भाई राजवर्द्धन को भी शशांक ने कत्ल कर डाला। इस कारण तुमसे मुझे बिना कुछ सोचे-समझे युद्ध करना पड़ा। हमारा-तुम्हारा कोई वैर नहीं और बिना किसी कारण मैं दूसरों के अधिकार और राज्य की जमीन पर बलपूर्वक अधिकार जमाना मेरा काम नहीं। ऐसा तो डाकू करते हैं। मैं डाकू नहीं। यह तो भाग्य से ही अवसर आया है कि आसाम के कामरूप प्रान्त से लेकर पश्चिम में सौराष्ट्र तक तथा कश्मीर से लेकर नर्मदा-प्रदेश तक एक ऐसा भारत राष्ट्र स्थापित हो गया जहाँ अच्छी तरह प्रबन्ध हो रहा है। देखभाल और रक्षा आदि की कुशलता के कारण उत्तर का यह सम्पूर्ण प्रदेश शक्तिशाली हो गया है तथा सुख-शान्ति सम्पन्न है। मुझे राज्य की और अधिक भूमि बढ़ाने या विस्तार करने की जरूरत या इच्छा नहीं। यदि मैं अच्छा शासन करूँ और मेरी इतनी राज्य-भूमि के लोग आनन्द-चैन से रहें। मैं योग्य राजा का कर्तव्य निभा सकूँ और सफल राजा माना जाऊँ तो मेरा जीवन और राजा होना सफल और सार्थक हो जाय। मुझे उतने से संतोष हो जायगा।

उदार महापुरुष..............................मैं उसे झेलूँ तो।

प्रस्तुत उद्धरण 'हर्ष और राज्यश्री' नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक श्री जयशंकर 'प्रसाद' हैं।

युद्ध न करने का कारण हर्ष द्वारा समझाया जाने पर भी पुलकेशिन की युद्ध करने की इच्छा नहीं जाती उसका जो कारण है वह इन पंक्तियों में प्रस्तुत होता है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उच्च भावना वाले हर्ष को सम्बोधित कर पुलकेशिन कहता है—हे श्रेष्ठ भावना वाले महान पुरुष ! मेरी यह प्रबल लालसा थी मैं चाहता था कि मैं उस परम वीर से युद्ध और मुकाबला करूँ । उस वीर का कुशल आक्रमण मुझ पर हो और मैं उसकी युद्ध करने में कुशल वारों और हमलों की चोट का दर्शन पाऊँ जिन प्रतापी और श्रेष्ठ हाथों ने हूणों का शिकार किया है । हूणों का मार डालने वाले हाथों की युद्ध-विद्या की कुशलता और योग्यता का दर्शन करने के लिए ही मुझ पर प्रयोग हो और मैं अपनी इच्छा के लिए उसकी मार को सहूँ । साथ में दुखों का सहारा बनाया ही है तो हम इस शरीर से डरें क्यों ? ऐसे शरीर के कारण जीवन में न डरना चाहिए । दूसरे शब्दों में जीवन का उपयोग और दुखों को झेलना ही चाहिये । दुखों के कारण ही तो करुणा के अनन्त स्वामी ईश्वर की सहानुभूति दुखित होने पर ही तो मिलती और दिखलाई देती है ।

हे भगवान् ! मैं यह...एक बार हँस दे!

चिता जलाकर सती होने के लिए राज्यश्री उसमें जाकर जलने की कोशिश कर रही है । इसी समय उसके भ्राता सम्राट हर्षवर्द्धन आकर वह दृश्य देखते हैं और देखकर आवाक् रह जाते हैं प्रस्तुत पद्यांश का प्रसङ्ग यही है जो इसके लेखक श्री जयशङ्कर 'प्रसाद' द्वारा बड़े मार्मिक और प्रभावशाली शब्दों में प्रस्तुत हुआ है ।

उस अद्भुत दृश्य को देखकर हर्ष चकरा जाते हैं उन्हें उस दृश्य की सत्यता पर वास्तविकता पर विश्वास नहीं होता जिसकी कल्पना वे नहीं कर सकते थे अतः भगवान् को पुकार कर अपना आश्चर्य प्रकट करते हैं—भगवान् ! यह क्या हो रहा है । क्या यह सच है । क्या ऐसा हो सकता है । उनका हृदय इस कठोर दृश्य को देखने में असमर्थ हो जाता है अतः वे अपने हृदय से कहते हैं—हे मेरे हृदय ! तूने बदला लेने की प्रबल भावना के वश में होकर लाखों आदमियों को मौत के घाट उतारा है । अपने अस्त्र-शस्त्र से लाखों आदमियों को मारा-काटा और उनका नाश किया है तू वही कठोर हृदय है किन्तु यह दृश्य नहीं देख सकता, सहन नहीं कर सकता । एक बहिन को जलते हुए देख

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सकने की शक्ति तुझमें नहीं। कठोरता की कमी तुझमें है इसलिए वज्र की तरह अत्यन्त कठोर बन जा ताकि इस दृश्य को देखने की शक्ति आ जाय। इसके पश्चात् वे बहिन को सम्बोधित कर कहते हैं। बहिन, मैंने इतने लोगों को मार कर उनका खून इसलिए नहीं बहाया था कि तू चिता में जल कर समाप्त हो जाय। मैंने तुम्हारे पति के हत्यारों का नाश कर तुम्हारा बदला ले लिया अब तो तुम खुशी से जीवन बिताओ, शान्त और सन्तुष्ट हो जाओ। तुम्हारे जल मरने पर राज्य शासन को पूर्ण और कठोरता द्वारा मैंने उसे जिस प्रकार सन्तुष्ट और योग्य सिद्ध कर दिया है वह व्यर्थ सिद्ध हो जायगा। उसका अनादर होगा। उसकी असमर्थता अनुपयोगिता और व्यर्थता पर सब लोग हँसकर व्यंग्य और अनादर प्रकट करेंगे। लोग कहेंगे कि कठोर दमन की नीति का उपयोग करने से भी क्या हुआ राज्यश्री तो समाप्त हो गयी। अतः तुम सावधान होकर चिता में जल मरने का विचार त्याग दो।

दृश्य ३

राज्यश्री-दुखों को छोड़कर..................साथ ही काषाय लेंगे।

शब्दार्थ—चिरसहचर=हमेशा का साथी। पुतले को बनाकर=मनुष्य का शरीर देकर। सम्बल=सहारा। अनन्त-पथ=लम्बा और समाप्त न होने वाला मार्ग, आवागमन का, जन्म-मरण और जीवन का रास्ता। भीत=डरा हुआ। करुणा-निधान=दया के सागर, अपार दयालु। ललाम=सुन्दर। भुवन=संसार। अभिराम=मनोहर, रम्य। प्रणत-जन=श्रद्धा और आदर से झुके हुए लोग। प्रज्ज्वलित=जलना। उपक्रम=प्रयत्न, कोशिश। भिक्षु=बौद्ध सन्यासी। प्रतिहिंसा=प्रतिकार या बदले की भावना। प्रेरित=उत्तेजित, भरकर। संहार=नाश। वज्र=अत्यन्त कठोर। रक्तपात=हत्या, मारकाट। तृप्त=किसी इच्छा से पूर्ण या सफल। राज्यचक्र=शासन की नीति। हँस दे=व्यंग्य या उपहास करे। ऊर्जस्वित=शक्तिमान, प्रतापी। नरहत्या=लोगों का वध या संहार। सदृश=समान। भ्रम=धोखा। प्रायश्चित=शास्त्र के अनुसार वह कार्य जिसके द्वारा बुरे कर्मों का पाप छूट जाता है। काषाय=

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सन्यासी के गेरुये वस्त्र। महत्ता=श्रेष्ठता, महानता, बड़प्पन। लघु=तुच्छ, छोटा, हलका। गर्व=घमंड। विभव=धन-संपत्ति, प्रताप, ठाट-बाट। ऐश्वर्य =सुख-संपत्ति। निस्सार=तुच्छ, महत्त्वहीन। अभ्यास=आदत, टेव। विराग =वैराग्य, अनुराग या चाह का अभाव, इच्छा रहित होने की भावना। धक्का =चोट, प्रहार। अनुकरण=नक़ल। हाथ बटाना=एक दूसरे की सहायता करना। कङ्गाल=गरीब, दरिद्र।

देवी, मैं यह कदापि..........................इसी में तो झलकती है।

प्रस्तुत अवतरण 'हर्ष और राज्यश्री' नामक पाठ से लिया गया है इसके कुशल लेखक प्रसिद्ध नाटककार श्री जय शंकर 'प्रसाद' हैं।

राज्यश्री महात्मा दिवाकर के तपोवन में रहने लगी थी। एक दिन वह चिता सजाकर सती होने के लिए उनसे आज्ञा माँगती है। उस समय दिवाकर जो कुछ कहते हैं वही इस पद्यांश का प्रसङ्ग है।

दिवाकर राज्यश्री से कहते हैं कि तुम सती होकर मरने की आज्ञा चाहती हो यह आज्ञा मैं कभी भी नहीं दे सकता। सती होना जिसे तुम अपना धार्मिक कर्त्तव्य जानती हो वह वैसा कर्त्तव्य नहीं, किन्तु अपनी मृत्यु स्वयं आप करना है जो अनुचित है। तुम जल कर अपना जीवन समाप्त कर यह समझती हो कि तुम सती इस प्रकार हो जाओगी, किन्तु सती होने का अन्य तरीका भी है। यह तो मैं नहीं जानता कि ईश्वर ने मनुष्य को शरीर देकर क्यों उत्पन्न किया इसके साथ-साथ दुखों का सहायक शरीरधारी को क्यों बनाया। सहारा लेने के लिए दुख को जीवन में दिये। इसका ज्ञान मेरी जैसी छोटी बुद्धिवाले की समझ में नहीं आता; किन्तु जब ईश्वर ने उत्पन्न कर मनुष्य का नष्ट होने वाला शरीर दिया ही है।

इस इन्द्रजाल की महत्ता में ....लगने लगा।

प्रस्तुत अवतरण 'हर्ष और राज्यश्री' नामक पाठ से लिया गया है। इसके यशस्वी लेखक प्रसिद्ध नाटककार श्री जयशङ्कर 'प्रसाद' हैं।

चिता में जलने के लिए प्रस्तुत अपनी बहिन राज्यश्री को देखकर तथा भाई राज्यवर्द्धन की मृत्यु का विचार आते ही सम्राट हर्ष अत्यन्त दुखी थे।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

राज्यश्री ने जीवित रहने का विचार प्रकट किया, किन्तु हर्ष के हृदय में वैराग्य की भावना का उदय हो गया था। प्रस्तुत पंक्तियों में उसी वैराग्य भावना का उल्लेख हुआ है जो वह अपनी बहन के सम्मुख प्रकट कर रहे हैं।

हर्ष राज्यश्री से कहते हैं बहिन! संसार बड़ा विचित्र है यह एक माया जाल है। यहाँ इच्छाओं का कभी अन्त नहीं होता। संसार की माया का रूप इतना विशाल, व्यापक और महान् है इतना इच्छाएँ और कामनाएँ रहती हैं कि जीवन उसके सामने तुच्छ और हीन दिखाई देता है। एक जीवन में इतनी शक्ति और सामर्थ्य नहीं कि इच्छाओं और कामनाओं को पूर्ण कर सके, उसकी रक्षा कर सके। मनुष्य का पूरा घमंड और आत्म-सम्मान, पूरी बहादुरी, असीम प्रताप, धन-सम्पत्ति, अटूट सुख-दौलत और ठाटबाट सब व्यर्थ हो जाती है, तुच्छ और महत्त्वहीन लगने लगती है जब हृदय पर जरा सा आघात होता है, उसे चोट पहुँचती है। संसार का एक पद प्रहार या पैर का धक्का बड़े से बड़े समथ और शक्तिशाली व्यक्ति को जीवन के सार रहित या शून्य होने का अनुभव करा देता है। ऐसी प्रतीत होने लगती है।

दुखमय मानव जीवन है.........................हाथ बटायें।

प्रस्तुत गद्यांश 'हर्ष और राज्यश्री' नामक पाठ से लिया गया है। इसके स्वनामधन्य लेखक श्री जयशङ्कर 'प्रसाद' हैं।

हर्ष ने वैराग्य की भावना और संसार की निस्सारता का अनुभव किया जिसे राज्यश्री के सामने अपने शब्दों में प्रकट किया, राज्यश्री अपने भाई, सम्राट हर्षवर्द्धन के मुख से वैसे शब्दों को सुनना नहीं चाहती थी। इसी का इस प्रसङ्ग में यहाँ पर उल्लेख हुआ है।

राज्यश्री ने हर्ष से कहा कि मनुष्य का जीवन ही दुःखों से भरा हुआ है। दुःखों से जीवन का कुछ स्वाभाविक सम्बन्ध है। जीवन में इसी कारण लगातार दुःख सहते-सहते मनुष्य को उसकी आदत पड़ जाती है। यही कारण है कि सभी लोगों के हृदय में दुःख पड़ने से वैराग्य की भावना नहीं उत्पन्न होती। जिस मनुष्य को नया-नया कष्ट पड़ता है और चोट का अनुभव नहीं हुआ रहता वह एक साधारण चोट या कष्ट से विचलित और व्याकुल हो जाता है। जीवन के

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पथ में चलते हुए उसके पैरों में कमजोरी आ जाती है, वह स्थिर होकर ठीक से चल नहीं पाता, परन्तु तुम तो वीर हो और वीर होकर भी इतने कमजोर और अशक्त होंगे कि अपने पथ पर न चल पाओगे, इसका मुझे जरा भी ज्ञान न था। मैं तुम्हारी इस कमजोरी से अनजान थी। मैं तो नारी हूँ और नारियों में तो स्वभाव और प्रकृति से ही कमजोरी होती है, किन्तु भाई मेरी कमजोरी की नकल तुम न करो, उसके अनुसार तुम न चलो। चलो हम दोनों मिलकर आगे बढ़ें और सुख और दुःख पड़ने पर एक दूसरे की सहायता करते हुए जीवन में बढ़े चलें।

प्रश्न—'हर्ष और राज्यश्री' नाटक का कथानक संक्षेप में लिखिए।

उत्तर—उत्तरा-पथ के परम-प्रतापी सम्राट हर्षवर्द्धन की बहिन, कन्नौज के मौखरी वंश के राजा गृहवर्मा की पत्नी राज-रानी जयश्री मालवा के गुप्त-वंशीय राजा के हाथों छलपूर्वक अपने पति के मारे जाने के पश्चात् किसी प्रकार कारागार से मुक्त होकर विन्ध्य-पर्वत-प्रदेश में इधर-उधर असहाय होकर भटक रही है। वहाँ उसे कुछ डाकुओं ने देखा। वे दस्यु उसे लूटना चाहते थे। राज्यश्री ने बतलाया कि उसके पास कुछ नहीं और वह दुःखी अबला है। इसी बीच जब उसकी और दस्युओं की बातचीत हो रही थी तो उसी स्थान के समीप आश्रम बनाकर रहने वाले दिवाकर नामक महात्मा दस्युओं और जयश्री के पास कुछ सोचते-विचारते आ पहुँचे। जयश्री का अद्भुत स्वरूप, किन्तु मलिन मुख देखकर उन्हों ने इसका तथा अन्य दस्युओं का परिचय पूछा। दस्युओं ने अपना परिचय दिया, किन्तु जयश्री ने परिचय देना उचित न समझा; क्योंकि विपत्ति के समय अपने यशस्वी कुल आदि के बारे में बतलाने पर उसका अपमान होता है। उसने अपने को एक विपन्न अनाथ मात्र बतलाया। जयश्री ने महात्मा दिवाकर के सम्मुख मृत्यु की इच्छा प्रकट की, महात्मा ने उपदेश दिया और दुःख झेलकर भी ईश्वर के दिये हुए शरीर की रक्षा करने के लिए कहा। पश्चात् उनसे आश्रय में चलकर रहने और रेवा-तट पर हर्षवर्द्धन तथा पुलकेशिन चालुक्य के बीच होने वाले युद्ध में घायल लोगों की सेवा का कार्य कहा गया। जयश्री ने यह जानकर आश्रम की ओर कदम बढ़ा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर अपनी स्वीकृति दी। उन दस्युओं का हृदय पवित्र हो गया था। वे भी आश्रम में जाकर रहने लगे।

उधर रेवा नदी के तट पर एक ओर हर्षवर्द्धन और दूसरी ओर पुलकेशिन चालुक्य अपनी-अपनी सेना के साथ युद्ध-भूमि में डटे हैं। रण के मारू बाजे बजते हैं। पुलकेशिन को प्रसन्नता है कि उसका सामना आज हूणों को परास्त करने वाले पराक्रमी वीर हर्षवर्द्धन से होगा। वह अपनी यह प्रसन्नता भरी उक्ति युद्ध प्रारम्भ होने के समय पर हर्ष के सम्मुख कहता है कि हर्षवर्द्धन युद्ध को रोककर अस्त्र चलाने की मनाही की घोषणा करते हैं युद्ध के बाजों का बजना बन्द हो जाता है। इस पर पुलकेशिन युद्ध से विश्राम लेने का कारण पूछता है। हर्ष ने बतलाया कि वह राज्य बढ़ाना नहीं चाहता और उसका कर्त्तव्य उत्तरा-पथ की सीमा की रक्षा कर विदेशी आक्रमणों से भारत-राष्ट्र को सुरक्षित रखना है। दक्षिणा-पथ में अच्छा शासन-प्रबन्ध और सुख-शान्ति है, किन्तु वीरोत्साही पुलकेशिन आज के इस युद्ध में अपनी क्षात्र-धर्म की परीक्षा का प्रदर्शन करना चाहता था, वह युद्ध के लिए आग्रह करता है। हर्षवर्द्धन उसे बिना लड़े ही विजय-घोषणा करने की बात कहता है। हर्ष व्यर्थ ही युद्ध द्वारा अनेक प्राणियों का नाश नहीं चाहता अतः सन्धि की प्रार्थना करता है। हर्ष ने समझाया कि उससे उनका कोई वैर न था। उत्तरा-पथ मगध के राजाओं की गलतियों और कमजोरियों के कारण अरक्षित था और हूणों का भय बना हुआ था अतः अकस्मात हर्ष को युद्ध करना पड़ा। हर्ष ने अपनी स्थिति भी स्पष्ट की कि उनके बहनोई ग्रहवर्मा की षड्यन्त्र से हत्या तथा भाई राज्यवर्द्धन का वध हो चुका है। वे व्यर्थ ही दूसरों की भूमि पर जबरदस्ती अधिकार करना नहीं चाहते। कामरूप से सौराष्ट्र तथा काश्मीर से नर्मदा तट तक फैला हुआ उनका विशाल राज्य है। उसका उचित प्रबन्ध ही उन्हें सफल और सुखी बनाएगा। पुलकेशिन ने अपनी वीरता की उत्साही भावना और हर्ष की युद्ध कुशलता को देखने की इच्छा प्रकट करने के पश्चात् उनसे सन्धि करने में अपने को धन्य माना और सन्धि कर ली। इसी समय हर्ष ने राज्यश्री के विन्ध्यप्रदेश में होने की प्राप्त सूचना तथा उससे मिलने की प्रबल इच्छा के कारण दक्षिणापथ के राजा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुलकेशिन से विदा माँगने की बात कही और गले मिलकर हर्ष विदा हुए।

इधर महात्मा दिवाकर के तपोवन में सती होने की लालसा को प्रकट कर जल मरने की आज्ञा राज्यश्री ने माँगी, किन्तु दिवाकर ने न दी फिर भी चिता को जलाकर वह उसमें प्रवेश करने का प्रयत्न करने लगी। इसी बीच सम्राट हर्ष-वर्द्धन वहाँ आ पहुँचे। यह दृश्य देखकर हर्ष चकरा गये। उन्हें राज्यश्री के ऐसा करने की स्वप्न में भी आशा न थी। फिर राज्यश्री के पति के हत्यारे से बदला लेने में भाई राज्यवर्द्धन ने प्राण गँवाए थे और उन्होंने कठोर दमन किया था। वे राज्यश्री को रानी बनाकर पति के राज्य पर शासन करने वाली वीर बाला के रूप में देखना चाहते थे। बातों ही बातों में राज्यवर्द्धन की हत्या की बात उन्होंने राज्यश्री को बतलायी। भाई राज्यवर्द्धन की मृत्यु से दुख की भावना तथा उसका ध्यान आते ही हर्ष को संसार से वैराग्य जगा। उन्होंने गेरुये वस्त्र धारण करने की इच्छा प्रकट करते हुए जीवन की निस्सारता और लघुता का अपना अनुभव राज्यश्री के सम्मुख भावुकता वश कह डाला। राज्यश्री अपने भाई की इस दुर्बल भावना को स्वीकृति नहीं दे सकती थी। उसने भाई के लिए जीवित रहने का विचार किया। सम्राट हर्ष से उसने जीवन में इस दुख को सहन करने और नारी के लिए उचित और स्वाभाविक दुर्बल भावना और विचार त्यागने के लिए कहा। सुख-दुख में परस्पर सहायता कर उसने भाई को आश्वस्त और सावधान किया। राज्यश्री के सुख से जीवित रहकर जीवन के अन्तिम दिनों में वैराग्य लेने की धारणा की। पश्चात् राज्यश्री ने हर्ष को अपने साथ आगे कदम बढ़ाने के लिए पुकारा।

रुपया

लें०—श्री बेचन शर्मा 'उग्र'

जीवन परिचय—श्री बेचन शर्मा 'उग्र' का जन्म सन् १६०१ में मिर्जापुर जिले के एक साधारण परिवार में हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा काशी आदि

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

में हुई तथा अधिकांश बाल्यावस्था के दिन काशी में बीते। बाल्यावस्था में ही 'उग्र' जी राष्ट्रीय विचारों के देश-प्रेमी व्यक्ति थे। उन दिनों असहयोग आन्दोलन का जमाना था। 'उग्र' जी स्कूल छोड़कर राष्ट्रीय भावना के प्रचार आदि का कार्य करने लगे। ठीक प्रकार से विद्या आदि का सुचारु ज्ञान न होने पर भी आपने हिन्दी का अच्छा ज्ञान और योग्यता प्राप्त कर ली और आप कहानियाँ तथा प्रहसन आदि लिखने लगे। उन कहानियों में 'देशभक्त' 'उसकी माँ' आदि कहानियों ने आपकी काफी प्रसिद्धि कर दी। आपकी पहली कहानी सन् १९२० में आज में प्रकाशित हुई। इसके बाद आपने कुछ प्रहसन और जीवन की नग्न वास्तविकता का चित्रण करने वाले उपन्यासों की रचना प्रारम्भ की। ऐसी प्रतिभा से सम्पन्न आप और आपकी कला की खूब धूम मची। हिन्दी की साधारण जनता और युवकों में आपकी रचना की खूब प्रसिद्धि और प्रचार हुआ। आपने प्रहसन आदि लिखकर उसमें व्यंग्य आदि का अच्छा समावेश किया। आपने कलकत्ते के 'मतवाला' का सम्पादन प्रारम्भ किया तथा 'मतवाला' तथा अन्य कितने ही पत्रों का सम्पादन करते हुए साहित्य-रचना बराबर करते रहे। आप सन् '३१-'३२ में बम्बई जाकर फिल्म क्षेत्र में कार्य करने लगे, किन्तु वहाँ एक वर्ष से अधिक न टिक सके अतः वापस लौट आये। आप विनोदी और स्पष्ट वक्ता हैं अतः काशी में अच्छे अच्छे साहित्यिकों जैसे श्री जयशंकर 'प्रसाद', विनोद शङ्कर व्यास, शान्तिप्रिय द्विवेदी आदि से आपकी घनिष्टता रही है। जिस प्रकार आपकी कहानियों में आवेग और उद्वेग की प्रबलता मिलती है, विचारों और कथन में एक उग्रता व्यक्त होती है, उसी प्रकार आप अपने जीवन में भी उग्र स्वभाव के हैं। आपका उपनाम 'उग्र' सार्थक है। आपमें स्वाभिमान कूट-कूट कर भरा हुआ। आपने जीवन को अपनी आँखों से देखा है। समाज के ढोंग, पाखंड और कुत्सित जीवन को उसके वास्तविकत रूप में देखा और सोचा-समझा है। आप उससे अन्तर से विमुख हैं, किन्तु उसका यथार्थ चित्रण आपनें बड़े प्रभावशाली और मार्मिक ढंग से हू-बहू किया है।

समय-समय पर आपने अनेक पत्रों का सम्पादन किया है। इन दिनों आप

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'सांगा माता' नामक सरस सुन्दर और सामाजिक उपन्यास को पूर्ण करने में व्यस्त हैं। आप अपनी उच्चकोटि की विधायिनी प्रतिभा परख अनुभूति और सरस व्यंजना-शक्ति द्वारा साहित्य-सेवा में रत हैं।

साहित्य साधना—'उग्र' जी ने एकांकीकार, कहानीकार और उपन्यासकार के रूप में साहित्य की सेवा और निर्माण किया है। आपने अपने ढंग के साहित्य की एक प्रणाली का प्रवर्त्तन और प्रचलन किया है अतः समाज और जीवन की वास्तविकता का प्रभावपूर्ण चित्रण करने के कारण आपकी देन मान्य और निश्चित है।

एकांकीकार—इस रूप में आपने सन् १६२१ में 'चार बेचारे' नामक नाटक प्रस्तुत किया तथा 'चुंबन', 'अफजल-वध' 'भाई-मियाँ' आदि प्रहसनों का द्विवेदी-युग में निर्माण कर हिन्दी-एकांकी-साहित्य को उस समय देन दी है, जब एकांकियों का वास्तविक उदय नहीं हुआ था। इन प्रहसनों में समाज के कुत्सित, वीभत्स और पाखड-पूर्ण अंशों के चटकीले दृश्य आपने दिखाकर ऐसे जीवन से पूर्ण व्यक्तियों का व्यंग्य और हास्यास्पद चरित्र प्रस्तुत किया है, जिनसे समाज के भीतर गन्दगी और समाज-सुधार, प्रचार तथा सम्मानित पेशों की आड़ में बुरे और घिनौने कार्य होते हैं।

कहानीकार—'उग्र' जी ने प्राकृतिकवादी या स्वाभाविक चरित्रों की वास्तविकता के ढंग पर कहानियों का हिन्दी में श्री गणेश किया है। इनमें मानवता को लज्जित और घृणित करने वाले चरित्र तथा उनके कार्य कलात्मकता और सौन्दर्य के साथ प्रस्तुत किये गये हैं। उनके चरित्र वेश्याओं, विधवाओं, भिखारियों, गुण्डों के समाज, धर्म प्रचारकों और समाज सुधारकों के समाज से लिए गये हैं। ये चित्र कुरुचिपूर्ण और अकल्याणकारी होते हुए भी सजीव और यथार्थ हैं। उनमें कला की निर्दोषता और निष्कलंकता यथार्थ है। अभिव्यंजना की शैली बड़ी रोचक और प्रभावोत्पादक है। समाज की कुरीतियों पर प्रहार करने की इन कहानियों की देन बड़ी महत्वपूर्ण है। साहित्य में उनका एक स्थान है। 'उग्र' जी ने ऐसे चरित्र भी दिये हैं, ऐसी कहानियाँ भी लिखी हैं, जो राष्ट्रीय चित्रों और भावनाओं से युक्त हैं। 'उसकी माँ', 'देशभक्त' आदि कहानियाँ

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वदेश-प्रेम, त्याग, साहस और जीवन का बलिदान करने वाली कहानियों की सुन्दर कोटि में आती हैं। आपने कई कहानियों द्वारा हिन्दी-कहानी-साहित्य की श्रीवृद्धि की है।

उपन्यासकार—'उग्र' जी की वास्तविक प्रतिभा और चेतना इस रूप में सबसे अधिक फली-फूली है। उनकी देन, उनकी लोक-प्रियता और प्रसिद्धि उपन्यास के कारण अधिक है। वे उच्च कोटि के अपने ढग के प्रवर्त्तक और साहित्य की अपनी कोटि की रचनाओं और शैली का प्रारम्भ करने वाले उपन्यास लेखक हैं। उन्होंने उपन्यासों में पत्रात्मक शैली का प्रयोग किया। 'चन्द हसीनों के खतूत' पत्रों की शैली में लिखा हुआ अपने ढंग का एक ही उपन्यास है। नग्न और कुत्सित चित्रण और यथार्थ स्वरूप को प्रस्तुत करने में उनके कथानक का विषय, वेश्यालय, मदिरालय, पापाचार के अड्डे और समाज, स्त्रियों के कुत्सित जीवन और नरपिशाचों का कार्य है। इस प्रकार के कथानक का चुनाव उनके 'शराबी',जीजीजी, 'बुधुआ की बेटी' 'दिल्ली का दलाल', 'दोजख की आग' आदि प्रायः सभी में हुआ है। विषय के अनुरूप घटनाओं का अच्छा संयोजन हुआ है उसमें चुस्ती और शृंखला है। पात्रों के उसी तरह के चित्रों की चटक तथा देश काल और समाज के एक अंश का अच्छा और प्रभावशाली वर्णन पाया जाता है। किसी-किसी नगर के भागों की भी सजीव और वैसी ही यथार्थ झाँकी प्रस्तुत हुई है, किन्तु उपन्यासों की विचारधारा और उसका प्रभाव समाज और देश के लिए कल्याणकारी नहीं। हाँ, भाषा की शक्ति, वर्णन-शैली की कलात्मकता और प्रभाव मनोमुग्धकारी और रोचक है। फिर भी 'उग्र' के उपन्यासों को साहित्य में स्थान तो मिलेगा ही उसकी मौलिकता और यथार्थ की एक देन है।

रचनाएँ—

नाटक तथा एकांकी—'चार बेचारे', 'चुंबन', 'अफजल वध', 'महात्मा ईसा' 'भाई मियाँ' आदि।

कहानी संग्रह—'सरकार तुम्हारी आंखों में', 'घंटा', 'कला का पुरस्कार' आदि।

उपन्यास—'चन्द हसीनों के खतूत', 'शराबी', 'दोजख की आग',

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'बुधुआ की बेटी', 'दिल्ली का दलाल', 'पंजाब की महारानी', 'रेशमी', 'जीजीजी', और 'गंगा माता'।

भाषा शैली—'उग्र' जी की भाषा सजीव और प्राञ्जल है। उसमें बोलचाल की भाषा की स्वाभाविकता और कलात्मकता मिलती है। अपने भावों और विचारों को व्यक्त करने की पूरी-पूरी क्षमता और शक्ति उनकी भाषा में है। शब्दों का उचित और पर्याप्त भंडार उनमें है, जिनसे चुन-चुनकर समय और पात्र-स्थान के अनुरूप शब्दों का सार्थक प्रयोग होता है। उर्दू के शब्दों का बराबर प्रयोग वे करते हैं। शब्दों द्वारा स्थान तथा अन्य वर्णन एवं भावों-विचारों और वार्तालाप की सफल अभिव्यक्ति पूर्ण रूप से हो जाती है। गद्य की भाषा में अनुप्रासों के प्रयोग से काव्य की अलंकार रमणीयता आ जाती है। भाषा के प्रभाव के कारण ही लेखक का महत्व प्रतिपादित होता है।

'उग्र' जी की शैली चमत्कारिक, चुटीली और व्यंग्यात्मक है। व्यंजना प्रणाली में भावावेश और प्रगल्भता है अतः धारावाहिकता है। इसके कारण कथन में एक तेजी, एक प्रभाव और मार्मिक-चोट करने वाला गुण आ जाता है। वाक्यों में कहीं वार्तालाप के कारण आकार लघुता है तो कहीं बोलचाल की भाषा के लम्बे-लम्बे हैं, किन्तु ऐसे स्थलों पर वे सजीवता, वर्णन की चित्रात्मकता तथा उक्ति और कथन में रोचकता और मोहक प्रभाव उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं। लोक-प्रचलित उक्तियों और मुहावरों का भी यथावसर उचित प्रयोग हुआ है। व्यंग्य की बौछार सर्वत्र एक रस और समान होकर चलती है, किन्तु कथन की उग्रता व दृढ़ता में अन्तर नहीं आता बल्कि एक रंजक शक्ति व जोशीला प्रभाव उत्पन्न होता है, जो समाज व्यक्ति या विषय के अनुरूप किसी वस्तु पर गहरा प्रहार करता है। वह प्रभाव उसे जड़ से उखाड़ने की शक्ति रखता है।

वास्तव में 'उग्र' की भाषा और शैली ही उन्हें साहित्य में अमरता और स्थायित्त्व प्रदान करने में समर्थ है। प्रतिभाशाली और युगान्तरकारी लेखक की भाषा-शैली से अभी स्वस्थ और श्रेष्ठ साहित्य निर्माण की बहुत आशा है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मैं लड़कों के लड़कपन का............... ममता मैं हूँ। मैं रुपया हूँ।

शब्दार्थ—लड़कपन=बाल्यावस्था। जान=प्राण। मस्ती=मौज, आनन्द की लहर। बुढ़ौती=वृद्धावस्था। गुलाम=दास। नाच नचाना=परेशान या तंग करना। दबना=डरना, अंकुश मानना। प्रकृति=संसार की अपने-आप उत्पन्न होने वाली स्वाभाविक वस्तुएँ। वशवर्तिनी=अधिकार या कब्जे में। विशाल=लम्बा-चौड़ा, बहुत बड़ा। विश्व=संसार। सत्=सत्य और विशुद्ध। चित्=मंगल। परलोक=दूसरा लोक जहाँ मृत्यु के बाद लोग जाते हैं। हर्ष=आनन्द, प्रसन्नता। शोक=दुख से विलाप या रोना। क्षमता=योग्यता, शक्ति या सामर्थ्य। ममता=स्नेह, प्यार।

मैं लड़कों के................................मैं रुपया हूँ।

यह गद्यांश 'रुपया' नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक श्री पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' हैं। लेखक ने बड़े ही प्रभावशाली ढंग से रुपये की महानता उसी के मुख से कही है। बचपन, यौवन और बुढ़ापा जीवन की इन तीनों अवस्था में रुपये की प्रधानता है। इन पक्तियों में रुपया यही बतलाता है।

रुपया कहता है लड़के अपने बचपन में मेरे कारण ही खिलौने और मिठाइयाँ पाते हैं। यदि मैं न होऊँ तो वे न तो खिलौने खरीद सकें और न मिठाइयाँ। इस प्रकार खिलौने और मिठाइयों का बाल्यावस्था में जो महत्त्व है, मेरे कारण उन चीजों को खरीदने का जो सुख और आनन्द मिलता है, वह मेरे न रहने पर उन्हें प्राप्त न हो सकता। अतः उनका खिलौना और मिठाई मैं ही हूँ। युवक और जवान मेरे द्वारा अपने यौवन का आनन्द और मजा लूटते हैं। यदि मैं न होऊँ तो उन्हें वह आनन्द और मजा न मिले। उनका यौवन फीका हो जाय अतः उन युवकों के यौवन का वास्तविक प्राण और चेतना मैं ही हूँ। मेरा ही नाम यौवन की मस्ती और जवानी की चेतना है। मैं यदि न रहूँ तो वृद्ध लोग बुढ़ापे में काम-काज नहीं कर सकते। अतः उनका जीना मुश्किल हो जाय। वे एक दिन भी न जी सकें, किन्तु यदि उनके पास मैं रहूँ तो पचास लोग उनका खयाल रखें, उनकी सेवा और सहायता करें। वह सहायता मेरे कारण ही होती है अन्यथा उनकी खोज-खबर लेने

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वाला कोई नहीं रहता अतः बुढ़ापे की लकड़ी या वृद्धावस्था का आधार मैं ही हूँ। संक्षेप में मैं जीवन की तीनों अवस्थाओं का मूल आधार हूँ। यदि मैं न होऊँ तो इन तीनों अवस्थाओं का वह रूप न हो, उसकी वह विशेषता न हो और न उन तीन अवस्थाओं में उस प्रकार कोई भी मनुष्य निर्वाह कर सके। लड़कपन का आनन्द, जवानों के यौवन की बहार और बुढ़ापे की जिन्दगी का निर्वाह मैं ही हूँ जो रुपया कहलाता हूँ।

मनुष्य मेरा गुलाम है..................ममता मैं हूँ। मैं रुपया हूँ।

ये पंक्तियाँ 'रुपया' नामक पाठ से ली गयी हैं। इसके लेखक हैं प्रसिद्ध कहानीकार पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'। इस गद्यांश में 'रुपया' अपनी महानता और अपना व्यापक प्रभाव प्रस्तुत करता है जो बड़ी प्रभावपूर्ण शैली में कहा गया है।

रुपया कहता है लोग किसी मनुष्य का दास नहीं है, वह किसी की डाँट-डपट सहकर भी चुपचाप सेवा नहीं करता जैसा कि दास या सेवक किया करते हैं, किन्तु वह मेरी सेवा और मेरे कारण, मेरे लिए ही किसी का दासत्व करते हैं अतः मनुष्य किसी मनुष्य का नहीं मेरा गुलाम है। मैं जो चाहूँ उससे करा सकता हूँ और वह चुपचाप सेवक की तरह आज्ञा मानकर बिना मुख से शब्द निकाले करता है। वह उचित-अनुचित सब कुछ आँख बन्द कर करता है। मैं मनुष्य को तरह-तरह से परेशान कर सकता हूँ उसको चक्कर दिलाने और खिलाने की मुझमें शक्ति है। मैंने बराबर उसको व्यर्थ परेशान पर बराबर चक्कर खिलाया है और आज भी उसी प्रकार परेशान कर रहा हूँ। संसार के लोग मुझसे डरते और भय से मेरा अंकुश मानते हैं। मुझमें संसार को डाँवा-डोल करने की शक्ति है अपनी इस शक्ति का उपयोग मैं कर चुका हूँ और आज भी बराबर कर रहा हूँ। संसार की सारी स्वाभाविक वस्तुओं पर मेरा अधिकार है, नदी, पहाड़, जङ्गल, समुद्र, आकाश सब पर मेरा कब्जा है मैं इन सबको सुधारता हूँ, इनके रूप और गुण को गन्दा करता हूँ और इन्हें नष्ट-भ्रष्ट करता हूँ। ऐसे-ऐसे कार्यों को मैं करता हूँ। मेरा नाम रुपया है।

मेरी झनझनाहट में..............................पुण्याचरण मैं हूँ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शब्दार्थ—झनझनाहट=रुपये के बजने की आवाज या शब्द। अलौकिक =अद्भुत, महान्, इस संसार में और कहीं न पायी जाने वाली। मधुरिमा= माधुर्य्य, मिठास। वीणापाणि=सरस्वती। लक्ष्मीपति=भगवान् विष्णु। पाञ्चजन्य =भगवान् विष्णु का शंख। काकली=मधुर-ध्वनि। कल=सुन्दर, सरस। कामिनी=सुन्दर युवती। कण्ठ=गीतों की ध्वनि। मुरलीधर=कृष्ण। डमरू-वाला=भगवान् शङ्कर। मृदङ्ग=ढोलक से बड़ा एक प्रकार का बाजा। मुर-चङ्ग=मुँह से बजाने का एक प्रकार का बाजा। जलतरङ्ग=एक प्रकार का अन्य बाजा जो जल से भरी कटोरियों को एक क्रम से रखकर बजाया जाता है। सप्त-स्वर=संगीत विद्या के होने वाले स्वरों की कुल संख्या। अष्टम=आठवाँ। परम=अत्यन्त। गायकों=गाने वाले। चण्डी-सप्तशती=देवी दुर्गा की स्तुति और प्रार्थना के सौ श्लोकों की प्रसिद्ध पुस्तक। अनुरागियों=प्रेमियों। शरण आना=पूर्ण तरह से सौंपना। तारण-तरण=संसार के जन्म-मरण से छुटकारा पाने वाले को मुक्ति देने वाला। भव-भय-हरण=संसार के कष्टों को दूर करने वाला। अशरण=असहाय। हरण=हरने या दूर करने वाला। धवल-वरण= श्वेत रङ्ग वाला। मङ्गल करण=कल्याण दाता। पुण्याचरण=पवित्र आचरण या व्यवहार वाला।

मेरी झनझनाहट में......................परम मधुर हूँ। मैं रुपया हूँ।

प्रस्तुत अवतरण पाण्डेय वेचन शर्मा 'उग्र' लिखित 'रुपया' नामक पाठ से लिया गया है। धारावाहिक शैली में लेखक ने रुपये की महत्ता उसी के मुख से कहलायी है। इन पंक्तियों में रुपये की आवाज की मधुरता और लोगों की आकर्षण-प्रियता का बड़ा व्यंग्यात्मक कथन है।

रुपया कहता है कि मेरी झन-झन खन-खन की आवाज में ऐसी मिठास है, जो इस दुनिया में और कहीं नहीं पायी जाती है। मेरी आवाज सुनकर लोगों के कान मेरी ओर खिंच जाते हैं। कानों की तृप्ति हो जाती है, उनका ध्यान मेरी ओर लग जाता है। वे और कुछ इस चाव से नहीं सुनते जिस तरह मेरे खन-खन का शब्द। सरस्वती की वीणा के शब्दों में मिठास है किन्तु वह भी मेरी आवाज के सामने फीका पड़ जाता है। भगवान् विष्णु के शंख

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

में मधुरता है, किन्तु वह भी मेरे शब्दों की मधुरता के आगे कुछ नहीं। कोयल की मधुर-सुन्दर कूक और ध्वनि में लोग मिठास पाते हैं किन्तु मेरे झन झन के शब्द का मिठास उससे अधिक प्रभावशाली है। सुन्दर युवती के सुकुमार गले से निकले गीतों के शब्दों में मधुरता होती है, किन्तु उस मधुरता की ओर लोग इस प्रकार आकर्षित नहीं होते जैसे मेरी आवाज को सुनकर खिंच जाते हैं। भगवान् कृष्ण की मुरली का शब्द सुन गोप-गोपियाँ ही दौड़ आती थीं, किन्तु मेरी सुरीली आवाज सुनकर लोग दौड़े आते हैं अतः उनकी मुरली की आवाज मेरी मधुर आवाज से टक्कर नहीं ले सकती। कहते हैं कि भगवान शंकर के डमरू की आवाज मधुर है, किन्तु मैंने लोगों को उस आवाज पर टूटते नहीं देखा। मृदङ्ग-मुरचङ्ग जैसे बाजे भी वह मिठास उत्पन्न नहीं कर सकते जो मेरे खन-खन में है। सितार और जलतरंग जैसे बाजों से मेरी मधुर आवाज की कोई तुलना नहीं। मेरी आवाज, खन-खन, झन-झन में लोगों को मुग्ध, तल्लीन और बेसुधकर देनेवाली वह मधुरता है जो इस संसार में इस जगह नहीं पायी जाती, इस संसार या उस जगह भी नहीं मिल सकती। मेरे शब्दों में कुछ ऐसी अनुपम और न्यारी मिठास है संगीत के सातों स्वरों में नहीं अतः मेरे शब्दों का स्वर उन सातों स्वरों से अलग, न्यारा और श्रेष्ठ आठवाँ स्वर है। मैं अत्यन्त मिठास से भरा हुआ हूँ। मुझे लोग रुपया कहते हैं।

तारन-तरण..........................पुण्याचरण मैं हूँ।

प्रस्तुत अवतरण 'रुपया' नामक पाठ से लिया गया है। इसके प्रसिद्ध लेखक श्री पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' हैं। अपनी झनझनाहट की मिठास की श्रेष्ठता बतलाकर रुपया सब पर अपना सिक्का जमा लेता है। वह सबको अपने भक्त बनने अपनी महिमा और स्तुति गाने तथा अपनी शरण में आने के लिए पुकारता है। लेखक ने इस शब्दों में आगे और भी गहरा व्यंग किया है।

रुपया कहता है कि मैं मुक्ति चाहने वालों को संसार के जन्म-मरण से छुटकारा दिलाता हूँ। मैं संसार के सब भय को हरने वाला हूँ। मेरे रहते पर लोगों को कोई डर नहीं पहुँचता। असहाय लोग भी मेरे कारण शरण

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और सहारा पा सकते हैं। लोगों के सारे-कष्ट मेरे रहने पर दूर हो जाते हैं उन्हें कभी दुःख का अनुभव नहीं हो सकता। मैं सफेद रंग का स्वच्छ और निर्मल हूँ अतः मैं जिसके पास हूँ उसके पास बुराई और बुरे विचारों का दोष या हृदय का कालापन नहीं देखा जाता बल्कि वह भी शुद्ध और सफेद होता है। मैं लोगों का कल्याण करने वाला हूँ। मुझसे ही लोगों की सारी भलाइयाँ होती हैं। मैं पुण्य को दिलाने वाला तथा पुण्य और पवित्र विचारों और कार्यों को कराता हूँ। ऐसे कार्य और विचार मेरे द्वारा ही होते हैं। मुझ जैसे ऐसे महान गुणी का नाम रुपया है।

मुझको आँख दिखाकर..........मैं सर्वशक्तिमान हूँ। मैं रुपया हूँ।

शब्दार्थ—आँख दिखाना = डराना या धमकाना। विद्रोह = द्वेष, उपद्रव, बगावत, विमुख होकर हानि पहुँचाने का उपाय करना। रुष्टि-तुष्टि = प्रसन्नता-अप्रसन्नता, खुशी या नाराजगी। कुकोप = प्रबल गुस्सा। धूर्तता = छल, कपट, चालबाजी। पराजित होना = हारना। साख = प्रभाव, प्रतिष्ठा। आकर्षण = अपनी ओर खींचने की शक्ति। तर्क = सोच-विचार की शक्ति, कार्य-कारण को बतलाते हुए विचार प्रस्तुत करने की शक्ति, विवेचना। उदाहरण = दृष्टांत, मिसाल। प्रत्यक्षवाद = यथार्थता या वास्तविकता। प्रभुता = अधिकार, महत्ता, बड़प्पन। प्रत्यक्ष = यथार्थ, प्रकट, वास्तविक। सद्यफल = किसी कार्य का तुरन्त परिणाम या फल। वरदान = सिद्धि। साफ बच जाना = कुछ भी नुकसान न होना। भिड़ा देना = लड़ाना या टक्कर दिला देना। बेरहमी = दया रहित। मर्यादा = प्रतिष्ठा, इज्जत, शील, सदाचार। अपाहिज = लूले-लंगड़े या अंग-भंग होने के कारण लाचार। हाय = दुख को प्रकट करने वाला शब्द। भूकम्प उठाना = वस्तुओं को नष्ट करना या उठा-पटक करना। प्रलय करना = उत्पात करना या सब कुछ तहस-नहस करना। सर्व-शक्तिमान = सम्पूर्ण और हर प्रकार की शक्ति से युक्त।

ठाकुरजी बोलते नहीं..........................ईश्वर से बड़ा हूँ।

यह पद्यांश "रुपया" नामके पाठ से लिया गया है। इसके लेखक व्यंग्य शैलीकार पांडेय बेचनशर्मा 'उग्र' हैं। इन पंक्तियों में रुपये ने भगवान की

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मूर्ति से अपने को महान और स्वयं ईश्वर घोषित किया है।

रुपया कहता है कि मन्दिरों की मूर्तियाँ मुख से बोलती-चालती नहीं और न उनके शब्दों का वैसा प्रभाव पड़ता है जैसा मेरे बोलने का गुण उसके प्रभाव से होता है, मेरे शब्दों का प्रभाव और शक्ति अत्यन्त अपार है। जिसके पास मैं होता हूँ उस व्यक्ति के मुख से मेरी ही वाणी फूटती है। उस धनवान की वाणी के प्रभाव में मेरी बोलने की शक्ति देखी जा सकती है अतः मैं उन मूर्त्तियों से भी महान् हूँ। मूर्त्तियाँ चलती नहीं उनकी कोई इज्जत और पूछ नहीं मैं चलता हूँ मेरी कितनी अधिक कदर और पूछ होती है। मेरी उन मूर्त्तियों से अधिक कदर और प्रतिष्ठा होती है। मैं जिसके पास हूँ उसका दबदबा उसकी धाक का सब पर रंग होता है, वह मेरा ही सम्मान और धाक है। मैं जिस प्रकार लोगों को अपनी ओर खींचता और प्रभावित करता हूँ उस तरह ईश्वर भी नहीं कर पाते। ईश्वर में रूप की वह चमक और कान्ति नहीं वह बल नहीं जैसी कान्ति और ताकत मुझमें है। जिसके पास मैं रहता हूँ वह कान्तिमान तथा बलवान माना जाता है वह मैं ही हूँ जो अपना प्रभाव दिखलाता हूँ। आजकल का जमाना किसी भी बात का कार्य-कारण देखता है, संसार नमूना माँगता है, संसार में सत्य और ठोस वस्तु देखी जाती हैं जो सामने सत्य और वास्तव में उपस्थित हो। आज के संसार में अधिकार देखा जाता है और इन बातों का ही महत्त्व है। मुझमें वास्तव में ये सब कुछ हैं। मैं किसी भी कार्य का तुरन्त फल देता हूँ। मेरे द्वारा सब कार्य संसार में तुरन्त और शीघ्र हो जाते हैं। मैं सबका स्वामी और मालिक हूँ सब कुछ मेरे अधिकार में है, हर वस्तु पर मेरा कब्जा है। मैं सब वस्तु और संसार को अपनी ओर खींचने का गुण हूँ। मैं ही ईश्वर हूँ। ईश्वर से भी महान् हूँ। मेरा नाम रुपया है।

मुझसे वरदान लेकर........................मैं सर्वशक्तिमान हूँ।

प्रस्तुत अवतरण 'रुपया' नामक पाठ से लिया गया है। इसके श्रेष्ठ और प्रसिद्ध लेखक पांडेय श्री बेचन शर्मा 'उग्र' हैं। इन पंक्तियों में लेखक ने 'रुपये'

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के ही शब्दों में उसकी सब कुछ कर सकने व अपार सामर्थ्य का चित्र प्रस्तुत किया है।

रुपया कहता है कि ईश्वर को प्रसन्न कर मनुष्य इच्छानुसार सब कुछ करने की सिद्धि पाता है और उसका यश फैलता है। मुझसे भी प्रसन्न करके लोग वह सिद्धि और इच्छा पूर्ण करने की शक्ति पा जाते हैं। यदि मुझसे सिद्धि पाकर कोई बुरे काम करे तो भी मेरे प्रभाव के कारण वह ईश्वर की तरह पवित्र समझा जावेगा और लोग उसकी भक्ति, प्रार्थना और उपासना करेंगे। मुझसे सिद्धि पाकर यदि कोई एक आध नहीं सात या कितने ही आदमियों की हत्या कर डाले उसका जरा-सा भी नुकसान न होगा। मेरे प्रभाव के कारण वह सजा या दण्ड से बच सकता है। यदि मुझे प्रसन्न कर ले तो मनुष्य एक राज्य से दूसरे राज्य को लड़ा सकता है। मनुष्य की सुन्दर भावनाओं और श्रेष्ठ विचार जो लोगों के हृदय में सर्वत्र फले-फूले हैं उन्हें बिना किसी दया या करुणा का अनुभव किये नष्ट कर सकता है। मनुष्य उन सुन्दर भावनाओं और विचारों को अग्नि की ज्वाला में डालकर नष्ट कर देने की शक्ति पा जाता है। मनुष्य लोगों की ऐसी भावना बना सकता है जिससे उनमें और पशुओं में कोई अन्तर न दिखाई दे, वे आपस में लड़कर मरने-कटने लगें। महिलाओं के शील और पवित्रता को, उनकी प्रतिष्ठा और इज्जत को हलका बना दो उसके मूल्य या महत्त्व को न रहने दो वे पैसे के कारण उन सब विचारों और गुणों को कुछ न समझें और नष्ट कर दें। वे शील, पवित्रता इज्जत आदि की कोई परवाह न करें और भ्रष्ट आचरण को अपना लें। पति-विहीन स्त्रियाँ, कलपते हुए असहाय और अंग से नष्ट-भ्रष्ट हुए, दुख से पीड़ित और कराहते हुए, पीड़ा के शब्द का उच्चारण करने वाले लोगों से यह संसार पूर्ण हो जाय। ऐसे लोगों की संख्या बढ़ने लगे। दुनियाँ को डाँवाडोल भी कर सकते हो। ऐसी उथल-पुथल, उत्पात आदि मनुष्य कर सकता है कि प्रलय के दृश्य की तरह सब कुछ तहस-नहस हो जाय। मुझको खुश कर सिद्धि प्राप्त कर लेने से वह अपनी इच्छानुसार मनमाना और सब तरह के काम करने की शक्ति और सामर्थ्य पा जाता है। मैं हर प्रकार की शक्ति रखता हूँ अतः ईश्वर हूँ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रामायण के पात्रों पर संकट

ले० श्री वलभद्र प्रसाद मिश्र

शब्दार्थ—पृ० १–२। उत्तम अंश=श्रेष्ठ भाग। भिन्न-भिन्न=पृथक्-पृथक्। स्वाभाविक=सहज, बनावट से रहित। धर्म-सङ्कट=दुविधा, 'यह करें या वह' इस प्रकार की परस्पर विरोधी भावना। विरोधी=विपरीत। अवतारी=अवतार लेने वाला। आदर्श-पुरुष=लोगों को अपने ही समान उत्तम आचरण की शिक्षा देने वाला महापुरुष। राज्याभिषेक=राज तिलक। यथार्थ=सचमुच, वास्तव। अद्भुत्=विचित्र, अनोखा। विचार-परिवर्तन=विचार का बदलना। विवेचना=विचार-विमर्श। विषयान्तर=विषय का हेर-फेर, मुख्य-विषय से भिन्नता। मुँह लटकाना=नाराजी प्रकट करना, असहमति का भाव मुँह पर लाना। सभय=भयभीत, डरी हुई। महिपाल=राजा। रिपु-दमन=शत्रुघ्न। साल=दुःख, व्यथा। मनभावत=मनचाहा। आली=सखी। चेरी=दासी।

प्रथम अनुच्छेद

अर्थ

इस काण्ड की.......................................दूसरा होता है।

प्रस्तुत गद्यांश श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र द्वारा लिखित 'रामायण के मुख्य पात्रों पर धर्म सङ्कट' नामक लेख से लिया गया है। इसमें लेखक ने यह बतलाया है कि राम-चरित-मानस के सर्वोत्तम अंश अयोध्याकाण्ड की विशेषताएँ क्या हैं। वह कहता है –

अयोध्याकाण्ड की प्रमुख दो विशेषताएँ ऐसी हैं जिन पर हमारा ध्यान सर्वप्रथम जाता है। यों तो पूरे ग्रन्थ में मानव हृदय और उसकी वृत्तियों का सुन्दर चित्रण है ही, किन्तु इसमें जितने प्रकार के मनोभावों का सहज रूप में अङ्कन पाया जाता है, उतने प्रकार के मनोभावों का दर्शन अन्य काण्डों में नहीं होता। यही इस काण्ड की पहली विशेषता है। इसके पश्चात् दूसरी विशेषता

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यह देखने में आती है कि जो-जो पात्र इस काण्ड में आए हैं, प्रायः वे सभी एक या अनेक बार अपने कर्तव्य के प्रति दुविधा में पड़ गए हैं। उनके सम्मुख कर्तव्य के दो ऐसे विरोधी रास्ते आ पड़ते हैं कि वे सहसा निश्चय ही नहीं कर पाते कि किस मार्ग का दृढ़तापूर्वक अवलम्बन करें। इस प्रकार पात्रों के सामने दो विरोधी कर्तव्य रखकर महाकवि ने अन्त में उनका निर्वाह भी अत्यन्त सुन्दरता के साथ किया है। महाराज दसरथ, माता कौशल्या, कैकेयी, भरत, लक्ष्मण आदि सभी प्रमुख पात्र एक अथवा अनेक बार इस धर्म-संकट में पड़े हैं, किन्तु सभी ने कर्तव्य के दोनों पक्षों पर पूर्ण विचार करके अपना उपयुक्त पथ ग्रहण किया है। लेखक कहता है कि प्रस्तुत लेख में वह इसी दूसरी विशेषता अर्थात् धर्म-संकट वाली विशेषता पर अपना विचार व्यक्त करेगा।

पृष्ठ २

अर्थ

यथार्थ में.............................अत्यन्त विरोधी।

यह गद्य-खंड विद्वान् लेखक श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र के 'रामायण के पात्रों पर धर्म-संकट' नामक लेख से लिया गया है। इसमें वह यह विवेचन कर रहा है कि राम के राज्याभिषेक का समाचार पाकर कैकेयी के सामने जो समस्या उत्पन्न हुई, उसे हम धर्म-संकट कहेंगे अथवा नहीं। वह कहता है—

राम के राज्य-तिलक के समाचार पर कैकेयी हर्ष मनाए अथवा उन्हें वन भेजकर भरत को राज्य दिलावे। यह यथार्थ में धर्म-संकट नहीं कहा जायगा, क्योंकि ये दोनों विरोधी भावनाएँ उसके सामने साथ-साथ न आकर क्रम से आगे-पीछे आती हैं। जो भावना उसके हृदय में पीछे से उत्पन्न होती है वह अनेक कारणों से बलवत्तर हो जाती है, अतः इसे हम विचार का विचित्र उलट-फेर ही कह सकते हैं। फिर भी लेखक इसकी उपेक्षा नहीं कर सकता, क्योंकि एक विचार के ऊपर जो दूसरा विचार अधिक जोरदार पड़ जाता है, उन दोनों में महान् विरोध है।

अर्थ

सभय रानि कह.................उर-साल।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यह दोहा रामचरित मानस के अयोध्या काण्ड का है। मन्थरा नाम की दासी जब महारानी कैकेयी के पास मुंह लटकाये आती है, तब उसका उदास मुँह देखकर वे उसके अनमनेपन का कारण पूछती हैं, किन्तु वह कोई उत्तर न देकर लम्बी-लम्बी साँसें लेने लगती है। गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं—

दासी की अत्यन्त दुखमयी दशा देखकर रानी कैकेयी भयभीत हो उठती हैं और उससे जोर देकर पूछती हैं कि तू राम, महाराज, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न का कुशल क्यों नहीं कहती ? यह प्रश्न सुनकर कुबरी के हृदय में शूल-सा चुभ गया।

अर्थ

राम तिलक..........................आली।

महारानी कैकेयी ने मन्थरा से जब राम के राज्याभिषेक का समाचार सुना, तब वे उससे कहने लगीं—

हे सखी ! यदि सचमुच ही कल राम का तिलक है, तो तू जो भी चाहे, मुझसे माँग ले, मैं तुझे मनचाही वस्तु देती हूँ।

पृ० ३

शब्दार्थ—पुनि=पुनः, फिर। अस=ऐसा। कबहुँ=कभी। घरफोरी=घर में फूट डालने वाली। छोभ=क्षोभ, व्यथा, पीड़ा। कस=क्यों। सर्वथा=सब प्रकार से। अनभल=बुराई। सवति=सपत्नी, सौत। भामिनि=स्त्री, तरुणी। माखी=मक्खी। मन फेर देना=मन को एक बात से हटाकर दूसरी बात पर कर देना। भरब=भरूँगी, जिताऊँगी। बरु=बल्कि। सेवकाई=सेवा, दासीपना।

अर्थ

पुनि अस..........................तोरे।

महारानी कैकेयी अपनी दासी मन्थरा की दुर्भावना देखकर क्रुद्ध हो जाती हैं और उससे कहती हैं—

हे कुबरी, यदि फिर कभी तू इस प्रकार की घर में फूट डालने वाली बात कहेगी, तो मैं तेरी जीभ पकड़ कर निकलवा लूँगी। यह तू अच्छी तरह जान

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है कि राम मुझे अपने प्राणों से भी प्रिय हैं। उनके तिलक का समाचार पाकर तेरे मन में क्षोभ क्यों हुआ है ?

अर्थ

नैहर..................................सेवकाई।

गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं कि जब मन्थरा ने कैकेयी को भली-भाँति ऊँचा-नीचा समझाकर उसे बहका दिया, तब वे उससे कहने लगीं—

मैं बल्कि अपने पिता के यहाँ जाकर वहीं अपना शेष जीवन बिता दूँगी, किन्तु जीते जी अपनी सौत (कौशल्या) की दासता नहीं करूँगी।

पृष्ठ ४

शब्दार्थ—उच्चकुल = ऊँचा वंश। नितान्त=सम्पूर्णतः, सब का सब, बिल्कुल ही। वन-वास=वन में निवास करना। राजनीतिक=राजनीति की। गई गिरा मति फेरी=सरस्वती ने बुद्धि पलट दी और फिर चली गई। भवितव्यता=भावी, भाग्य होनहार, नियति। अन्यथा=नहीं तो। वचन-बद्ध=वचन में बँधा हुआ। मनभावा=मन को भाने वाला, मन चाहा, अभिलषित। अनन्द=आनन्द। बधावा=उत्सव, मङ्गलाचार। राजी=सन्तुष्ट, प्रसन्न।

अर्थ

राजनीतिक दृष्टि से........................चला जाता है।

यह गद्यांश विद्वान लेखक श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र द्वारा लिखे गए 'रामायण के पात्रों पर धर्म-सङ्कट' नामक लेख से लिया गया है। इसमें विज्ञ लेखक कैकेयी के कार्य के अनौचित्य पर राजनीतिक दृष्टि से विचार कर रहा है। वह कहता है कि रानी कैकेयी ने जो राम को वनवास दिया वह कार्य राजनीति की दृष्टि से भी अनुचित है। क्यों अनुचित है, इसी पर वह कह रहा है—

यदि हम कैकेयी की कुलीनता की बात को त्याग दें और उसके कार्य पर राजनीतिक दृष्टि से ही केवल विचार करें, तो भी यह स्पष्ट प्रकट हो जायगा कि उसे राजनीतिक का भी पूर्ण ज्ञान नहीं था और उसने इस दृष्टि से भी उचित नहीं किया। पहले वह भली-भांति यह सोच लेतीं कि यदि राम वन को चले

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जाएँगे तो महाराज दशरथ उनके वियोग में जीवित रहेंगे या नहीं। दूसरी बात की ओर भी, जो उसका मुख्य ध्येय था, उसका ध्यान नहीं गया। वह यह कि राम के वन-गमन और राज्य-त्याग का भरत पर क्या प्रभाव पड़ेगा। वे इसको स्वीकार करेगा अथवा नहीं। भरत की माता होने के कारण उनके स्वभाव का ज्ञान तो उसे होना ही चाहिए था। उसे पहले ही जान लेना चाहिए था कि भरत उसके इस कार्य का समर्थन कदापि नहीं करेंगे। प्रसन्नता की कौन कहे, उन्हें इससे कष्ट ही होगा, किन्तु जब गोस्वामी तुलसीदास के उस कथन पर हमारा ध्यान जाता है कि सरस्वतीजी ने मन्थरा की बुद्धि पलट दी थी, तब तो कैकेयी का सारा दोष ही दूर हो जाता है और हम यह सोचकर सन्तोष की साँस लेते हैं कि कैकेयी का इसमें कोई भी दोष नहीं था, विधाता को यही करना ही था, उसे भला कौन मिटा सकता था।

अर्थ

दूसरा धर्म-संकट..............................न होते।

यह गद्य-खंड लेखक श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र लिखित 'रामायण के पात्रों पर धर्म-संकट' नामक लेख से लिया गया है। लेखन ने यहाँ कैकेयी के वरदान मांगने और दशरथ द्वारा प्रतिज्ञा बद्ध होने पर विचार उपस्थित किया है। कैकेयी जब महाराज दशरथ से वर माँगती है, तब वे सहसा धर्म-संकट में पड़ जाते हैं, इसी पर लेखक कहता है—

कैकेयी के पश्चात् जिस व्यक्ति पर धर्म-संकट पड़ता है वे हैं महाराज दशरथ। श्रीराम महाराज को अपने प्राणों से भी प्रिय थे, अतः वे उन्हें राज-तिलक दें अथवा कैकेयी को दिए गए अपने वचन की रक्षा करें। यह सच है कि उन्होंने तिलक की सारी तैयारी तो कर डाली, किन्तु इसके पहले कैकेयी से परामर्श नहीं किया था। कारण यह था कि वे सोचे बैठे थे कि जिस प्रकार सारे अयोध्या-वासी उनके इस कार्य का हर्ष पूर्वक समर्थन कर रहे हैं, उसी प्रकार कैकेयी भी इस समाचार को सहसा पाकर अतिशय प्रसन्न हो जायगी, क्योंकि उन्हें यह भली भाँति विदित था कि कैकेयी राम को भरत से भी अधिक चाहती हैं। वे इस बात की कल्पना तक नहीं कर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सकते थे कि रानी में इस प्रकार सहसा इतना परिवर्तन हो जायगा। इसी कारण उन्होंने हर्ष में भरकर यह कहा कि आज तुम्हें जो भी इच्छा हो मुझसे माँग लो और उन्होंने राम की शपथ खाकर उससे यह कह दिया था। यदि उन्हें कैकेयी पर तनिक भी सन्देह होता तो वे इस प्रकार सहसा कभी भी बिना विचारे वचन न दे बैठते।

शब्दार्थ—रघु-कुल=महाराज रघु का पुनीत वंश। रीति=मान्यता, परिपाटी। बरु=भले ही। वचन न जाई=वचन भङ्ग नहीं होता, दी हुई बात लौटाई नहीं जाती। भोर=सवेरा, प्रातःकाल। जनि=नहीं, मत। अवस्थाओं=दशाओं। प्रतिपालन=पूरा करना, निभाना, निर्वाह करना। बाध्य=बँधे हुए, विवश। शपथ=सौगन्ध। शत=सौ। युवराज-पद=युवराज का स्थान। काम बन जाना (मु०)=कार्य सिद्ध हो जाना, काम पूरा हो जाना। कदापि कभी भी। कुल-गुरु=परम्परा से होते आए अपने वंश के गुरु। सूचना=समाचार। शुद्ध=निर्विकार, निर्मल। अनौचित्य=अनुचित का भाव, अनुचितपन। अनुज=छोटा भाई। बिहाइ=छोड़कर। विपरीत=उल्टी। सुमन्त=राजा दशरथ के एक मन्त्री का नाम। जननी=माता। बड़भागी=अत्यन्त भाग्यशाली। अनुरागी=प्रेमी। वचन=आज्ञा।

अर्थ

माँगु माथ.....................................मारसि मोही।

महाराज दशरथ से जब कैकेयी ने राम को वन भेजने का बर माँगा तब उन्होंने अत्यन्त व्यथा के साथ उससे कहा—

हे रानी, यदि तू मुझसे मेरा सिर माँगो तो मैं अभी तुझे देने को प्रस्तुत हूँ, किन्तु तू इस प्रकार मुझे राम के वियोग में तड़पाकर न मार।

अर्थ

रघुकुल-रीति ... ... न जाई।

महाराज दशरथ अपनी रानी कैकेयी से कहते हैं कि यह रघुवंशियों की पुरानी चली आई हुई रीति है, कि हमारे प्राण अपने वचन के पालन करने में भले ही चले जायँ, किन्तु हम अपने दिये हुए वचन से पीछे नहीं हटते।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थ

हृदय मनाव··· ··· ··· ··· ··· ··· ···जनि कोई।

गोस्वामी तुलसीदास महाराज दशरथ की उस समय की मनोदशा का वर्णन कर रहे हैं जब रात में उनकी प्रिय रानी कैकेयी ने उनसे भरत के राजतिलक और राम को वनवास का वरदान माँगा था। राजा दशरथ मन ही मन इस प्रकार देवों को मना रहे हैं कि हे देव-गण, हे हमारे वंश के आदि पुरुष सूर्य देव, तुम आज पृथ्वीपर उदय ही मत होओ, जिससे प्रभात न हो और राम को वन जाने के लिए भी कोई न कहे। वे अयोध्या में ही रह जायँ।

अनुच्छेद १३

अर्थ

विमल-वंस··· ··· ··· ··· ··· ··· ···अभिषेकू।

राम-चरित मानस के अयोध्याकाण्ड की यह चौपाई है। जब कुल-गुरु वशिष्ठ श्रीरामचन्द्र के भवन में जाकर उन्हें उनके अभिषेक की सूचना देते हैं और उस रात्रि को भूमि-शयन का विधान बताकर आते हैं, तब श्रीरामचन्द्रजी के हृदय में जो विशुद्ध भावना उदित होती है उसी को वे इस प्रकार कहते हैं—

हमारे निर्मल सूर्य-वंश में जो रीतियाँ प्राचीनकाल से चली आ रही हैं उनमें यह एक रीति मुझे अनुचित प्रतीत होती है कि छोटे सभी भाइयों को छोड़कर केवल बड़े भ्राता को ही अभिषिक्त किया जाता है। अभिषेक का औचित्य तो तभी होता जब सभी भाइयों का साथ-साथ अभिषेक होता।

अर्थ

दूसरे ही दिन··· ··· ··· ··· ··· ···समझते हैं।

यह गद्यांश विद्वान् लेखक श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र द्वारा लिखित 'रामायण के पात्रों पर धर्म-संकट' नामक लेख से उद्धृत किया गया है। लेखक क्रमशः अन्य पात्रों के धर्म-संकट की स्थिति को समझाता हुआ श्रीरामचन्द्र की मनः स्थिति का विवेचन करता है। पहले दिन उन्हें अपने कुल-गुरु द्वारा अभिषेक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

की सूचना मिल चुकी थी, ठीक दूसरे दिन परिस्थिति बदल जाती है, इस विरोधी संवाद को पाकर उनकी विचार-धारा पर जो प्रभाव पड़ता है, उसे समझाता हुआ विज्ञ लेखक कहता है—

श्री रामचन्द्र को जिस दिन गुरु वशिष्ठ द्वारा अभिषेक का समाचार विदित हुआ था, उसके ठीक दूसरे दिन प्रातःकाल उन्हें उससे एक दम उल्टी आज्ञा प्राप्त होती है। सुमन्त राजा के आज बाहर आने में विलम्ब होता देख अन्तःपुर में उसका कारण जानने जाते हैं और कैकयी उनसे कुछ भी न कहकर केवल राम को बुला लाने को कहती है। सुमन्त उन्हें कोप-भवन में भेज देते हैं। जब राम ने कैकेयी से राजा की व्यथित दशा का कारण पूछा तब उन्हें उसके द्वारा सारी बात विदित होती है। उन्हें यह मालूम हो जाता है कि उन्हें चौदह वर्षों तक वन में रहने की आज्ञा मिली है। यद्यपि राम को पहले दिन जो तिलक का हर्ष-संवाद मिल चुका था उसके सर्वथा विरुद्ध यह संवाद था, तथापि वे इस आज्ञा के पालन करने से लेशमात्र भी विचलित नहीं होते, इतना ही नहीं, वे वनवास की आज्ञा को अपने लिए सौभाग्य समझते हैं।

अनुच्छेद १४

पल्लवन

यदि सच पूछा जाय··· ··· ·· ··· ··· ···या न जायँ।

'रामायण के पात्रों पर संकट' के मनीषी लेखक श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र राम की मनोदशा का चित्रण परस्पर विरोधी परिस्थितियों को सामने रखते हुए करते हैं। लेखक का कथन है कि वास्तविकता तो यह है कि रामायण पात्रों के समान राम के सम्मुख धर्म-सङ्कट आया ही नहीं; क्योंकि राज्याभिषेक के समाचार से उन्हें हर्ष नहीं हुआ था। वे तो उस प्रथम आज्ञा के पालन को ही अनुचित समझ रहे थे कि अभिषेक केवल बड़े का ही क्यों हो? अब जो उन्हें वन जाने की आज्ञा मिली तो अनेक कारणों से यही उन्हें समुचित, साथ ही हितकर भी प्रतीत हुई। अतः उनके सम्मुख वन जाने या न जाने का द्वैविध्य उपस्थित ही नहीं हुआ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनुच्छेद १४-१६

शब्दार्थ--आज्ञाकारी=आज्ञा का पालन करने वाले। विसेषि=विशेष रूप से, असामान्य रूप से। हित=लाभ। आयसु=आज्ञा। सम्मत=अभिमत, स्वीकृत, मनचाहा। तोर=तेरा। आनन्द-प्रद=आनन्द देने वाला, सुखदायी। प्रानप्रिय=प्रानों के समान प्यारे। विधि=ब्रह्मा, भाग्य। सनमुख=सम्मुख, अनुकूल। आजू=आज। कानन=वन, जङ्गल। 'अनुचित-उचित विचार तजि' =ठीक है या नहीं, इस बात का बिना विचार किए ही। पितु-बैन=पितृ-वचन, पिता की आज्ञा। अपूर्व=अनोखा। पितृ-भक्ति=पिता के प्रति श्रद्धा और प्रेम। समकालीन=एक ही समय में वर्तमान रहने वाला, समसामयिक। सुकवि=अच्छे कवि। रहीम=इनका पूरा नाम अब्दुर्रहीम खानखाना था। ये अकबर के मुख्य मन्त्रियों में थे। इन्हें संस्कृत, अरबी, फारसी और हिन्दी का पूर्ण ज्ञान था। ये हिन्दी के बड़े ही ऊँचे कवि थे। गुरायसु=माता, पिता या गुरु की आज्ञा। गाढ़ि=कठोर, कठिन, दबाव डालने वाली। सुजस=सुयश, ख्याति, प्रशंसा। बाढ़ि=बढ़कर। निर्णय=फैसला। सर्वथा=पूर्ण रूप से। अयोध्या-वासी=अयोध्या के रहने वाले, अयोध्यापुरी के नागरिक। सहज ही=अनायास, बिना श्रम के ही। आज्ञा-उल्लंघन=आज्ञा की उपेक्षा, आज्ञा को न मानना। भक्त=श्रद्धालु, अनुरागी। आपत्तियों=विपत्तियों, आफतों। निवारण=दूर करना, हटाना। स्वीकार=मानना।

अर्थ

चौ०—मुनि-गन मिलन..........................जननी तोर।

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित-मानस के अयोध्याकाण्ड में श्रीरामचन्द्र के मुख से उनके वनवास के विषय में उनकी प्रसन्नता इन शब्दों में व्यक्त कराई है। अपने वनवास का समाचार कैकेयी द्वारा सुनकर वे विमाता कैकेयी से कहते हैं—

हे माता, वन तो मेरे लिए सब प्रकार से हितकर है। वहाँ जाने से मेरा सबसे बड़ा हित यह होगा कि ऋषि-मुनियों का दर्शन होगा और उनसे नाना

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रकार के ज्ञान प्राप्त होंगे। दूसरी बात जो महत्त्व की है वह यह कि वहाँ जाने से पिता की आज्ञा का पालन हो जायगा, और साथ ही मेरे वन-गमन के प्रति आपकी भी स्वीकृति मिल चुकी है। अतः वन तो मेरे लिए सभी प्रकार से वरणीय है।

अर्थ

चौ०—भरत प्रानप्रिय·························आजू।

आदर्श पुत्र एवं आदर्श भ्राता राम अपनी विमाता कैकेयी द्वारा मांगे गए दोनों वरदानों का औचित्य बड़े ही मार्मिकता के साथ समर्थित करते हैं। भरत के राज्याभिषेक पर अपनी सम्मति प्रकट करते हुए वे कैकेयी से कहते हैं—

हे माता, भाई भरत तो मुझे प्राणों के समान प्रिय हैं, उन्हें अयोध्या का राज्य प्राप्त हो जाता है (और वन में जाने से उधर मेरा अपार हित है), अतः मैं देखता हूँ कि ब्रह्मा (भाग्य) सब प्रकार से मेरे अनुकूल है।

अनुच्छेद १५

अर्थ

राम ने यहां·························ठीक है या नहीं।

(अवतरण) यह गद्य-खण्ड विद्वद्वर बलभद्र प्रसाद मिश्र द्वारा लिखे गए 'रामायण के पात्रों पर संकट'—नामक निबन्ध से ग्रहण किया गया है। राम को महाराज दशरथ की प्रथम आज्ञा राज्याभिषेक की और दूसरे दिन उन्हें आज्ञा प्राप्त हुई वन जाने की। उन्होंने दोनों परस्पर विरोधी आज्ञाओं में वनवास वाली आज्ञा का समर्थन किया और उसे प्रसन्नता के साथ शिरोधार्य किया। विज्ञ लेखक का यहाँ कथन यह है कि राम ने जिस पथ का अवलम्बन किया, उसका अवलम्बन उचित था अथवा अनुचित, इसी पर हमें यहाँ विचार करना है। वह कहता है—

राम ने यहाँ पितृ-आज्ञा का आंखें मूँद कर पालन किया, यह सोचा नहीं कि इस आज्ञा का पालन उचित है या नहीं, और ऐसा करके उन्होंने अपने

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आज्ञाकारी पुत्र होने का अनोखा परिचय अवश्य दिया है ; किन्तु उनका वैसा करना सार्वजनीन दृष्टि से अच्छा हुआ या बुरा इस पर हम यहाँ विचार करेंगे।

दोहार्थ

अनुचित वचन............भरत को बाढ़ि।

यह दोहा रससिद्ध कवि रहीम जी का है। इसमें उन्होंने लोक को नीति का उपदेश दिया है। वे कहते हैं—

हे विश्व के लोगों, चाहे अपने पिता अथवामाता अथवा गुरु की कितनी ही कठोर आज्ञा क्यों न हो, किन्तु यदि वह आज्ञा अनुचित हो तो उसे कदापि नहीं मानना चाहिए। देखो, राम ने अपने पिता की अनुचित आज्ञा मानी, वे वन को चले गए, किन्तु भरत ने उनकी अनुचित आज्ञा न मानी उन्होंने राजा होना स्वीकार नहीं किया। यही कारण है कि संसार में भरत का यश राम के यश से भी कहीं बढ़कर उज्ज्वल है।

अनुच्छेद १६

अर्थ

प्रसन्नता यान गता.....................दुःखतः।

अयोध्याकाण्ड के प्रारम्भ में कवि-कुल-शिरोमणि महात्मा तुलसीदास ने संस्कृत में शिवजी तथा श्रीरामचन्द्र की वन्दना की है। ये वन्दनाएँ संस्कृत भाषा में हैं। यहां वे राम की वन्दना इस प्रकार कर रहे हैं—

भगवान् श्रीराम को जब अपने राज्याभिषेक का संवाद मिला तब उनके मुख पर प्रसन्नता नहीं दिखाई पड़ी, तथा जब उन्हें वनवास की आज्ञा मिली तब भावी दुःख की आशंका से उनके मुख पर किसी प्रकार की मलिन छाया तक दिखाई न पड़ी।

अर्थ

दूसरी ओर..................कर सकते थे।

विद्वान् गद्यकार श्री बलभद्र प्रसादजी मिश्र 'रामायण के पात्रों पर संकट' नामक अपने विद्वत्तापूर्ण लेख में श्री रामचन्द्र के आज्ञा-पालन पर विवेचन प्रस्तुत करते

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हुए राजनीतिज्ञ की दृष्टि से उनके कार्य का अनौचित्य सिद्ध किया है। उनका कथन है—

राम को राज्य-सिंहासन प्राप्त करने के प्रति किसी प्रकार की उत्कण्ठा नहीं थी, उनकी दृष्टि में राज्य और वन दोनों ही समान थे। अतः जब राम के इस अलौकिक चरित्र की ओर हमारी दृष्टि जाती है, तब तो उनका वनवास करने का निर्णय सर्वथा चित ही प्रतीत होता है, किन्तु यदि हम राम के इस निर्णय पर एक राजनीतिज्ञ की दृष्टि से विचार करते हैं तब उनका यह निर्णय उचित प्रतीत नहीं होता; क्योंकि राजा दशरथ की इस आज्ञा को जनता का समर्थन प्राप्त नहीं था, वह यह कदापि नहीं चाहती थी कि इस प्रकार के सुशील और प्रजा-हितैषी राजकुमार राम वन को चले जायँ। अतः प्रजा की सहमति से राम को युवराज-पद बिना किसी प्रकार का प्रयास किए ही प्राप्त कर सकते थे। दूसरी बात जो विशेषतया ध्यान देने की थी, वह थी पिता की आज्ञा; किन्तु राजा दशरथ की मनःस्थिति से राम पूर्णतया अवगत हो चुके थे और उन्हें यह भली-भाँति विदित हो चुका था कि राजा नहीं चाहते कि वे वन जायँ। तीसरी बात भरत के हित की दृष्टि थी। राम को उनके मनोभावों का भी पता पहले ही से था। वे जानते कि भरत माता के कहने में आकर कभी भी राज्यासन स्वीकार नहीं करेंगे और न ही उनका वनगमन ही उन्हें स्वीकृत होगा। चौथी बात रघुकुल-रीति की, अर्थात् बड़े भाई को ही युवराज-पद प्राप्त हो, थी। अतः इस आधार पर भी राम अपना वन-गमन रोक सकते थे और सारी बाधाएँ अपने आप ही शान्त कर सकते थे। अतः वैसा न करके उन्होंने अपनी राजनीतिक ज्ञान-शून्यता का ही परिचय दिया।

अनुच्छेद १७-१८

शब्दार्थ—अजब गड़बड़ी=अद्भुत उलझन। क्रमशः=एक-एक करके। धक्का=ठेस, आघात। मग्न=डूबे हुए, लीन। शंका=संदेह। राखौं=रोक लूँ। सुतहि=पुत्र को। अनुरोधू=हठ, जिद। बन्धु-बिरोधू=गृह-कलह, भाइयों में विरोध। संकट=विपत्ति। सोच=शोच, चिन्ता। विवश=वशीभूत। युक्ति=उपाय, कौशल।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थ

चौ०-राखौं सुतहिं ....मै रानी।

गोस्वामी तुलसीदास यहाँ माता कौशल्या की उस समय की मनोदशा का चित्रण कर रहे हैं जब राम के मुख से वे सहसा पिता की दूसरी आज्ञा अर्थात् वनवास की आज्ञा की बात सुनती हैं। उनके चिन्तन को गोस्वामीजी ने अपने शब्दों में इस प्रकार प्रकट किया है। माता कौशल्या सोच रही हैं—

यदि मैं हठ करके अपने पुत्र राम को वन जाने से रोक लूँ तो दो आपत्तियाँ उठ खड़ी होती हैं। एक तो यह कि पति की आज्ञा को तोड़कर मैं अपना धर्म त्याग देती हूँ, दूसरी यह कि घर में ही विरोध उत्पन्न हो जाता है और ऐसा न करके यदि मैं पुत्र को वन जाने के लिए कहूँ तो भी महान् हानि है (मेरी वृद्धावस्था का सहारा आँखों से दूर हो जाता है)। इस प्रकार विभिन्न परिणामों को सोचकर महारानी कौशल्या महान् विपत्ति और चिन्ता से आकुल हो उठती हैं (वे क्या करें, क्या न करें, यही समझ में नहीं आता)।

अनुच्छेद १९-२१

शब्दार्थ—आयसु=आज्ञा। ताता=तात, पुत्र। जनि=मत। स्त्री-धर्म =पत्नी का धर्म, पति के प्रति पत्नी का कर्तव्य; पति की आज्ञा का पालन। बहुरि=फिर। तिय-धरमु=स्त्री-धर्म। सयानी=बुद्धिमती। सुत=पुत्र। सम= समान, बराबर। बलि=बलैया लेना। नीका=अच्छा, उत्तम, उचित। क= का (अवधी भाषा का सम्बन्ध-कारक का चिन्ह)। टीका=शिरोभूषण; सर्वोत्तम। प्रधानता=श्रेष्ठता, मुख्यता। व्याकुल=घबराना। कि, की=अथवा। तनु=शरीर। बिधि=ब्रह्मा, भाग्य। करतब=कर्म। बिधि-करतब=विधाता का लेख, कर्म-लेख। असर=प्रभाव। अम्बा=माता। अवलम्ब=सहारा, आश्रय।

अर्थ

चौ०—बहुरि समुझि... ... ...टीका।

गोस्वामी तुलसीदासजी यहाँ माता कौशल्या के विचार-मन्थन के पश्चात्

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उनके निर्णय को व्यक्त कर रहे हैं। वे राम से उनके वनवास का ही समर्थन करती हुई पहले सोचकर तब कहती हैं। गोस्वामीजी कहते हैं—

माता कौशल्या ने फिर अपने पत्नी-धर्म पर विचार किया कि मुझे भी पति की आज्ञा को सिर-माथे पर लेना चाहिए। उन्होंने राम और भरत दोनों पुत्रों को समान दृष्टि से देखा। तब अन्त में राम से कहा कि हे पुत्र, मैं बलैया जाती हूँ, तुमने बहुत उत्तम निर्णय किया है. वास्तव में पिता की आज्ञा का पालन सब धर्मों से श्रेष्ठ धर्म है।

अर्थ

कौशल्या के··· ··· ··· ··· ·· ···दूर कर देता है।

लेखक-प्रवर बलभद्र प्रसाद मिश्र माता कौशल्या के निर्णय पर अपना विचार प्रस्तुत करते हुए उनके निर्णय का समर्थन ही करते हैं। कौशल्या की धर्म-संकट से मुक्ति पर वे अपना विचार इस प्रकार व्यक्त करते हैं—

माता कौशल्या ने राम के वन-गमन के निर्णय का जो समर्थन अपने स्त्री-धर्म को मातृ-धर्म श्रेष्ठता प्रदान करके किया, यह कुछ खटकने वाली बात अवश्य है, क्योंकि माता का स्थान पत्नी से अधिक महत्वशाली है; किन्तु भरत को भी अपने पुत्र राम ही के समान समझ कर वनवास का निर्णय करना, उस दोष का परिहार भी कर देता है; क्योंकि भरत जैसे राम के समान प्रिय पुत्र के तिलक का विरोध कैसे किया जा सकता है?

अर्थ

चौ०—की तनु प्रान······················जाना।

यह चौपाई कवि-शिरोमणि गो० तुलसीदास के राम-चरित-मानस के अयोध्याकाण्ड से उद्धृत की गई है। राम माता कौशल्या से वन-गमन के लिए आज्ञा लेने गए हैं। समाचार पाकर सीता भी वहाँ जाती हैं और मन ही मन सोचती हैं कि कौन जाने प्राण-पति मुझे अपने साथ ले चलेंगे अथवा नहीं! यदि नहीं ले चलेंगे तब तो मुझे उनके वियोग में अवश्य ही प्राण-त्याग करना पड़ेगा। उनकी इसी मानसिक उलझन को गोस्वामीजी ने इस प्रकार व्यक्त किया है। वे सोचती हैं—

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

न जाने मेरे प्राण इस शरीर के साथ-साथ ही पति के साथ चलेंगे अथवा शरीर को त्यागकर इन्हें साथ जाना पड़ेगा। विधाता का भाग्य-लेख कुछ समझ में नहीं आता।

अर्थ

यह तो सीताजी.................................साथ जाँयगे।

विद्वान् गद्यकार श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र सीता की मनोदशा को, उनके अन्तस्तल की सन्देहात्मक स्थिति को समझाते हुए कहते हैं—

सीताजी अपने पति श्री रामचन्द्र की इतनी अनन्य उपासिका हैं कि उन्हें यह निश्चय पूर्वक विश्वास है कि यदि पतिदेव उन्हें अपने साथ वन नहीं ले जायँगे तो वे उनके विरह में कदापि जीवित नहीं रह सकतीं, उन्हें अपने प्राणों को त्यागना पड़ेगा ही।

अनुच्छे २२—२३

शब्दार्थ— सुकुमारता=कोमलता। शिक्षा=उपदेश। तुलना=समानता और विषमता की जाँच या परख। हतोत्साह=निरुत्साहित, मन को फेर देना। दृढ़=अटल, स्थिर। व्यंगमय=व्यंग से पूर्ण, चुटीला। सुन्दरता=उत्तमता, उचित ढंग। बन-जोगू=वन में रहने के योग्य। तप=तपस्या, कष्टमय व्रत। मो कहँ=मुझे, मेरे लिए। भोगू=भोग, सांसारिक सुख-सुविधा। प्रकार=ढंग। बिछोह=वियोग, विरह, बिछुड़न। मृदु-बानी=मधुर वचन, मीठी बातें। सादर=आदर के साथ, श्रद्धा पूर्वक। पातिव्रत=पतिव्रता का धर्म, पति-सेवा, पति-परायणता। पद-पूजा=चरणों की पूजा, चरण-सेवा। मनमाहीं=मन के भीतर। पिय=प्रिय; पति; प्रेम-पात्र। जग=संसार। धाम=भवन, गृह। धरनि=पृथ्वी, धरती। पुर=नगर। राजू=राज्य। पति-बिहीन=पति से रहित, पति के बिना। समाजू=समाज, समूह।

अर्थ

राम सीता को.................सुन्दरता से देती हैं।

यह गद्यांश मनीषी गद्यकार श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र द्वारा लिखित 'रामायण

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के मुख्य पात्रों पर सङ्कट' नामक लेख से लिया गया है। अयोध्याकाण्ड में राम-वन-गमन के अवसर पर सीता द्वारा साथ चलने के लिए अनुरोध करने पर श्री रामचन्द्र उन्हें किस प्रकार समझाते हैं और सीताजी उनकी शिक्षा का किस प्रकार युक्तिपूर्वक उत्तर देती हुई खण्डन करती हैं, यही इस प्रसंग में लेखक ने समझाया है। लेखक कहता है ...

भारत के प्राचीन सांस्कृतिक आदर्श के अनुसार मर्यादा पुरुषोत्तम राम अपनी माता कौशल्या के सम्मुख अपनी पत्नी सीता को वन-गमन से रोकने के निमित्त शिक्षा देने में सङ्कोच का अनुभव करते हैं, किन्तु यदि इस अवसर पर उन्हें समझाकर आश्वस्त नहीं करते तो उसका अर्थ होगा कि बिना किसी प्रकार का ननु-नच किए ही वे उन्हें साथ ले जायँ। अतः ऐसी उलझनपूर्ण परिस्थिति को देखकर उन्हें समझाने के लिए विवश होना पड़ता है। पहले उन्होंने वन के नाना प्रकार के कष्टों का उल्लेख किया, फिर सीता की शारीरिक कोमलता को भी उन कष्टों के सामने रखकर यह दिखलाया कि वे वन के कष्टों को सहन कर सकने में कदापि समर्थ नहीं हो सकेंगी। इस प्रकार उन्होंने सीता के वन जाने के उत्साह को नष्ट कर देना चाहा; किन्तु सारे कष्टों का वर्णन सुनकर भी वे अविचल बनी रहीं। इतना ही नहीं राम की युक्ति को उन्होंने बड़े ही उचित ढंग से काट डाला।

अर्थ

चौ०—मैं सुकुमारि··· ··· ··· ··· ··· ···मो कहँ भोगू।

यह चौपाई रामायण के अयोध्याकाण्ड से उद्धृत की गई है। यहाँ सीता जी राम की वन में जाने की शिक्षा का प्रत्याख्यान करती हुई उन्हें उत्तर देती हैं। राम ने उन्हें यह समझाया कि वन में नाना प्रकार के कष्ट झेलने पड़ेंगे, जिनका सहन कर सकना उनके जैसी सुकुमारी नारी के लिए अति दुष्कर है। इसी पर सीता जी उत्तर देती हुई कहती हैं—

हे प्राण-पति! आपने क्या ही सुन्दर बात कह डाली है कि मैं वन-कष्टों को नहीं सह सकती हूँ। यह तो बताइए कि क्या मैं ही सुकोमल शरीर वाली हूँ, आप नहीं हैं? आपका यह शरीर (राज-सुखों में पला हुआ) क्या वन के

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

योग्य है ? क्या आपको तपस्या करना उचित है और आप की पति-प्राणा सीता को आपको त्यागकर राज-भवन के विलासमय भोगों का सुख भोगना चाहिए ? (कदापि नहीं)।

अर्थ

चौ०—मैं पुनि समुझि ... ... सोक समाजू।

ये चौपाइयाँ रामायण के अयोध्याकाण्ड से लेकर उद्धृत की गई हैं। श्री रामचन्द्रजी के समझाने पर सीता जी वन चलने के निमित्त हठ पर डटी हुई अपने निश्चय का अन्तिम उत्तर देती हुई उनसे कहती हैं—

हे प्राणाधार ! मैंने अपने मन में पूरा पूरा विचार करके यह समझ लिया है कि संसार का महान् से महान् दुःख भी पति के वियोग से उत्पन्न दुःख की समानता नहीं कर सकता। (नारीके लिए इससे महान् दुःखविश्व में और कोई भी नहीं है)। मनुष्य का स्वस्थ सुन्दर शरीर, सारे ऐहिक सुखों का साधन धन, सुखदायी भवन, पृथ्वी, नगर और राज्य ये सब के सब पति के न रहने पर शोक ही प्रदान करते हैं (इनका सुख पत्नी को प्राप्त हो सकता है पति के साथ रहने में, अन्यथा ये सब कष्टदायियों के समूह ही हैं)।

अनु० २४—२५

शब्दार्थ

कर्तव्य=धर्म। विपत्ति=कष्ट, आपत्ति। आदर्श=नमूना (model) अनन्य भक्त=एक को ही सबसे अधिक चाहने वाला, दूसरे को नहीं। शङ्का=सन्देह, दुविधा। काह=क्या। कहब=कहेंगे। रखिहँहि=रखेंगे। लइहँहि=लेंगे। सान्त्वना=ढाढ़स, धैर्य। आराध्य देव=पूज्य देवता, उपास्य देव। वचनों=बातों। बात काटना (मु०)=बात को न मानना, प्रतिवाद करना, आज्ञा का उल्लंघन करना। बेबसी=विवशता, असमर्थता। आकृति=मुख की भङ्गी, मुख पर अङ्कित भाव। एकबारगी=सहसा। दासु=दास, सेवक, आज्ञाकारी। तजहु=छोड़ते हो, तजते हो। त=तो। कहा=क्या। बसाइ=वश है, अधिकार है। सबइ=सभी, सब कुछ। दीनबन्धु=दीनों के सखा। उर=हृदय। अन्तर-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जामी=अन्तर्यामी, भीतरी भावना को समझने वाले। स्वीकृति=मान्यता, मंजूरी।

अर्थ

स्त्री का कर्तव्य ·············· होना ही चाहिए।

रामचरित-मानस के कुशल ज्ञाता श्री बलभद्रप्रसाद मिश्र ने अपने 'रामायण के मुख्य पात्रों पर सङ्कट' नामक विवेचनात्मक अध्ययन में सीता को रामके साथ बन जाने के अनुरोध का समर्थन किया है। उसी के औचित्य को दृष्टिमें रख-कर वे कहते हैं—

पति-परायणा साध्वी पत्नी का धर्म यही है कियदि पति पर अकस्मात् किसी प्रकार का संकट आ पड़े, उसका जीवन दुःखों के कण्टकमय पथ से चलने को विवश हो जाय तो वह उसका प्राणपण से साथ दे, उसका दृढ़ अवलम्बन बन जाय। जैसा कि गोस्वामी तुलसीदास ने अपने राम-चरित-मानस में अन्यत्र कहा भी है—

"धीरज, धरम, मित्र अरु नारी।
आपति-काल परखिये चारी॥"

यह तो सामान्य पत्नियों का कर्तव्य है, फिर जो सारे संसार की पत्नियों के सम्मुख अपने पावन चरित्र द्वारा आदर्श उपस्थित करनेवाली सीताजी हैं, उनके विषय में तो फिर कुछ कहना ही नहीं है।

पद्यार्थ

मो कहँ·················लइहँहि साथा।

यह चौपाई राम-चरित-मानस के अयोध्याकाण्ड की है। कुमार लक्ष्मण ने जब राम का बन-गमन सुना तब ये भला किस प्रकार उनका साथ ऐसे कष्टदायी समय में त्याग सकते थे? किन्तु उनके सम्मुख आशङ्का यह उपस्थित थी कि उनके आराध्य देव उन्हें साथ चलने की आज्ञा प्रदान करेंगे अथवा नहीं। यही सोचते हुए वे मन ही मन कह रहे हैं।

न जाने रघुवंश-भूषण श्री रामचन्द्र मुझे कौन सी आज्ञा देंगे। वे मुझे यहीं घर पर ही रख देंगे अथवा साथ ले चलेंगे, (कुछ समझ में नहीं आता)।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थ

दो० चौ०—नाथ दासु मइ..............अंतरजामी।

कुमार लक्ष्मण राम के इतने महान् भक्त थे कि उनके सामने वे कुछ बोलने का साहस नहीं कर सकते थे। वे अपने विषय में क्या कहें, कुछ कह नहीं पा रहे थे, सहसा उनकी भक्ति ने उनकी वाणी को मुखर कर ही दिया और वे कह उठे—

हे भगवन् ! आप स्वामी हैं और मैं आपका सेवक। यदि आप मुझे अपने साथ न लेकर भवन पर ही त्याग देंगे, तो उसे मैं भला किस प्रकार अन्यथा कर सकूँगा ! किन्तु इतना तो आपको ज्ञात होगा ही कि हे स्वामी, आप ही मेरे माता, पिता, स्वजन, सखा और भाई सब कुछ हैं, क्योंकि आप दीनों के सखा और हृदय की भावनाओं को भली भाँति समझनेवाले हैं। (अधिक आपसे मैं कुछ कहने की आवश्यकता नहीं समझता)।

अनुच्छेद २७-२८

शब्दार्थ—साधारण दृष्टि=सामान्य दृष्टि, पारिवारिक सम्बन्ध का विचार (यदि राम के ब्रह्म होने का विचार एक ओर रख दें तो)। सर्वस्व=सब कुछ। स्तुत्य=स्तुति के योग्य, प्रशंसनीय। सभय=भय से। विधि=विधाता, ब्रह्मा। कहहि=कहती है। कि=अथवा। मोह=ममता, प्रेम। उपदेश=शिक्षा। निम्नलिखित=नीचे लिखी हुई। सीख=शिक्षा। जोरदार=प्रभावशाली। वैदेही=विदेह जनक की पुत्री, सीता। सनेही=स्नेही, स्नेह रखने वाले। जो पै=यदि। अवध=अयोध्या। काज=आवश्यकता। लहहिं=पावें। कलेसु, क्लेश, कष्ट। करेहु=करना (आज्ञार्थक)। इहै=यही। शक्ति=आत्म-बल। मातृ-भक्ति=माता की आज्ञाकारिता। स्वीकार=ग्रहण, अपनाव। जोर देना (मु०)=दबाव डालना। अन्तःकरण=हृदय। अधिकारी=अधिकार रखने वाला, हकदार।

अर्थ

लक्ष्मण का यह..........चाहिये था।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विशिष्ट लेखक श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र ने 'रामायण के पात्रों पर संकट' नामक लेख में सभी पात्रों के सम्मुख उपस्थित धर्म-संकट को दिखाते हुए उनके चरित्रों पर भी पर्याप्त प्रकाश डाला है। इन पंक्तियों में लेखक ने लक्ष्मण के चरित्र की एक सामान्य परिवार की दृष्टि से समीक्षा प्रस्तुत की गई है। लक्ष्मण राम से वन ले जाने की अनुमति चाह रहे हैं, उनकी दृष्टि परिवार के घरपर रहने वाले लोगों की ओर नहीं गई है। यहाँ तक कि उन्होंने अपने माता-पिता की स्थिति पर भी तनिक ध्यान दिया। इसी को लक्ष्य करके लेखक कह रहा है—

कुमार लक्ष्मण का अपने माता-पिता को त्याग कर, उनके प्रति अपने कर्तव्य का पालन न करके, राम के साथ वन जाने का निश्चय विशेष उत्तम कार्य नहीं कहा जायगा। राम उनके प्रिय भाई हैं, वे वन को जा रहे हैं, जहाँ उनपर नाना प्रकार की विपत्तियां के पड़ने की संभावना सहज ही की जा सकती है। अतः उनके प्रति भी उनका कर्तव्य है, किन्तु भाई से भी बढ़कर उनका कर्तव्य माता सुमित्रा और पिता महाराज दशरथ के प्रति है। और यह कर्तव्य तब और गम्भीर हो जाता है, जब हम देखते हैं कि कुमार भरत और शत्रुघ्न भी घर पर नहीं हैं और राम के वियोग में सभी पारिवारिक जन अत्यन्त दुखी हैं। ऐसे अवसर की गम्भीरता को पूर्णतया समझकर लक्ष्मण को पिता की सेवा में ही रह जाना चाहिए था।

पद्यार्थ

तात तुम्हारि मातु················इहै उपदेसू।

गोस्वामी तुलसीदास ने रामायण के अयोध्या काण्ड में सुमित्रा द्वारा लक्ष्मण को जो शिक्षा दिलाई है और उन्हें राम के साथ वन जाने का उपदेश दिया है, उसी को गद्य-लेखक श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र ने यहाँ उद्धृत किया है। माता सुमित्रा लक्ष्मण से कहती हैं—

हे प्रिय पुत्र, तुम्हारी माता सीता हैं और सब प्रकार से तुम पर स्नेह रखने वाले राम तुम्हारे पिता हैं, यही वन-वास के समय तुम अपने हृदय में रखना। यदि सीता और राम आज वन जा रहे हैं,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तो उन्हें छोड़कर अयोध्या में तुम्हारी कोई आवश्यकता नहीं है। हे पुत्र, मेरा यह उपदेश गाँठ में बाँध लो कि वन में तुम वे ही कार्य करना, जिनसे राम को किसी प्रकार का कष्ट न होने पावे।

अनुच्छेद २६—३०

भरत अपने ननिहाल से.................जौं जननी मत मोर।

शब्दार्थ—अपशकुनों=बुरे शकुन, असगुन। भावी=भविष्य में होने वाला। अनिष्ट=अप्रिय, अनचाही घटना। कुशल=शुभ समाचार, क्षेम। संवारी=बना ली, सुधार ली। बात सँवारना (मुहा०)=बिगड़ी बात को बना लेना, बिगड़ते कार्य को दुरुस्त कर लेना। बिचारी=बेचारी, अनीह, निर्दोष। उपद्रव=उत्पात, उथल-पुथल। अनर्थ=अनुचित, दुष्कर्म। गरि=गल गई। जीह=जिह्वा। कइकइ=कैकेयी। कत=क्यों। माँझा=में, मध्य। बाँझा=वन्ध्या, निस्सन्तानवती। कुलकलङ्क=वंश को कलङ्कित करने वाला। अपजस-भाजन=कुयश का पात्र, अपकीर्ति फैलाने वाला। द्रोही=शत्रु। षड्यन्त्र=प्रपञ्च, जाल, छलना। कदापि=कभी भी। अघ=पाप। गाइ-गोठ=गायों के रहने का घर, घारी। महिसुर-पुर=ब्राह्मणों का ग्राम। उपपातक=छोटे पाप। अहहीं=हैं। करम-बचन मन-भव=कर्म, वाणी और मन से होने वाले। जौं=यदि। मत=राय, सम्मति। परिहरि=छोड़कर। हरि=विष्णु। हर=शिव। भूत-गन=भूत-प्रेतों का समूह। बोर=कठिन। गति=दशा।

अर्थ

बर माँगत.................................प्रियजन-द्रोही।

जब भरत और शत्रुघ्न अपने ननिहाल से लौटकर आए और सबसे पहले अपनी माता कैकेयी से मिलने गए, तब जब उन्हें पिता की मृत्यु और राम के वन-गमन का समाचार मिला, तो वे अत्यन्त क्षुब्ध हो उठे और अपनी माता की भर्त्सना करने लगे। वे कैकेयी के ऐसे कुकृत्य पर उसे फटकारते हुए कहते हैं—

हे पापिनी, जब तू महाराज से वर—राम के वनवास और मेरे राज्याभिषेक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

का वर—माँगने लगी, तब तेरे पत्थर जैसे कठोर हृदय में तनिक भी पीड़ा नहीं हुई ? ऐसे वरदान माँगते समय तेरी जिह्वा क्यों नहीं गल गई, तेरे मुख में कीड़े क्यों नहीं पड़ गए ? हे विधाता इस संसार में कैकेयी का जन्म क्यों हुआ ? और यदि उसने जन्म ले ही लिया तो वन्ध्या क्यों नहीं हो गई, जिसने मेरे जैसे कुल को कलङ्कित करने वाले, अपकीर्ति फैलाने वाले और प्रिय स्वजनों के शत्रु के रूप में जन्म दिया।

अर्थ

जे अघ मातु··· ······ ··· ···मोर मत माता।

अपनी माता कैकेयी से मिलने के पश्चात् कुमार भरत तुरत माता कौशल्या के पास जाते हैं और उन्हें यह विश्वास दिला देने का भरसक प्रयास करते हैं कि कैकेयी के ऐसे कुकर्म में उनका तनिक भी हाथ नहीं रहा है, वे इसका रञ्चमात्र भी पता नहीं जानते थे कि उनकी माता ऐसा कुकर्म करने जायगी। ऐसा विश्वास बँधाने के लिए उन्होंने शपथ भी खाए। उसीका वर्णन कवि-कुल-पूज्य गोस्वामी तुलसीदास भरत के मुख से इस प्रकार कराते हैं—

हे माता ! माता, पिता और पुत्र की हत्या करने से जो पाप होता है; गायों के रहने के घर को जलाने तथा ब्राह्मणों की बस्ती को जलाने से जितना महान् पाप होता है; इतना ही नहीं, कवियों ने कर्म, वाणी और मन से होने वाले जितने पाप और छोटे पाप गिनाये हैं, वे सब मुझे लग जायँ, यदि राम को निकालकर राज्य करने में मेरी सम्मति तनिक भी रही हो।

हे माता ! जो अज्ञानी मनुष्य श्री विष्णु और शिवजी की उपासना का त्याग करके घोर भूत-प्रेतों की पूजा करते हैं, उनकी मरणोपरान्त जो दुर्गति होती है, वही नरक की यातना मुझे भी भुगतनी पड़े, यदि कैकेयी के कर्म में मेरा तनिक भी हाथ रहा हो।

अनुच्छेद ३१–३३

शब्दार्थ—नेकनीयती=सदुद्देश्य, शुभ भावना। एह=यह। सुगति=सद्गति, स्वर्ग। सुख=लौकिक आनन्द। लहहीं=पावेंगे। दाह-संस्कार=

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अन्त्येष्टि, मृत-संस्कार। ज्ञानोपदेश=ज्ञान की शिक्षा। अनुरोध=हठ, दबाव। बचन=वचन, आज्ञा। भाजन=पात्र। सुजस=सुकीर्ति, प्रतिष्ठा। अमरपति=इन्द्र, देवराज। अयन, ऐन=घर, भवन। अमरपति-ऐन=इन्द्रपुरी। फौज=सेना, वाहिनी। विवश=बाध्य। दृढ़ता=स्थिरता, अविचल भाव। पैरवी=प्रयत्न, कोशिश। नम्र=विनीत। निवेदन=प्रार्थना। सानुज=भाई (शत्रुघ्न) के साथ। मोहिं=मुझे। सबहिं=सबको। सनाथ=सदाश्रित, नाथ के आश्रय में रहने वाला। नतरु=अन्यथा। फेरियहि=लौटा दीजिए। चलऊँ=चलूँ। सीसधरि=शिरोधार्य करके। अवलम्ब=सहारा। अवधि=निश्चित समय की मीयाद, समय की निश्चित सीमा। सेई=सेवा करके। आधार=आश्रय, सहारा। प्रबोध=उपदेश, सांत्वना प्रदान करना। साँती=शान्ति। तोषु=तुष्टि, सन्तोष। पाँवरी=खड़ाऊँ। राज-काज=राज्य का कार्य। नित्य=प्रतिदिन। समाति=अँटती थी।

अर्थ

अनुचित-उचित..............................अमरपति अयन।

भरत के ननिहाल से लौटकर आने और महाराज दशरथ की अन्त्येष्टि-क्रिया सम्पन्न हो जाने के पश्चात् उनके कुल-गुरु महर्षि वशिष्ठ उन्हें अयोध्या का राज्य करने का उपदेश करते हैं; क्योंकि पिता की ऐसी ही आज्ञा थी, जिस आज्ञा का पालन करने के हेतु उनके बड़े भाई राम वन को चले गये थे। गुरुदेव भरत को उपदेश देते हुए कह रहे हैं—

हे प्रिय भरत! जो लोग पिता की आज्ञा को सुनकर, उसपर उचित है अथवा अनुचित, यह विचार किये बिना आँखें मूँदकर उसका पालन करते हैं, वे इस लोक में सुख और सुयश तथा मरणोपरान्त इन्द्रपुरी में निवास करते हैं।

अर्थ

सानुज पठइय..............................चलउँ मैं साथ।

जब भरत किसी की बात न मानकर अपने बन्धु-बान्धव तथा पुरजनों और सेना को लेकर राम से मिलने के निमित्त वन की ओर प्रस्थान किया, तब चित्रकूट में उनसे भेंट हो गयी। राज-सभा के बैठने पर भरत ने जो अपना

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मन्तव्य सुनाया, उसीको गोस्वामी तुलसीदास इस प्रकार लिख रहे हैं—

भरत ने श्री रामचन्द्र से निवेदन किया कि हे नाथ ! आप शत्रुघ्न के साथ मुझे वन में भेज दीजिये और स्वयं अयोध्यापुरी में चलकर सभी परिजनों तथा पुरजनों को सनाथ कीजिये। अथवा यह यदि आप को मान्य न हो तो दोनों भाई लक्ष्मण और शत्रुघ्न को यहाँ से लौटा दीजिए और मैं आप के साथ-साथ वन में चलूँ।

अर्थ

चौ०—अब कृपालु जस.................................सेई।

जब राम ने भरत के लौटाने के अनुरोध को किसी प्रकार स्वीकार नहीं किया, तब उससे निराश होकर भरत उनसे विनीत शब्दों में कहते हैं—

हे कृपामय श्री रामचन्द्र जी, अब आपकी जैसी आज्ञा हो, मैं वही सिर पर धारण करके वैसा कार्य करूँ। आप मुझे एक ऐसा सहारा दे दीजिए, जिसकी सेवा करके मैं चौदह वर्ष की अवधि को बिता देने में समर्थ हो सकूँ।

अर्थ

बन्धु प्रबोध.......................................तोषु न सौंती।

गोस्वामी तुलसीदासजी रामायण के अयोध्याकाण्ड में राम-भरत के वार्तालाप के प्रसङ्ग में राम के घर न लौटने पर भरत की मनोदशा का चित्रण करते हुए कहते हैं—

यद्यपि अग्रज राम ने अपने अनुज श्री भरत को बहुत कुछ समझाया, अनेक प्रकारसे उनके मन को सान्त्वना देनी चाही, तथापि बिना किसी प्रकार का सहारा पाए उनके मन को न तो सन्तोष मिल सका और न शान्ति ही मिली।

अर्थ

नित पूजत.......................................बहु भाँति।

भगवान् राम की चरण-पादुकाएँ लेकर कुमार भरत अयोध्यापुरी में लौट आए। उन्होंने उन पादुकाओं को ही बड़े भाई के स्थान पर सिंहासन पर बिठा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दिया और राज्य-शासन चलाने लगे। उनकी दिनचर्या का वर्णन करते हुए गोस्वामी जी कहते हैं—

भरत जी प्रतिदिन भगवान् राम की पादुकाओं का पूजन इतने प्रेम से करते थे, जो प्रेम कि उनके मन में समाता ही नहीं था (प्रेम में विह्वल हो जाया करते थे)। वे उन्हीं खड़ाउँओं से आज्ञा ले-लेकर नाना प्रकार के शासन-सम्बन्धी कार्यों को करते थे।

अनुच्छेद ३४—३५

शब्दार्थ—विकट=कठिन। उदारता=हृदय की विशालता, त्याग। अव्यवस्थित=ढीला-ढाला, बिना व्यवस्था का। पादुका=खड़ाऊँ। ननिहाल=नाना का घर। उज्ज्वल=विमल. निर्मल, निष्कलङ्क। कमीना=धोकेबाज, छली। क्षम्य=क्षमा कर देने योग्य। अनुरूप=अनुसार, हुबहू, वैसा ही। कुटिल=वक्र, टेढ़ा, छलपूर्ण। प्रतिज्ञाबद्ध=वचन में बँधा हुआ। प्रेरणा=आदेश, आज्ञा, संकेत। अवास्तविक=अयथार्थ, बनावटी, दिखावटी। अभिनय=नाट्य-क्रिया, नाटक का खेल।

अर्थ

जितना ही विकट.................................पालन भी किया है।

विद्वद्वर श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र अपने 'रामायण के पात्रों पर धर्म-सङ्कट' नामक निबन्ध में भरत के चरित्र की विवेचना करते हुए उनके औचित्यपूर्ण कार्य का निष्कर्ष यहाँ दे रहे हैं। वे कहते हैं—

राम के वन जाने के पश्चात् भरत के सम्मुख जो धर्म-संकट उपस्थित हुआ, वह अत्यन्त ही दुस्तर था, तथापि भरत ने बड़ी ही सफलता के साथ उसको निभाया है। राज्य-सिंहासन को सर्वथा तिलाञ्जलि देकर अपने महान् त्याग को भी विश्व में प्रतिष्ठित किया और साथ ही शासन का सुप्रबन्ध करके राज्य को सम्यक् रूप से चलाया है। यद्यपि राम के वनवास-काल में उन्होंने एक राजा का ही कार्य किया तथापि अपने सम्मुख भोग-लिप्सा को फटकने तक नहीं दिया। चौदह वर्ष पर्यन्त राज्य-शासन करके उन्होंने पिता की आज्ञा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

का पालन भी किया और अन्त में उसे राम के हाथों में सौंप कर पितृ-आज्ञा का अनौचित्य भी सिद्ध कर दिया।

अन्तिम अनुच्छेद

अर्थ

इतना सब उपर्युक्त··· ··· ··· ··· ······ ··· ···अभिनय कर रहे हैं।

प्रतिष्ठित लेखक श्री बलभद्र प्रसाद मिश्र ने राम-चरित्र-मानस के अयोध्या-काण्ड में आए हुए प्रमुख पात्रों के चरित्रों की समीक्षा करने के पश्चात् जो निष्कर्ष निकाला है, उसे अपने 'रामायण के पात्रों पर संकट' नामक लेख के अन्त में इस प्रकार व्यक्त किया है—

ऊपर जो विचार मैंने प्रस्तुत किया है, उसके अनन्तर जब हमारे सम्मुख गोस्वामी तुलसीदास की ऐसी पंक्तियाँ आती हैं, जिनसे यह विदित होता है कि परब्रह्म परमात्मा के अवतार श्रीरामचन्द्र ने भिन्न-भिन्न पात्रों द्वारा अपने इच्छानुसार कार्य सम्पन्न कराए हैं, वे पात्र स्वंयप्रेरित होकर कोई कार्य नहीं करते, तब सभी पात्रों के क्रिया-कलाप अयथार्थ प्रतीत होने लगते हैं। राम के वियोग में माता कौशल्या और पिता महाराज दशरथ का रोना-कलपना, सीता का वन में साथ चलने के लिए हठ आदि सभी बातें कृत्रिम प्रतीत होने लगती हैं। तब तो मन में यही भावना बद्ध-मूल होने लगती है कि राम, दशरथ, सीता आदि सभी पात्र मानों किसी नाटक में दर्शकों के लिए अभिनेताओं का कार्य कर रहे हों।

खेल

(ले०—श्री जैनेन्द्रकुमार)

जीवन परिचय—श्रीयुत जैनेन्द्रकुमार दिल्ली के निवासी हैं। इन्होंने हिन्दी-गद्य के उत्थान-काल के पश्चात् साहित्य-क्षेत्रमें पदार्पण किया। इनका मुख्य-क्षेत्र उपन्यास और कहानी-साहित्य है। समाज के विभिन्न पहलुओं को अपनाकर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इन्होंने हमारे समाज की रूप-रेखा बड़ी सावधानीसे प्रस्तुत की है। अन्तर्वृत्तियों का जैसा सुन्दर निदर्शन इनकी कृतियों में हुआ है, वैसा बहुत कम हिन्दी-कथाकारों में पाया जाता है। सामान्य-सी बात को लेकर ये बड़ी दक्षता से कहानी का विकास उपस्थित करते हैं। इनकी कहानियाँ बड़ी मनोवैज्ञानिक होती हैं। कोमल भावनाओं का सूक्ष्म निदर्शन इनकी सबसे बड़ी विशेषता है। भावानुरूप इनकी भाषा भी कृत्रिमता-शून्य नितान्त स्वाभाविक होती है। इधर इन्होंने कुछ विचारात्मक निबन्ध भी लिखे हैं. जो पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुके हैं। इनके निबन्ध चिन्तनप्रधान हैं और उनमें विचारों को बड़ी सरल भाषा में रखा गया है। पांडित्य-प्रदर्शन इनकी रुचि के विरुद्ध है।

रचित उपन्यास—परख, सुनीता, कल्याणी, त्याग पत्र, तपो-भूमि आदि।

कहानी संग्रह—वातायन, एकरात आदि।

अनुच्छेद १—२

शब्दार्थ—मौन=चुपचाप, खामोश। मुग्ध=मोहित, भोली। स्मित=मुस्कान। निर्जन=जनहीन। बालुका-तीर=रेती का किनारा। विश्व=संसार। गंगा-तट=गंगा का किनारा। एकमात्र=केवल एक ही। आत्मीय=अपना, स्वजन। निर्दोष=दोषहीन। परमात्मखण्डों=परमात्मा के अंशों। निस्तब्ध=शान्त, शब्दहीन। निर्निमेष=बिना पलकें गिराए, एकटक। निहारना=देखना। विह्वल=उल्लसित, आनन्दित। थोप-थोपकर=हाथ से धीरे-धीरे पीट-पीटकर।

अर्थ

मौन मुग्ध संध्या.............. ....खिलवाड़ कर रहे थे।

यह अंश श्री जैनेन्द्रकुमार लिखित 'खेल' कहानी का है। विद्वान् लेखक संध्या की शोभा का वर्णन करता हुआ कहता है—

पक्षियोंका कलरव शान्त था। चारों ओर एक मधुर भोलापन व्याप्त था। सूर्यास्त होने वाला था। सायंकाल की सुनहली छटा देखनेसे ऐसा प्रतीत होता था, मानो संध्या भोलेपन के साथ अपनी मौन-मधुर हँसी की ज्योतिसे वातावरण

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

को आलोकित कर रही हो। ठीक ऐसे ही समय एक नन्हीं लड़की और एक छोटा लड़का दोनों सारे संसार को भुलाकर गंगा के किनारे ही बालू और उसके जल के साथ मित्रों के समान खेल रहे थे।

अर्थ

प्रकृति इन निर्दोष...उछल रहा था।

गंगा नदी और उसके किनारे पर खड़े लता-वृक्ष मानों इन निष्पाप भगवान् के अंश-स्वरूप बालक और बालिका को शान्त और एक टक देख रहे थे, दूसरा कोई भी उनके इस खेल को देखनेवाला नहीं था। लड़के के हाथ में एक लकड़ी का टुकड़ा था, जिसे उसने कहीं पा लिया था और उसी से पानी को पीट-पीटकर उछालने में मग्न था। जो पानी लकड़ी की चोट से उछल रहा था, उसे देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानों वह भी कूद-कूदकर बालक से मित्रता करने को चंचल हो उठा हो।

अनुच्छेद ३—८

शब्दार्थ—हाथ जोड़ना (मु०)=प्रार्थना करना, बिनती करना। हिल-मिलकर=मेल-जोल करके। अकारण=बिना कारण के। रोष=क्रोध। अनुग्रह=कृपा। दँगाई=उपद्रवी। साझी=हिस्सेदार। अचानक=सहसा। जिद=हठ। हास्योत्पादक=हँसी उत्पन्न करनेवाला। करुण=करुणा उत्पन्न करनेवाला। दृश्य=देखने योग्य तमाशा। प्रत्यक्ष=आँखों के सामने। सतर्क=सचेत। नवजात=नया पैदा हुआ। शिशु=बच्चा। पुचकारना=मनाना, शान्ति देना। आह्लाद=हर्ष, प्रसन्नता।

अर्थ

माँ जिस सतर्क.................................आह्लाद से नाच उठी।

माता जिस प्रकार सजग होकर अपने हल्के हाथों अपने दुधमुँहें बच्चे को धीरे से बिछौने पर सुलाने के लिए रखती है, उसी प्रकार बालिका सुरबाला ने बालू द्वारा बनाए हुए भाड़ में से अपना पैर बड़ी सावधानी से खींचकर बाहर किया। जब वह अपना पैर निकाल रही थी तब धीरे-धीरे उस निर्जीव भाड़ को

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुचकारती भी थी, मानों वह कोई चेतन प्राणी हो, जिसे बिगड़ने से रोकने का वह प्रयास कर रही है। कारण यह था कि पैर के ऊपर ही भाड़ का निर्माण हुआ था, वही उसका आधार था, कहीं ऐसा न हो कि पैर हटते-हटते वह टूटकर गिर पड़े। किन्तु उसने सजग होकर पैर निकाल लिया और भाड़ ज्यों-का-त्यों बना रह गया, अपनी इस सफलता पर वह लड़की हर्ष से विह्वल हो गई।

अनुच्छेद ६—१७

शब्दार्थ—अलौकिक=स्वर्गीय, दिव्य, जैसा इस लोक में नहीं होता। चातुर्य=प्रवीणता। परिपूर्ण=भरा हुआ। उद्यत=प्रस्तुत, तत्पर। कारगुजारी=काम। उजड्ड=गँवार, मूर्ख। भाड़-श्रेष्ठ=सबसे अच्छा भाड़। विस्मित=चकित। पुलकित=हर्षित। परमात्म-लीला=ईश्वर की रचना। अनुसरण=पीछा करना। अटकी=उलझी। फतह करना=जीतना। महत्त्व=बड़प्पन। मूक=चुप, मौन। शून्य=सन्नाटा। साङ्गोपाङ्ग=सम्पूर्ण। उपस्थित=मौजूद, विद्यमान। मनोरमता=सुन्दरता। स्वर्गीयता=अलौकिकता, दिव्यता। व्यथा=कष्ट, दुःख। क्षणभंगुर=क्षण में नष्ट होनेवाला। लय=लीन, मग्न, डूबना। सार्थकता=प्रयोजनीयता, सफलता। लीन होना=मिल जाना, एक हो जाना। उद्वेग=बेचैनी, व्याकुलता। खेद=कष्ट, ग्लानि। नवीन=नई।

हमारे विद्वान् पाठकों .... रेत में मिल गया।

यह गद्यांश श्री जैनेन्द्र कुमार द्वारा लिखी गई 'खेल' नामक कहानी से लिया गया है। जब सुरबाला के बनाए हुए बालू के भाड़ को मनोहर ने अपनी लात से तोड़ डाला, तब सुरबाला को अकथनीय व्यथा हुई। सहसा उसके मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल सका। वह सोच नहीं सकती थी कि उसकी ऐसी मनोहरी कृति पर इस प्रकार सहसा वज्र-प्रहार हो जायगा। सुरबाला की उस व्यथा को देखकर लेखक उसे ज्ञानी की भाँति समझाने का प्रयास करता है, पर उसे वहाँ समझाने वाला कोई था कहाँ। यदि कहानी के विद्वान् ज्ञानी पाठकों में से कोई होता तो उस बालिका से कहता—

देख लड़की यह सारा संसार ही इसी प्रकार क्षण भर टिकने वाला है। यहाँ

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कोई भी वस्तु ऐसी नहीं जो अविनाशी हो। यहाँ किसी वस्तु के बनाने और बिगड़ने पर हर्ष और शोक प्रकट करना ही व्यर्थ है। जो वस्तु जिन तत्त्वों से बनती है, वह उन्हीं तत्त्वों में अन्त में जा मिलती है। जिस प्रकार पानी से उत्पन्न बुलबुला क्षण भर में ही टूटकर उसी पानी में मिल जाता है, उसी प्रकार यह संसार भी क्षण भर में नष्ट होकर पंच-तत्त्वों से मिल जायगा। उस जल के बुलबुले के निर्माण का प्रयोजन ही यही है कि वह जल में ही मिल जाए, इसके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। जो आदमी इस तत्त्व को नहीं समझ पाता, उसकी बुद्धिहीनता पर तरस आना चाहिए। यह जो कुछ विश्व में दिखाई पड़ रहा है, सभी परमात्मा का है और अन्त में सब कुछ उसी ईश्वर में मिल जायगा। अतः इस नन्हें से भाड़ के नष्ट हो जाने पर तू व्यर्थ ही दुःखी हो रही है। तेरा बालू का भाड़ अन्त में फिर उसी बालू में जा मिला।

अनुच्छेद १८ से अन्त तक

शब्दार्थ—दुर्भाग्य=बुरा भाग्य। विज्ञ=ज्ञानी। धीमान्=बुद्धिमान्। तत्त्वोपदेश=ज्ञान की शिक्षा, दार्शनिक उपदेश। परोपकार-रत=दूसरे की भलाई में लगा हुआ। परमात्म-निर्देश=ईश्वर की प्रेरणा। निर्बुद्धि=मूर्ख, बुद्धिहीन। शठ=मूढ़, छली। विश्व-तत्व=संसार का ज्ञान। हठात्=सहसा, एकाएक। विलीन=गायब, लुप्त। व्यापकर=फैलकर। कसूर=अपराध। लायक=योग्य। उल्लास=हर्ष। व्याज-कोप=बनावटी क्रोध। स्त्रीत्व=कोमलता, हार्दिकता, भावुकता। ओट=आड़। संशोधन=शुद्धि। कर-पात्रों=अंजली रूपा बर्तनों। उत्फुल्लता=प्रसन्नता, हर्ष। शिशु-हास्य-रव=बच्चों की हँसी का शब्द। दार्शनिक=दर्शन शास्त्र के ज्ञाता। सार-शून्यता=निस्सारता, तत्वहीनता। तत्त्वावलोकन=तत्त्व पूर्ण दर्शन, तात्त्विक दृष्टि से देखना।

अर्थ

उस निर्जन प्रान्त में ... ... वे बेचारे।

यह गद्यांश विद्वद्वर श्रीजैनेन्द्र कुमार द्वारा लिखित मनोवैज्ञानिक कहानी 'खेल' से उद्धृत किया गया है। कहानी के अन्त में जब बच्चों का खेल समाप्त हो जाता

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है और सुरबाला अपने भाड़ के बदले मनोहर के भाड़ को उसी की भाँति तोड़ डालती है, तब दोनों ज़ोरों से उन्मुक्त हँसी हँसने लगते हैं। सफल कहानीकार श्री जैनेन्द्र उस समय की बाल-क्रीड़ा और सूर्यास्त कालीन मौन-रम्य प्रकृति का कवि की भाँति चित्रण उपस्थित करते हुए कहते हैं—

उस जनहीन गंगा के तट वाले प्रदेश में बालक मनोहर और बालिका सुरबाला की विशुद्ध मधुर हँसी का मधुर शब्द चारों ओर फैल गया। उस समय सूर्यदेव अस्ताचल के अञ्चल में जाने ही वाले थे, उनका लाल रंग देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानों वे भी बालकों की ही तरह अपने लाल रङ्ग वाले मुँह से गुलाबी रङ्ग की हँसी दिशाओं में फैला रहे हों। उधर गङ्गा के प्रवाह से जो कल-कल मधुर ध्वनि निकल रही थी, उसे देखकर लगता था मानो गंगा भी इन दो बच्चों के आनन्दपूर्ण खेल को देखकर उसी पर हँस रही हों। इसके साथ ही साथ, वहाँ जो दिग्गजों की भाँति विशालकाय पेड़ खड़े थे, वे दर्शन-शास्त्र के ज्ञाता गम्भीर विद्वानों को तरह, उन सबकी निरर्थक हँसी पर हृदय के भीतर ही गम्भीर विचार करके, शायद हँसी में खोए हुए उन मूर्ख बालकों के ऊपर विश्व की क्षण-भंगुरता के विचार से रो पड़ना चाह रहे थे - कितने निस्सहाय थे वे वृक्ष।

प्रताप-प्रतिज्ञा

लेखक—श्री जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द'

श्री जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द' ग्वालियर राज्य के मुरार नामक स्थान के निवासी हैं। आप हिन्दी के सफल नाटककार, लेखक तथा उदीयमान कवि हैं। आपकी कविताएँ तथा निबन्ध बराबर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं। आपकी शैली बड़ी ओजपूर्ण है। आप की भाषा भाव से लदी रहती है। आप की भाषा में तत्सम शब्दों की अधिकता रहती है। आप विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा स्थापित शांति-निकेतन में कुछ समय तक अध्यापक भी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रहे हैं। 'प्रताप-प्रतिज्ञा' नामक नाटक आप का बहुत ही प्रसिद्ध है। वर्तमान हिन्दी के कवियों में भी आप को प्रचुर सम्मान मिला है।

शब्दार्थ—क्या सम्वाद है=क्या समाचार है। जन्म जन्मान्तर के लिये=सदा के लिये। दुर्दशा=बुरी हालत। कसक=पीड़ा। वक्षस्थल=छाती। वासनाओं का=भोग-विलास का। अविराम=बिना रुके, निरन्तर। ताण्डव=एक प्रकार का नृत्य। ऐसा कहा जाता है कि शंकर प्रलय के समय ही ताण्डव नृत्य करते हैं। कायरता=बुजदिली। कायरता के कलंक से काला होना=कायरता के कारण उस राजमुकुट की प्रतिष्ठा में धब्बा लग रहा है। यह वीरों का राजमुकुट रहा है, किन्तु आज उस राजमुकुट के उत्तराधिकारी कायर हो गये हैं। अब उस मुकुट की भी प्रसिद्धि कम हो रही है। भुवन-विजयी=संसार को जीतने वाले। करारी=तेज। आराध्य=पूज्य। स्वच्छन्द=मुक्त। अधर=ओठ। रक्तध्वजा=लाल झण्डा। पावन=पवित्र। छाती फूल जाना=गर्व से प्रसन्न होना। आरक्त=रक्त सा लाल।

भावार्थ

उसे राजमहल..जंग चढ़ रहा है।

यह अवतरण 'प्रताप-प्रतिज्ञा' नामक नाटक से लिया गया है। इस नाटक के लेखक 'श्री जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द जी' हैं। आपने बड़ी ओजस्विनी भाषा में सामन्त के हृदय का उद्गार दिखाया है। सामन्त घबराया हुआ राणा-प्रताप के सामने आया। राणा भी उन्हें देखकर थोड़ा घबरा गये और उन्होने सामन्त से कुशल समाचार पूछा। राणा प्रताप ने कहा कि राजमहल का क्या समाचार है? सामन्त का हृदय घृणा से भर गया। वह राणा प्रताप से 'राजमहल' शब्द सुनते ही क्षोभ प्रदर्शित करते हुए बोले कि महाराणा, आप उसे राजमहल मत कहिये। अब वह राजमहल नहीं रह गया। उसकी अब प्राचीन प्रतिष्ठा नहीं रही। वहाँ रहने वाले सदा रात-दिन भोग-विलास में लिप्त रहते हैं। वासना का आनन्द लेते हैं। पुराना गौरव, पुरानी प्रतिष्ठा, पुराना मान-सम्मान आज सब कुछ भुला दिया गया। आज का राजमहल विलासिता का केन्द्र है। वहाँ के लोग अपना कर्तव्य भूल चुके हैं। उनका महान् कर्तव्य अपने मातृभूमि की

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रक्षा, अपने देश की सेवा करना होता था, पर आज उनके सामने जीवन का केवल एक लक्ष्य है और वह है भोग-विलास में लिप्त रहना। आज विलासिता वहाँ नंगा नाच कर रही है। आज वहाँ के रहने वाले पिशाच की तरह भोगी, विलासी और कायर दिखाई दे रहे हैं। आज इस राजभवन को राजमहल न कहकर पिशाच-कुटी ही कहना अधिक उचित होगा। एक समय था जब बप्पा रावल ने अपनी वीरता और रणधीरता से इस राजमहल की शोभा बढ़ायी थी, राजमुकुट को सम्मानित किया था। आज वही राजमुकुट कायर उत्तराधिकारियों के हाथ पड़ा है। वह उसकी उस महान् प्रतिष्ठा को कम कर रहे हैं। वह मुकुट आज इन कायरों के हाथ पड़कर कलंकित हो गया है। कोई समय था जब यहाँ के वीर संसार-विजय करने के स्वप्न देख रहे थे। अपनी वीरता पर उन्हें इतना विश्वास था। अब वे वीर नहीं रहे। उनकी तलवारें आज मखमल के म्यान में पड़ी हैं। उनमें जंग लग गया है। वे तेज कटारें अब कायरों के हाथ पड़ गयी हैं। अब लोग भोगी और विलासी हैं, अपने कर्तव्य में दत्त-चित्त नहीं।

जब स्वाधीनता...निकलती थी।

यह गद्यांश 'प्रताप-प्रतिज्ञा' नामक नाटकसे अवतरित है। इस नाटक के रचयिता श्री जगन्नाथप्रसाद मिलिंदजी हैं। लेखक ने काव्यात्मक भाषा में सामन्तजी को मेवाड़के अतीतकी याद दिलायी है। सामन्तजी प्राचीन गौरव का स्मरण करते हैं। उन्हें उस समय की याद आती है जब मेवाड़ स्वतंत्र था। राज स्वाधीन था। अपने देश में अपना राज था। वह भी एक युग था। स्वर्णिम उषा की मुसकान जो किरणों के रूप में सारे मेवाड़ पर बिखर जाती थी, स्वतन्त्र थी। मेवाड़ की वायु का प्रत्येक झोका स्वतन्त्र था। मेवाड़ पर छाने वाले काले-काले बादलों की प्रत्येक बूदें स्वतन्त्र थीं। प्रकृति के सम्पूर्ण अवयव मेवाड़ की शोभा बढ़ाते थे। सूर्य्य और चन्द्र की किरणें यहाँ स्वतन्त्र रूप से खेलती थीं। सब कुछ स्वाधीन था, स्वतन्त्र था; जब तेजस्वी सूर्य और चन्द्र की किरणें मेवाड़ के दुर्ग पर पड़ी थीं तब मेवाड़ की लाल पताका सबसे ऊँचे शिखर पर फहरा उठती थी। पताका किरणों के बारबार के स्पर्श से प्रफुल्लित हो उठती थी। ऐसे समय

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जब सब कुछ स्वतन्त्र था, सब अपने अधीन था, तब मेवाड़ को अपना कहते वीरों की छाती फूल जाती थी, वे गौरव से प्रसन्न हो उठते थे। यह हमारे पूर्वजों का सौभाग्य था। ऐसी स्वतन्त्रता में उनका मस्तक ऊँचा हो जाता था। उनकी लाल आँखों से ऐसा लगता था मानों उनमें अपनी इस दशा पर संतोष है, स्वाभिमान है। स्वाभिमान और सन्तोष से मुख पर प्रसन्नता छा जाती थी। उनकी आकृति एक विशेष आभा से सदा दमकती रहती थी। यह वह युग था जब मेवाड़ को अपना कहने में गर्व का अनुभव होता था।

शब्दार्थ—साधन=उपाय। बुजदिली=कायरता। भूषण=गहना। सर्वस्व=सब कुछ। कुसमय=बुरे समय, दुर्दिन। विजयनाद=जय-जयकार। अकिंचन=तुच्छ, छोटा। उपहास=हँसी-मजाक।

भावार्थ

शक्ति और साधन तो देशभक्त का शरीर मात्र है।

यह वाक्य भी 'मिलिन्द' लिखित 'प्रताप प्रतिज्ञा' नामक पाठ से लिया गया है। इस वाक्य में महाराणा प्रताप ने देशभक्तों के साधन और शक्ति पर अपने विचार प्रकट किये हैं। महाराणा प्रताप ने सामन्तजी से कहा कि आप अब मत घबराइये चाहे माता स्वाधीन हो या पराधीन, वह हमारी माता ही रहेगी। हम उसे परायी नहीं कह सकते। आप बिलकुल मत घबराइये। सच्चा देश-भक्त वह है जो अपने शरीर पर विश्वास करता है। देश-भक्त को किसी साधन की आवश्यकता नहीं है। किसी शक्ति की आवश्यकता नहीं है। उसका साधन और उसकी शक्ति तो केवल उसका तन ही है। अब अपने केवल शरीर के बल पर बड़े से बड़ा काम कर डालना है।

शब्दार्थ—विनोद=मजाक। आकस्मिक=अचानक। मन्दाकिनी=गंगा। व्रती=व्रत करनेवाले।

केवल तेज पर मुक्त··············स्वीकार कीजिए।

ये पंक्तियाँ भी 'प्रताप-प्रतिज्ञा' नामक नाटक से ली गयी हैं। इस नाटक के

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रचयिता श्री मिलिन्द जी ने इन पंक्तियों में महाराणा प्रताप की महानता पर थोड़ा प्रकाश डाला है। चन्द्रावत बप्पा रावल का उज्वल मुकुट महाराणा को सौंपता है। उसका विश्वास है कि महाराणा इस मुकुट के सम्मान की रक्षा यथोचित कर सकेंगे। उसका विचार है कि राणा प्रताप का व्यक्तित्व अपरिमित तेज से भरा है मेवाड़ की सारी जनता उनकी न्यायप्रियताका आदर करती हैं। महाराणा कभी अन्याय नहीं कर सकता, लोग ऐसा सोचते हैं। स्वयं चन्द्रावत महाराणा की देश-भक्ति का, उनके त्याग का, उनकी अपने राष्ट्र के लिए मर मिटने वाली अमर भावना का प्रशंसा करता है और कहता है, मैंने यह राजमुकुट इन्हीं गुणों से प्रभावित होकर महाराणा को सौंपा है। प्रजा का भी यही निर्णय था कि यह मुकुट महाराणा को ही सौंपा जाय। अतएव यह मुकुट जनता की धरोहर है, प्रजा की भेंट अवश्य स्वीकार करनी चाहिए।

पृष्ठ १०१, १०३

शब्दार्थ—आग्रह=उत्कण्ठा। दुधारी=दो धारी वाली। प्रभुता=ऐश्वर्य। अग्रसर करने वाला=आगे बढ़ाने वाला। कटु=कठोर, कड़वा। जनता-जनार्दन ने=जनतारूपी ईश्वर ने। वेग=तेजी। तृण=तिनका। उष्णरक्त में भी उबाल आता है=खून खौलता है; जरा भी किसी अनीति पर क्रोध आता है। इङ्गित=इशारे, संकेत। नायक=नेता। अकर्मण्यता=कुछ न कर सकना।

भावार्थ

यह मुकुट नहीं..........................पीने को तैयार हूँ।

यह गद्यांश श्री मिलिन्द जी लिखित 'प्रताप-प्रतिज्ञा' नामक नाटक से लिया गया है।

चन्द्रावत जी ने बप्पा रावल का उज्ज्वल मुकुट महाराणा प्रताप को सौंपा। महाराणा मुकुट स्वीकार करना नहीं चाहते थे। उन्होंने अपनी अनिच्छा प्रकट करना चाहा था, किन्तु यह कार्य जनता-जनार्दन की इच्छा से हो रहा था। जनता की इच्छा मानना ही धर्म है। महाराणा ने इस धर्म का पालन किया। चन्द्रावत ने मुकुट महाराणा को पहना दिया। इसे महाराणा ने जनता की इच्छा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समझकर सहर्ष स्वीकार किया और कहा कि यह सोने का मुकुट नहीं है, काँटों का ताज है। मुकुट स्वीकार करने से मुकुट की रक्षा भी करनी पड़ेगी, और इसकी रक्षा करना उतना ही दुःखदायी है, जितना काँटों का ताज पहनना। यह न्याय करने का प्रतीक है। यह हमें त्याग करने की शिक्षा देता रहेगा। यह मुकुट सदा हमें हमारे कर्त्तव्य की याद दिलायेगा। इसकी आकृति जितनी सुन्दर है, यह देखने में जितना अच्छा लगता है, इसके लिए किए जानेवाले कर्त्तव्य उतने ही महान् और कठोर हैं। इसकी प्रतिष्ठा इसकी मान-मर्यादा रखना सचमुच लोहे के चने चबाना है। यह प्रभुता का चिन्ह नहीं है। यह तो सेवा का प्रतीक है। सदा सेवा करने की याद दिलाता है। यह मुकुट सदा वीरों को मातृ-भूमि की बलिवेदी पर मर-मिटने की सलाह देता है। इसे स्वीकार कर हममें कभी राजकुमारों की भांति विलासिता नहीं आ सकती। यह एक विष के प्याले के समान है। जनता की इच्छा से मैं इस प्याले को अमृत समझकर पीता हूँ। इस मुकुट के स्वीकार करने से अनेक कर्त्तव्य करने पड़ेंगे। ये कर्त्तव्य विष की घूँट से भी कठोर और कटु हैं।

सागर मर्यादा ....प्रण न छोड़ेगा।

सागर अनन्त होता है। उसका विस्तार ही उसकी मर्यादा है। हिमालय का गौरव उसकी ऊँचाई है। महाराणा प्रताप ने अपनी प्रतिज्ञा के लिए कहा कि सागर का विस्तार कम हो सकता है। हिमालय पहाड़ की ऊँचाई घट सकती है, सूर्य का तेज कम हो सकता है, वायु अपने चलने की गति का त्याग कर सकती है, परन्तु मैं अपनी प्रतिज्ञा नहीं छोड़ सकता।

अभ्यास के प्रश्नोत्तर

प्रश्न—महाराणा प्रताप, सामन्त जी और चन्द्रावत के चरित्रों का चित्रण कीजिए।

महाराणा

प्रातःस्मरणीय महाराणा प्रताप मातृ-भूमि के सच्चे सपूत थे। उन्होंने अपनी जन्मभूमि के लिये सर्वस्व त्याग दिया था। उनका चरित्र महान् था। भारत के

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

राजपूतों के इतिहास में उनका नाम सोने के अक्षरों में लिखा है। उनके चरित्र की कुछ अपनी विशेषता थी।

१—पराधीनता स्वीकार न करना—उन्होंने जीवन में कभी किसी की पराधीनता स्वीकार न की। अकबर का राज्य दिनोंदिन बढ़ता जाता था। लोग अकबर की छत्र-छाया में आते-जाते थे। राजपूतों ने भी अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली थी। वे विलासिता का जीवन बिता रहे थे। वासना में लिप्त थे। किन्तु महाराणा प्रताप को ऐसा सुख स्वीकार नहीं था। उन्होंने कभी अकबर की पराधीनता स्वीकार न की।

२—अपने प्रण पर दृढ़ रहना—महाराणा का दूसरा महान् गुण था अपने प्रण पर दृढ़ रहने का। उन्होंने प्रण किया था कि जब तक मैं अपनी मातृ-भूमि को मुगलों से स्वतन्त्र न कर लूँगा तब तक कुटीर में रहूँगा, पत्तल पर खाऊँगा और घास पर सोऊँगा। उन्होंने मरते दमतक अपने इस प्रण का पालन किया। जङ्गल-जङ्गल, पहाड़ों और गुफाओं में घूमते रहे, किन्तु अपने प्रण को न भूले। महाराणा प्रताप राजा थे। वैभव, विलासिता और वासना से पूर्ण परिचित थे। उनके हृदय में भी कभी राज-वैभव की इच्छा उठना स्वाभाविक था, पर न उठा। मेवाड़ का प्रत्येक पहाड़ उनका दुर्ग बना, प्रत्येक युद्ध-क्षेत्र प्रत्येक वन था। प्रत्येक गुफा उनके लिए राजमहल थी। वे कष्ट सहते हुए अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहे।

३—अदम्य उत्साह के प्रतीक—महाराणा का व्यक्तित्व अदम्य उत्साह का प्रतीक था। वह कभी घबराते नहीं थे। वनों में उन्हें घास की रोटी भी खाने को नहीं मिल सकी, किन्तु घबराये नहीं। उनका तो विचार था, 'शक्ति और साधना ही देशभक्ति का शरीर है।' वह अपने पर विश्वास करते थे, अपने शरीर और अपने बलपर विश्वास करते थे।

४—जनता की इच्छा मानना—राणा सदा जनता-जनर्दन की इच्छा का आदर करते थे। वे बप्पा रावल का स्वर्ण मुकुट कभी स्वीकार नहीं करना चाहते थे, पर वे जानते थे कि जनता-जनार्दन की ऐसी ही इच्छा है और उसकी इच्छा मानना हमारा धर्म है। उन्होंने माना भी।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस प्रकार महाराणा देश-भक्ति के प्रतीक थे। उनमें अदम्य उत्साह, महान् साहस और अपरिमित त्याग की भावना थी।

सामन्त जी

इस नाटक में सामन्तजी का प्रवेश एक विह्वल व्यक्ति के रूप में होता है। सामन्तजी को मेवाड़ के वर्तमान से महान् असन्तोष है। वे उसके अतीत को यादकर व्याकुल हो जाते हैं। वे देखते हैं कि एक समय था, मेवाड़ स्वतन्त्र था यहाँ वीर योद्धा रहते थे, किन्तु आज मेवाड़ पराधीन है। राजमहलों में वासना तण्डव नृत्य करती है। यह महान् परिवर्तन उसे व्याकुल बना देता है। वह राणा-प्रताप में मेवाड़ स्वतन्त्र करने की अमर भावना जाग्रत करता है।

चन्द्रावत

चन्द्रावत भी देश-भक्त है। महान् त्यागी और वीर है। महाराणा को बाप्पारावल का प्राचीन मुकुट सौंपता है और उसके कर्त्तव्यों की याद दिलाता है।

प्रश्न ५—सामन्त, राणाप्रताप और चन्द्रावत के बीच जो देश-भक्ति की बातें हुईं, उन्हें अपने शब्दों में लिखिए।

उत्तर—जब मेवाड़ की प्रतिष्ठा घटने लगी, अकबर की अधीनता वहां के भी राजाओं ने स्वीकार ली, तब सामन्त जी को मेवाड़ की इस दशा पर अत्यन्त दुःख हुआ। वे मेवाड़ का अतीत स्मरण कर व्याकुल होने लगे। वे मेवाड़ की इस दशा पर अत्यन्त दुखित हुए। वे महाराणा के पास आए और उस वर्तमान स्थिति पर विचार करने लगे। उनका हृदय अत्यन्त दुःखी था। उन्हें रह-रहकर मेवाड़ का अतीत याद आ रहा था। वे कह रहे थे कि वे भी एक दिन थे जब बाप्पा रावल की जन्म-भूमि स्वतन्त्र थी। यहां की वायु, यहां के बन, पहाड़, सारी प्रकृति स्वतन्त्र थी। हमारे पूर्वज अपनी छाती फुलाये फिरा करते थे। अपने देश में अपना राजा था। वे दिन कितने सुन्दर थे! अब वे दिन नहीं रहे। अपने महलों में वासना ताण्डव करती है। अब मेवाड़ का गौरव नष्ट हो गया। ऐसा कहते-कहते सामन्तजी का स्वर भर आया। राणा ने उन्हें सान्त्वना दी और कहा कि आज हमारी मातृ-भूमि पराधीन है, पर हम उसे स्वतन्त्र करेंगे।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पराधीन होकर भी हमारी माता. माता ही रहेंगी। हम उसे अवश्य स्वतन्त्र करेंगे यह ठीक है कि हमारे पास शक्ति और साधन की कमी है, पर देश-भक्ति की वास्तविक शक्ति और स्वाधीनता उसका शरीर है। वह अपने शरीर पर विश्वास करता है। वह अपने बल पर विश्वास करता है। सामन्तजी आप जरा भी क्षुब्ध न हों। मेवाड़ के विलासी राजा-महाराजाओं के राजकुमारों को सामन्त जी धिक्कारते रहते हैं। उनकी कायरता पर उन्हें बड़ी चिन्ता होती है। वे कहते हैं कि बाप्पा रावल के वंश की भुवन-विजयी तलवारें आज मखमली म्यान में बन्द मुरचे खा रही हैं। आज सभी कायर हो गये हैं। जन्मभूमि आज पराधीन है। इसी प्रकार वार्तालाप चल रहा था कि इसी बीच चन्द्रावत श्री कृष्णजी वहाँ एक राजमुकुट लिये आ पहुँचे। उनके साथ अनेक बहादुर राजपूत भी थे। उन्होंने राणाप्रतापका जय-जयकार किया। पहले राणा को आश्चर्य हुआ कि इस तुच्छ व्यक्ति, का जय-जयकार करनेवाला कौन है, किन्तु जब चन्द्रावतजी ने राजमुकुट सौंपा तब शंका कम हुई। उन्होंने राजमुकुट राणाप्रताप को देते हुए कहा कि मैं यह बाप्पारावल का उज्ज्वल राजमुकुट राजपूत प्रताप को नहीं—स्वदेश के सच्चे सैनिक वीर प्रताप को सौंपता हूँ। इसलिए नहीं, कि इसे पहनकर राजा प्रजा पर अत्याचार करे. इसलिए नहीं कि इसे पहनकर प्रताप चित्तौड़ को भूल जाय। मैं इसे सैनिक प्रताप को देता हूँ; वीर प्रताप को देता हूँ; नहीं उन प्रताप को देता हूँ जिन के त्याग, बलिदान, साहस और शौर्य पर हमें विश्वास है। हमारी अभिलाषा है कि राणाप्रताप अवश्य मेवाड़ को स्वतन्त्र करें। इतना कहकर चन्द्रावत ने राणाप्रताप को मुकुट समर्पित कर दिया। पहले राणा ने इसे स्वीकार न किया, किन्तु बाद में इसे जनता-जनार्दन की इच्छा समझकर स्वीकार किया। राणाप्रताप ने कहा कि यह ताज काँटों का ताज है। यह मुकट नहीं कर्तव्य का स्मरण दिलानेवाला चिह्न है। यह विष के प्याले के समान है। मैं इस विष के प्याले को अपने प्रभु प्रजा की आज्ञा से अमृत की तरह पीने को तैयार हूँ। भवानी को साक्षी देकर महाराणा प्रताप ने सबके समक्ष प्रतिज्ञा की, कि मैं अपनी जन्मभूमि मेवाड़ के हेतु तन-मन-धन सर्वस्व अर्पण कर दूँगा। क्या आप भी हमारा साथ देंगे ? और वीरों ने

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भी 'हाँ' कहा। इस पर प्रताप ने प्रण किया कि जबतक मैं मेवाड़ को शत्रुओं के हाथ से छुड़ा नहीं लूँगा तब तक कुटी में रहूँगा, पत्तल पर खाऊँगा और घास पर सोऊँगा। मेवाड़ का प्रत्येक पर्वत हमारा दुर्ग, प्रत्येक वन हमारा युद्धस्थल, प्रत्येक गुफा हमारा राज्यमहल होगी।

३—निम्नांकित का आशय स्पष्ट कीजिये :—

(क) उसे राजमहल न कहो राणा······चाहिए।

(ख) जब स्वाधीनता की······फूट निकलती है।

(ग) यह मुकुट नहीं······अग्रसर करनेवाला है।

उत्तर के लिए यथास्थान दिये गये भावार्थों को पढ़िये।

श्रीमती महादेवी वर्मा

(जन्म संवत् १९६४)

जीवन-परिचय—श्रीमती महादेवी वर्मा का जन्म फर्रुखाबाद में हुआ। इनके पिता भागलपुर कालेज के प्रतिष्ठित प्रिन्सिपल थे और थे स्त्री-शिक्षा के पक्षपाती। इनकी माता आस्तिक विचारों की थीं। आत्म-परिचय लिखते हुए ये अपने 'आधुनिक कवि' की भूमिका में लिखती हैं –

"एक व्यापक विकृति के समय, निर्जीव संस्कारों के बोझ से जड़ीभूत वर्ग में मुझे जन्म मिला है। परन्तु एक ओर साधनाभूत, आस्तिक और भावुक माता और दूसरी ओर सब प्रकार की साम्प्रदायिकता से दूर, कर्मनिष्ठ और दार्शनिक पिता ने अपने-अपने संस्कार देकर मेरे जीवन को जैसा विकास दिया, उसमें भावुकता बुद्धि के कठोर धरातल पर, साधना एक व्यापक दार्शनिकता पर और आस्तिकता एक सक्रिय पर किसी वर्ग या सम्प्रदाय में न बँधनेवाली चेतना पर ही स्थित हो सकती थी।"

बारह वर्ष की वय में ही इनका विवाह एक शिक्षित परिवार में हो गया। किन्तु इनकी ससुरालवाले स्त्री-शिक्षा के पोषक नहीं थे। आगे चलकर ससुराल से इनका सम्बन्ध विच्छेद हो गया। इन्होंने इलाहाबाद में ही रहकर बी० ए०

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और संस्कृत में एम० ए० किया। तदनन्तर इन्होंने वहीं बालिकाओं का एक विद्यालय खोला। वह आठवीं कक्षा से बढ़ते-बढ़ते डिग्री-कालेज हो गया, जो आज 'प्रयाग-महिला-विद्यापीठ' के नाम से प्रसिद्ध है। ये उसीमें अध्यक्षा हैं।

बचपन से ही इनकी रुचि कविता करने में थी। पहले इन्होंने ब्रज-भाषा में ही कविता आरम्भ की। फिर खड़ी बोली के काव्य क्षेत्र में गृहीत होने पर उससे प्रभावित होकर इन्होंने खड़ी बोली अपनायी। आगे चलकर ये हिन्दी के महान् कवियों में गिनी जाने लगीं। अपने गद्य में भी कुछ निबन्ध और अपने संस्मरण लिखे हैं। आपका गद्य भी अत्यन्त प्रभावशाली होता है।

आपकी रचनाएँ—

काव्य—नीहार, रश्मि, नीरजा, सान्ध्यगीत, यात्रा, दीपशिखा।

गद्य—अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखायें आदि।

आधुनिक नारी

ले०—सुश्री महादेवी वर्मा

अनुच्छेद १

शब्दार्थ—नवीन युग=आधुनिक युग। स्थिति=दशा। सन्धि-स्थल=मिलन-काल, मिलन-स्थल। असन्तोष=सन्तोष हीनता। पीड़ित=व्यथित। अप्रकट=अव्यक्त, परोक्ष। वेदना=कष्ट, पीड़ा। निदान=उपचार। असह्य=न सहने योग्य। व्यथा=कष्ट। गूढ़=छिपे हुए। अवकाश=फुर्सत, समय। दयनीय=दया के योग्य, करुणामयी। क्रिया=कार्य। व्याधि=रोग। धारणा=विश्वास। निर्मूल=व्यर्थ। नितान्त=सर्वथा, बिल्कुल। सम्भव=उत्पन्न। श्रेष्ठता=उत्तमता। हीनता=तुच्छता। द्योतक=प्रकाशक, परिचायक। भ्रान्ति=भ्रम, भूल। मनोवैज्ञानिक=मानसिक विश्लेषण सम्बन्धी। शारीरिक=शरीर सम्बन्धी। विकास=बाढ़, वृद्धि। प्रतिपादन=समर्थन। विज्ञापन=प्रकटन, विज्ञप्ति। त्रुटि=कमी, खामी, न्यूनता। स्त्रीत्व=स्त्री का सहज भाव। क्षत-विक्षत=आहत, नष्ट-भ्रष्ट।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थ

मध्य और नवीन ··· ··· ··· ··· भूल जाता है।

आधुनिक हिन्दी-साहित्य की महान् कवयित्री एवं गद्य-लेखिका श्रीमती महादेवी वर्मा ने अपने 'आधुनिक नारी' नामक निबन्ध में आजकल की शिक्षिता नारियों के विपथ-गामिनी होने के कारणों पर खोज पूर्ण प्रकाश डाला है। उसी का तत्त्वान्वेषण करती हुई वे कहती हैं—

मुस्लिम सभ्यता और शासन द्वारा प्रभावित गतयुग और अंग्रेजी सभ्यता एवं शासन द्वारा प्रभावित आधुनिक युग के मिलन-काल में भारतीय नारी ने पाश्चात्य नारी को अपने सामने देखकर जब सर्व प्रथम अपनी दशा पर सन्तोषहीनता दिखाई, उस समय उस नारी की दशा ठीक उस रोगी से सदृश थी, जिसकी व्यथा तो समझी जा सकती थी; किन्तु उस व्यथा का कारण क्या है, इसका पता ठीक-ठीक नहीं चल पाया, इसी कारण उसका उपचार भी न हो सका। क्या व्यथा है, कहाँ और वह क्या है, इसका कोई ठीक जवाब नहीं था। इस विषय में पूर्ण खोज की जाती, तो ठीक उपचार सम्भव था, किन्तु उस नारी के पास इसके लिए पर्याप्त समय भी नहीं था। इस स्थिति में उसने अपने सामने तत्कालीन पुरुष को रखा, उसमें तथा अपने में उसे जो अन्तर दिखाई पड़ा, उसी को उसने रोग का कारण समझ लिया। ऐसा करने से उसकी दयनीय दशा के कुछ कारण तो अवश्य प्राप्त हो गए; किन्तु उसी को एकमात्र कारण समझ लेने से उससे अनेक भूलें भी हो गईं, यह सच है मनुष्य का यह स्वभाव है कि दो विभिन्न जाति की वस्तुओं का परस्पर तुलना करते समय, उनके अन्तर को ही श्रेष्ठता और तुच्छता का मानदण्ड समझ लेता है, यह उसकी भूल है।

अनुच्छेद २

शब्दार्थ—निश्चय=तय। भावुकता=भावना की प्रधानता। आमूल=मूल सहित, जड़ से। आश्रय=सहारा, अवलम्बन। गृह-बन्धन=गृहस्थी का फन्दा। छिन्न-भिन्न=तोड़-फोड़। भार्या=पत्नी। बाह्य=बाहरी। संघर्ष=युद्ध,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रगड़। रक्षणीया=रक्षा पाने के योग्य। निर्विवाद=विवाद रहित, स्पष्ट, सर्व मान्य। अदान-प्रदान=लेन-देन। विषमता=अन्तर, विरोध। प्रकृति=स्वभाव। अत्यधिक=बहुत ज्यादा। सहनशील=सहन करनेवाला, सहिष्णु। बाध्य=विवश, मजबूर। ज्ञात=विदित, मालूम। मातृत्व=माता का गुण, माता की ममता। पूर्ति=पूरा करना। विवेचना=छान-बीन, विचार-विमर्श। विशेष अर्थ=खास प्रयोजन। प्राकृतिक=स्वाभाविक। अन्धकार में रहना (मुहा०)=अनभिज्ञ रहना, न जानना, भ्रम में रहना। प्रकृति जनित=स्वभाव से उत्पन्न। प्रयास=परिश्रम। परिस्थिति-जन्य=परिस्थिति से उत्पन्न। संस्कार-जन्य=संस्कार से उत्पन्न या प्राप्त। सयत्न=सावधानी से युक्त, सचेत, कृत्रिम। कवच=लोहे का बना हुआ शरीर की रक्षा करने वाला परिधान, जिरहबख्तर।

अर्थ

परिस्थिति-जन्य दोष..............................नहीं रह सकता।

विदुषी लेखिका सुश्री महादेवी वर्मा आज की नारी के बदले हुए स्वरूप का गवेषणात्मक परिचय देती हुई उसकी भूलों को, उसके बनावटीपन को भी स्पष्ट प्रकट कर देती हैं। नारी प्रकृत्या कोमल एवं भावुक होती है, यह गुण कहिए या दोष, उसे प्रकृति से प्राप्त है, यह उसे संस्कार से प्राप्त हैं, इसको आमूल नष्ट कर देना, सरल नहीं। इसी पर विचार करती हुई वे कह रही हैं—

मनुष्य का यह स्वभाव है कि वह जैसे वातावरण में रहता है, तदनुकूल ही गुण-दोष उसमें आ जाते हैं। परिस्थिति विशेष में रहने पर जो दोष मनुष्य में आ जाते हैं, वे तो यत्न करने पर अविलम्ब नष्ट भी किए जा सकते हैं, किन्तु संस्कार से प्राप्त दोषों को दूर करना अत्यन्त श्रम साध्य होता है। नारी की कोमलता और भावुकता उसे संस्कार से प्राप्त है, इसे वह दूर नहीं कर पा रही है, इसी कारण स्त्री आज उतनी कठोर बन रही है, जितनी की आवश्यकता उसे नहीं है और ऐसा वह सहज ही नहीं बन रही है, बल्कि उसे वैसा बनना पड़ रहा है। अत्यन्त सचेत रहने पर ही नारी इतनी कठोर बन पाती है (यदि

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वह सावधान न रहे, तो वह कठोर हो भी नहीं सकती) यही कारण है कि अपने इस कृत्रिम यत्न पर उसे स्वयं भी दुःख ही होता है। यह कृत्रिम कठोरता उस लौहमय कवच के समान है जो बाहरी आक्रमणों से उसकी रक्षा तो करता है किन्तु उसके बोझ को ढोने में कष्ट उठाना भी अनिवार्य हो जाता है (जिस प्रकार कवच शरीर का प्राकृतिक अंग नहीं होता, और इसीलिए उसका भार वहन करना श्रम-साध्य होता है. उसी पकार नारी की यह कठोरता भी कृत्रिम होती है और उसे उसके अपनाने में मानसिक कष्ट सहन करना ही पड़ता है)।

अनुच्छेद ३—४

शब्दार्थ—परिचायक=परिचय देने वाला। उपयोगी=लाभप्रद। आधुनिकता की वायु=आजकल का वातावरण। केन्द्रित=समाहित, विजड़ित। पश्चिम में=यूरोपीय देशों में। आर्थिक=अर्थ सम्बन्धी, द्रव्य सम्बन्धी। प्रभुत्व=अधिकार। मनोविनोद=मनोरञ्जन। परम्परागत=पुराने समय से चले आते हुए। तिलाञ्जलि देना (मुहा०)=त्याग देना, छोड़ना। आदिम=आदि काल का या की। दुर्बलता=कमजोरी। रहित=शून्य, रिक्त, खाली। सम्भवतः=स्यात्, शायद। संख्यातीत=असंख्य, अगणित। उपकरण=सामग्री, साधन। कृत्रिम=बनावटी। आकर्षित करना=खींचना। उपहास योग्य=हँसी कराने योग्य। प्रयास=श्रम। गरिमा=गौरव, प्रतिष्ठा, सम्मान। उन्मत्त=मतवाला, पागल। भावुकता=भावनाशीलता, हार्दिकता (Sentimentality)। असमर्थ=अशक्त, असफल।

शृङ्गार के इतने··· ··· ··· ···असमर्थ रही।

यशस्विनी लेखिका श्रीमती महादेवी वर्मा अपने लिखे 'आधुनिक नारी' शीर्षक निबन्ध में पुरुष के बन्धन से मुक्त, स्वच्छन्द विचरण करने वाली स्वार्थपरायणा यूरोपीय देशों की नारियों के चरित्र की छानबीन करके यहाँ यह दिखलाया है कि पूर्णरूप से स्वतन्त्र होने पर भी समाज एवं राजनीति के क्षेत्रों में पुरुष के समान अधिकार प्राप्त कर लेने पर भी पश्चिम की नारियाँ अपना नारीत्व नहीं

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ही त्याग सकी हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उपस्थित करती हुई वे कह रही हैं—

यूरोप, अमेरिका आदि देशों में जो नारियों के शृङ्गार करने के अगणित साधन (पाउडर, क्यूटेक्स, कौस्टिक, लिपस्टिक एवं अन्य उपादान), अवस्था ढलने पर भी रूप को युवती का-सा ही बनाए रखने वाली बनावटी सामग्रियाँ, पुरुषों को अपनी ओर खींचने के लिए ऐसे-ऐसे यन्त्र जिन्हें देखकर हँसी आये बिना न रहे, ऐसे नाना प्रकार के यत्न डंके की चोट यह प्रकट करते हैं कि सामाजिक बन्धनों को ठुकराकर नारी आज भी अपना नारीत्व नहीं खो सकी है। पुरुष के साथ होड़ लेने का परिणाम वहाँ यही देखने में आया कि नारी आज भी ज्यों की त्यों अपनी दुर्बलता में नारी ही है ; हाँ, यह अवश्य है कि जिस गुण के कारण उसे समाज में पुरुष से भी ऊँचा एवं गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त था, उस मातृत्व को उसने आज अवश्य ही खो दिया है। नारी ने नारीत्व की उपेक्षा क्यों की, जब कि पुरुष को अपने पाश में बाँध रखने की उसकी इच्छा पहले के ही समान ज्यों की त्यों विद्यमान है, यह नहीं कहा जा सकता। यदि नारी की समझ में यही आया कि उसमें सबसे बड़ा दोष भावनाशीलता का ही है, तो फिर उसे अपनी उस भावनाप्रवणता को ही जड़ से समाप्त कर देना चाहिये था, किन्तु भावुकता के प्रकृतिजन्य होने के कारण नारी उसे त्यागने में समर्थ नहीं हो सकी।

अनुच्छेद ३

जिस कार्य को..................न कह सकेगा।

शब्दार्थ—प्रकृति=स्वभाव, स्वाभाविकता। विकृति=अस्वाभाविकता, कृत्रिमता। मात्र=केवल। आच्छादन=आवरण। जीवन-यापन=जीवन बिताना। स्वेदकणों=पसीने की बूँदों ; अथक परिश्रम। सौन्दर्य=सुन्दरता। अङ्ग-सौष्ठव=अंगों की कोमलता, शरीर का सौन्दर्य। जिज्ञासा=जानने की इच्छा। रक्षार्थ=रक्षा के लिए। असाध्य=न हो सकनेवाला, अति कठिन। प्रस्तुत=तत्पर। विचारशील=विचारवान, विवेकशील।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थ

प्रभावशालिनी लेखिका श्रीमती महादेवी वर्मा 'आधुनिक नारी' नामक निबंध में अपनी सूक्ष्म-ग्राहिणी दृष्टि से पाश्चात्य तथा कथित स्वतन्त्र नारी की पर्यालोचना करने के पश्चात् यहाँ यह बतला रही हैं कि पुरुष के साथ होड़ लगाकर नारी ने कुछ विशेष पाया नहीं, खोया बहुत कुछ है। यहाँ तक कि उसने जिस स्वतन्त्रता को पाना चाहा, वह भी उससे कोसों दूर हो गयी है। आज उसकी कैसी उपहास्य स्थिति हो गयी है, इसी को बताती हुई वे कह रही हैं—

आज की पाश्चात्य नारी ने जिस कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त की है वह है उसका केवल स्वाभाविकता से अस्वाभाविकता की ओर गमन। आजकी नारी अपनी स्वाभाविक प्रकृति को अपने वस्त्रों से अधिक महत्त्व देना नहीं चाहती। जैसे वस्त्र को उतार दिया जाता है, फिर यथा समय उसे धारण कर लिया जाता है, उसी प्रकार वह चाहती है कि अपने स्त्रीत्व को समय पर उतार फेंके और फिर आवश्यकतानुसार धारण भी कर ले। जिस पुरुष को जीवन के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में अपनी दक्षता द्वारा नीचा दिखाने के लिए वह शक्ति से बाहर श्रम करेगी, अपने जीवन के निर्वाहार्थं खून-पसीना एक करके हर एक चीज को प्राप्त करेगी, उसी पुरुष को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए, वह अपनी सुन्दरता और शारीरिक कोमलता की सुरक्षा के निमित्त दुस्तर से दुस्तर कर्म करने के लिए तैयार है। जो भी विवेकवान व्यक्ति यह देखेगा कि आज नारी अपने शरीर और अपने सौन्दर्य के लिए इतनी यत्न-शील है, वही बिना किसी हिचक के यह कह देगा कि स्त्री तो आज बिल्कुल ही स्वतन्त्र नहीं है।

अनुच्छेद ४

शब्दार्थ—रहस्यमयी=गूढ़। जिज्ञासा=जानने की इच्छा। सृष्टि=विश्व-रचना। चिरन्तन=अति प्राचीन। अस्वीकार=अमान्य। अथ=प्रारम्भ। इति=समाप्ति, अन्त। आरम्भ=शुरू। सापेक्ष=अन्योन्याश्रित, एक दूसरे की अपेक्षा रखने वाले। विशेषता=गुण, खूबी। श्रेणी=पंक्ति। गरिमामयी=गौरवपूर्ण। विधात्री=रचना करने वाली, माता। प्रतिष्ठित=स्थापित। स्थायी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

=ठोस, अनश्वर। विस्मय-विमुग्ध=आश्चर्यचकित, भौंचक्का। सार्थकता=सफलता, प्रयोजनीयता। महत्त्व=उच्चता। कटु=कड़वा, दुस्सह। परिस्थिति=दशा (Condition)। प्रसाधित=प्रसाधनों से युक्त, सुसज्जित। शृङ्गारित=शृङ्गार में लिपटी हुई। वास्तव में=वस्तुतः, सचमुच। वय=अवस्था, उम्र। पाथेय=सम्बल, सहारा। संसार-यात्रा=जीवन-यात्रा, जीवन बिताना। अक्षय=अनश्वर, अविनाशी। कृतज्ञ=उपकृत, उपकार मानने वाला। अयाचित=बिना माँगा हुआ। जन्मसिद्ध=जन्मसे ही प्राप्त, सहज, स्वाभाविक। विकृति=बुराई, खराबी। प्रतिकार=हटाना, दूर करना, विरोध।

अर्थ

स्त्री के प्रति.........................प्रतिष्ठित कर दिया।

यह गद्यांश आजकल की श्रेष्ठ कवियित्री एवं गद्य-निर्मात्री श्रीमती महादेवी वर्मा के 'आधुनिक नारी' शीर्षक निबन्ध से लिया गया है। विदुषी लेखिका इस स्थान पर यह समझा रही है कि प्राचीन नारी ने किस कारण समाज में इतना महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया था। उसका जीवन आद्यन्त क्या था और वास्तव में आज भी नारी को अपनी स्थिति सुरक्षित रखने के लिए वैसा ही बनने की आवश्यकता है। आज की तितली-सी सजावट उसे नीचे गिरने के अतिरिक्त ऊपर उठा नहीं सकती, यह हम पाश्चात्य नारी के चरित्र से भली-भाँति जान चुके हैं। अतः वे कहती हैं—

यह तो मानना ही पड़ेगा कि नारी आदि काल से ही पुरुष के लिए वैसे ही एक गूढ़ समस्या रही है, जैसे कि मानव के लिए प्रारम्भ से ही यह सृष्टि रही है, किन्तु इतने में ही नारी-जीवन का सब कुछ समाप्त नहीं हो जाता। प्रारम्भ में नारी पुरुष के लिए ज्ञातव्य वस्तु थी, पुरुष के आकर्षण का केन्द्र अवश्य थी, किन्तु पुरुष की इस जिज्ञासु भावना से लेकर वह पुरुष के साथ उस स्थान तक पहुँच गयी, जहाँ दोनों की इच्छाएँ एकाकार हो गयीं, दोनों में विरोध रह ही नहीं गया और साथ ही साथ दोनों का व्यक्तित्व भी एक दूसरे पर आश्रित हो गया अर्थात् एक के अभाव में दूसरे का व्यक्तित्व रह ही नहीं सकता था। ऐसी स्थिति में अपने को पहुँचा देना ही नारी का महान्

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गुण था और इसी गुण के बल पर वह मनोविनोद के साधनों की पंक्ति से बहुत ऊपर उठकर परम गौरवित मातृत्व के पद पर जा विराजमान हो गयी।

अर्थ

आधुनिक नारी........................महत्व नहीं रखती।

यह गद्य-खण्ड 'आधुनिक-नारी' नामक निबन्ध से लिया गया है। इसकी लेखिका हैं चिन्तनशीला एवं विवेकिनी श्रीमती महादेवी वर्मा। वे इस स्थल पर यह प्रकट कर रही हैं कि आजकल की नारी एवं पुरुष का सम्बन्ध कैसा है और उस सम्बन्ध में स्थायित्व कितना है। आज की बदली हुई नारी का क्या महत्व है, इसे बतलाती हुई वे कह रही हैं—

आज की नारी पुरुष के सम्मुख आकर्षण की केन्द्र बनकर उपस्थित होना चाहती है, एक अज्ञात कुतूहल के रूप में। पुरुष उसकी ओर खिंचता है, दोनों परस्पर सम्बद्ध होते हैं—उसी अज्ञात, किन्तु आकर्षण-विशिष्ट रूप में ही नारी सहसा उससे पृथक् हो जाती है। उन दोनों का पारस्परिक सम्बन्ध इतने अधिक दिनों तक नहीं टिक पाता, जिससे दोनों का व्यक्तित्व परस्पर एकाकार हो जाय और नारी पुरुष को कोई स्मरणीय टिकाऊ वरदान दे सके और पुरुष भी पूर्णतया नारी का अपना हो जाय। जिस प्रकार सन्ध्या वेला में बादल नाना रंग धारण करके दृष्टि को विस्मय-विमुग्ध कर लेते हैं, वर्षा काल में सप्तवर्णी इन्द्रधनुष नेत्रों के साथ मन को अपने सौन्दर्य-पाश में बाँध लेता है, किन्तु इन दोनों में क्षणिक प्रलोभन के सिवा लोक को कुछ देने की उपयोगिता नहीं होती, ठीक यही स्थिति आज की नारी की भी है। उसमें क्षणिक सम्मोहन के अतिरिक्त स्थायी प्रदान की क्षमता का पूर्णतया अभाव हो गया है; किन्तु आज नारी इस कटु सत्य की ओर दृष्टि फेरना भी नहीं चाहती। यही आज की नारी का आद्योपान्त स्वरूप है।

अनुच्छेद ५

शब्दार्थ—भीतर=हृदय। चिरन्तन=आदि काल की। उपेक्षा=अवहेलना, मुँह मोड़ना। अथक=न थकनेवाला। मनोयोग=सावधानी,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एकाग्रता, एकचित्तता। आकर्षण=सौन्दर्य, विचित्रता। स्थायी=स्थिर रहने वाला, टिकाऊ। स्पर्धा=प्रतियोगिता, दूसरे के पराभव की इच्छा, होड़। प्रवृत्ति=स्वभाव। अपरिचित=अज्ञात, न जानने वाला। मोह=मुग्ध होना, कामना। अवज्ञा=उपेक्षा, तिरस्कार। प्रधान=मुख्य। विस्मय विमुग्ध=आश्चर्य चकित, हैरान। कहने की आवश्यकता नहीं (मुहा०) यह निर्विवाद है, सर्वविदित है; स्वयंसिद्ध है। अपमानजनक=अपमान उत्पन्न करनेवाला, अनादर व्यक्त करनेवाला। अध्ययन=पूर्ण ज्ञान, पूरी जानकारी प्राप्त करना। निराकरण=दूर करना, हटाना।

अर्थ

पश्चिम की स्त्री की..साम्य मिलेगा।

यह गद्यांश 'आधुनिक नारी' नामक निबन्ध से गृहीत है। इसकी लेखिका हैं सिद्धहस्त गद्य-कारिणी श्रीमती महादेवी वर्मा। यहाँ वे पश्चिम की नारी की वर्तमान स्थिति का अध्ययन उपस्थित करती हुई यह बतला रही हैं कि पुरुष के साथ होड़ लगाकर नारी अबतक वहाँ सन्तोष और शांति नहीं प्राप्त कर सकी है, उसका कारण यह है कि उसने अपने स्वाभाविक पथ को त्याग दिया है और यही स्थिति भारत की उन नारियों की भी है, जिन्होंने पश्चिम की नारियों का अनुगमन स्वीकार किया है। पश्चिम की नारी का पूर्ण परिचय प्रस्तुत करती हुई विदुषी लेखिका कह रही है—

आज पश्चिमीय देशों की स्त्रियों की दशा पर जब हम दृष्टि डालते हैं तब उसमें एक खास बात जो मिलती है वह यह है कि वहाँ की नारी ने पुरुष से प्रतियोगिता तो ठान दी, जीवन से वाह्य क्षेत्र में भी उसने पुरुष को नीचा दिखाने की चुनौती दी यह सच है, किन्तु उसके साथ ही साथ पर पुरुष की उपेक्षा भी नहीं कर सकी। पुरुष के प्रति उसका आकर्षण पहले-सा ही बना रहा, इसीलिए वह विविध भांति के आकर्षण परिधान और श्रृङ्गार के प्रसाधनों का आश्रय लेकर पुरुष को अपने ऊपर मुग्ध होने का जाल रचती रहती है। किन्तु उसकी इस भावना को पुरुष-वर्ग ने भली भाँति समझ लिया, तभी तो नारी के प्रति या तो वह क्षणिक मोह दिखला देता है, अथवा उसको अवज्ञा की

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दृष्टि से देख कर चल देता है ; अपने हृदय में उसे स्थायी स्थान प्रदान करने को वह प्रस्तुत नहीं है। वह स्त्री का शृङ्गार उसकी आँखों को खींच सकने में समर्थ हुआ, तब तो वह कुछ देर के लिए आश्चर्यचकित हो लेता है, यह कोई खिलौने-सी रंगीनी उसमें दिखाई न पड़ी तो उसकी उपेक्षा करके अपनी राह लगता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि चाहे पुरुष नारी को विचित्र वस्तु समझे अथवा उसकी उपेक्षा करे, दोनों ही दशाओं में वह करता है नारी का अपमान ही। वह उसे प्रेम और श्रद्धा की विभूति नहीं समझ पाता। इस प्रकार यूरोपीय देशों की नारियों की स्थिति का पूर्ण परिचय प्राप्त करने के पश्चात् यदि हम भारत की उन नारियों का परिचय प्राप्त करना चाहें जो उन्हीं पश्चिमीय नारियों से प्रभावित हैं तो स्त्री और पुरुष दोनों को सन्तुष्ट ही पावेंगे और साथ ही उस सन्तोष को दूर करने के लिए जो प्रयत्न किया जा रहा है, वह भी ठीक पश्चिम की ही छाया-सा प्रतीत होगा।

अनुच्छेद ६

शब्दार्थ—शताब्दियों=सैकड़ों वर्षों। वञ्चित=रहित, हीन, ठगी गई। अधिकारों=प्राप्य वस्तुओं या स्थानों। राजनीतिक=राजनीति सम्बन्धी। सामाजिक=समाज सम्बन्धी। परिवर्तन=उलट-फेर। अधोगति=निम्न स्थिति, गिरी दशा। दयनीयता की सीमा=अत्यन्त दयापूर्ण स्थिति। तूल=रूई। विद्रोह=अनिष्टकारी आचरण। प्रभुत्व=प्रभुता, स्वामित्व। रूढ़ियों=प्रसिद्धियों, प्राचीन मान्यताओं। परम्परागत=पुराने समय से चला आता हुआ। संस्कार=अभ्यासजन्य वासना। सुविधा=सुयोग, सुअवसर। मार्ग-प्रदर्शक=राह दिखाने वाला।

अर्थ

कोमल तूल सी वस्तु······················निश्चित किया।

यह गद्य का सारगर्भ अंश श्रीमती महादेवी वर्मा द्वारा लिखित निबंध 'आधुनिक नारी' से गृहीत है। यहाँ, पश्चिम की नारी की दशा का पर्यवेक्षण करने के उपरान्त विदुषी लेखिका ने भारतीय आज की बदली नारी का परिचय दिया है

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और बताया है कि इसको भी नये पथ का ज्ञान यूरोपीय नारी से प्राप्त हुआ है। भारतीय स्त्री ने विद्रोह क्यों किया, इसका कारण बताती हुई लेखिका कहती है—

रुई अत्यन्त मुलायम चीज है, किन्तु यदि उसी को अधिक समय तक किसी कठिन पदार्थ से दबाए रखा जाय तो वह भी अपनी कोमलता त्याग कर कठोर हो जाती है। यही बात भारतीय नारी के प्रति भी लागू है। भारतीय नारी पुरुष के द्वारा इतनी दबाकर रखो गई कि जिसके परिणाम स्वरूप उसकी सहन-शक्ति जाती रही और उसे अन्त में अनिष्ट आचरण करने को विवश होना पड़ा। पश्चिम की नारी के समान ही इसने भी अपनी कोमलता को ही अपनी परवशता का वास्तविक कारण समझ लिया। अतः पुरुष के स्वामित्व को दूर करने के लिए इसने भी अपनी कोमल भावनाओं को सर्वथा बदल देने की ठान ली। किन्तु भारतीय समाज में सैकड़ों वर्षों से चलो आती हुई समाज की मान्यताओं और वासनाओं ने उन्हें ऐसा परिवर्तन लाने का वैसा सुयोग्य नहीं दिया, जैसा कि पश्चिम की नारी को सहज ही प्राप्य था। तो भी इसने पश्चिमीय नारी से ही शिक्षा लेना उत्तम समझा और उसी के पथ पर यह भी चल पड़ी।

अनुच्छेद ७

शब्दार्थ—नितान्त=अत्यन्त। अभाव=कमी। विषमता=विपरीतता। ऽगति=तेजी से बढना। बाधाओं=विघ्नों। आकर्षक=मोहक। प्रतिद्वन्द्विता=होड़, प्रतिस्पर्द्धा, पराभव की इच्छा। प्रकृति-जन्य=स्वाभाविक। अस्ति=है। नास्ति=नहीं है। डगमगाती=अस्थिर, चंचल, दोलायमान। मर्मस्थल=मर्म का स्थान, हृदय। विज्ञापन=सूचना, अभिव्यक्ति, प्रकाश। आवेश=जोश। प्रयत्न-प्राप्त=परिश्रम से मिला हुआ। निष्ठुरता=कठोरता, हृदय हीनता। आवरण=पर्दा। अहेतुक=बिना कारण वाला। सज्ञात=सचेत। विक्षिप्त=पागल। आयास=प्रयास, प्रयत्न। अनिष्ट=अशुभ, बुराई। अनावश्यकता=बिना ही आवश्यकता। आश्चर्य-जनक=आश्चर्य में डालने वाला या वाली।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

क्षमता=शक्ति, सामर्थ्य । समकक्ष=समान आसन पर, समान पद पर । उपयोगिता=लाभप्रदता । तत्त्वों=सारगर्भ बातों । अनुकूल=उपयुक्त, सहायक, पोषक । अप्राप्त=न मिला हुआ, अनुपलब्ध । सम्भावित=सम्भव । अयोग्यता=अक्षमता । श्रम साध्य=कठिनाई से सिद्ध होने योग्य ।

अर्थ

भारतीय स्त्री ने ………………………हँसता है ।

यह गद्य भाग श्री मती महादेवी वर्मा के द्वारा लिखे हुऐ विद्वत्तापूर्ण निबन्ध 'आधुनिक नारी' से लिया गया है । इस स्थान पर वर्मा जी भारतीय आधुनिक शिक्षा-प्राप्त स्त्रियों के विद्रोह का परिचय दे रही हैं । भारत की विद्रोहिणी नारी की आज क्या दशा है, उसे समझाकर कह रही हैं—

भारत देश की भी युगों से कुचली हुई नारी ने पश्चिम से सबक लेकर पुरुष से होड़ लगाई और यह दिखलाना चाहा कि हम भी पुरुष से किसी बात में घटकर नहीं हैं । इस प्रकार इसने भी अपने को अपने में ही पूर्ण बनाने का संकल्प किया अवश्य, किन्तु केवल पुरुष की उपेक्षा करने से उसकी चिर-काल से प्राप्त नारीत्व तृप्त न हो सका । वह अपनी स्वाभाविक कोमलता को मिटाने का सबल प्रयास करती रही, किन्तु इसमें वह सफल नहीं हो सकी । इस प्रयास में न तो वह अपनी कोमलता ही मिटा सकी और न पूर्ण रूप से उसको सुरक्षित ही रख सकी । कभी तो वह इतनी कठोर बन गई कि यह स्पष्ट व्यक्त हो गया कि अपने हृदय के आहत होने के कारण ही वह ऐसी बन बैठी है और कभी उस क्षत्रिय कठोरता से ऊबकर उसे सर्वथा त्यागकर अकारण ही सस्ती हो गई । उसकी कठोरता को देखकर कभी पुरुष उसी भाँति डर गया जैसे आत्मस्थ (सचेत) व्यक्ति पागल को देखकर डर जाता है और दूसरी ओर जब उसने उसका हल्कापन देखा तब उसी प्रकार हँसकर टाल दिया जिस प्रकार बालक कोई अस्वाभाविक कार्य करता है तो उसे देखकर बिना कुछ कहे बड़े लोग हँस दिया करते हैं । इस प्रकार उभय रूपों में वह सर्वथा अस्वाभाविक हो गई और इस प्रकार अपने आप पराभूत हो गई ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनुच्छेद ८

शब्दार्थ—प्रतिनिधि=प्रधान के स्थान पर प्रतिष्ठित, प्रतिभू। श्रेणी=भाग, पंक्ति। त्रिवेणी=गङ्गा, यमुना और सरस्वती का संगम। भिन्न=पृथक्, अलग। युगान्त दीर्घ=अत्यन्त प्राचीन। युगान्तदीर्घ बन्धनों=बहुत पुराने समय से चली आती हुई सामाजिक व्यवस्थाओं। अवज्ञा=उपेक्षा, तिरस्कार। आन्दोलन=उथल-पुथल। गतिशील=चालू, प्रवाहमय। अभूतपूर्व=जैसा कभी नहीं हुआ था। शिक्षितायें=शिक्षा प्राप्त स्त्रियाँ। आजीविका=जीवनोपाय। सार्वजनिक=सभी लोगों के काम का। साधन=उपाय। सम्पन्न=भरी-पूरी, धनवान। पाश्चात्य=पश्चिम की, यूरोपीय। आधुनिकता=आजकल की सभ्यता, अँग्रेजी सभ्यता। संयोग=मेल, मिश्रण। गृह-जीवन=गृहस्थी, गृहस्थ-जीवन।

अर्थ

इस समय·········· ··················भिन्न हैं।

यह गद्यांश श्रीमती महादेवी वर्मा के लेख 'आधुनिक-नारी' से गृहीत है। यहाँ पर विदुषी लेखिका ने भारत की आधुनिक शिक्षा-प्राप्त और रूढ़िगत बन्धनों को तिलाञ्जलि देनेवाली स्त्रियों को तीन भागों में विभक्त किया है। इसी बात को बताती हुई कहती हैं—

भारत देश की जिन नारियों को आधुनिक कहा जाता है, उन्हें हम तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं। जिस प्रकार गंगा, यमुना और सरस्वती की धाराएँ संगम-स्थली पर पहुँच कर एक हो गयी हैं, यद्यपि तीनों की विशेषताएँ पृथक्-पृथक् हैं, उसी प्रकार इन तीन प्रमुख नारियों के कार्यक्षेत्र भिन्न होते हुए भी अन्त में हैं एक-से ही।

अनुच्छेद ९—११

शब्दार्थ—आश्रित=आधारित, सहारा लिये हुए। गहन-तल=गहरा तह। राष्ट्रीय=राष्ट्र का। भाग लेना (मुहा०)=हाथ बटाना। भ्रान्तिपूर्ण=भ्रम से भरी हुई। सादृश्य=समानता। एक-रूपता=आदि से अन्त तक अर्थात्

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कुल मिलाकर एक ही स्वरूप या भाव। जाग्रत=जगी हुई, उद्बुद्ध, शिक्षित। दृष्टिकोण=विचार धारा। व्यक्तिगत=एकमात्र अपना। त्रुटियों=अभावों, खामियों। समाधान=उत्तर, पूर्ति। आचरण=कर्म, क्रिया कलाप। उपरान्त=पश्चात्। विकसित=वर्धित, उन्नत। प्राचीन=पुराना या पुरानी। उपासक=उपासना करनेवाला, श्रद्धा रखनेवाला। वन्दिनी=बँधी हुई, कैद। पुरुष-समाज=पुरुष-वर्ग। अवहेलना=तिरस्कार, अवज्ञा। समर्थन=प्रमाणित करना, मान्य ठहराना, दृढ़ करना। क्रियात्मक=व्यवहार सम्बन्धी, कर्म क्षेत्र में उतारने वाला। असमर्थ=अक्षय, सामर्थ्य हीन, विवश। उग्र=गर्म, किसी की पर्वाह न करने वाले। प्रोत्साहन=बढ़ावा, विशेष उत्साह। प्राचीन=पुराना या पुरानी। निर्माण=सर्जन, सृष्टि, रचना। उपकरण=साधन की सामग्री। मार्ग=पथ, राह। सहायतापूर्ण=सहायता सहित। सहानुभूति=सुख और दुःख में सुखी और दुःखी होने का भाव। आकर्षक=दृष्टि को अपनी ओर खींचने वाली, सुन्दर या विचित्र। सुखकर=सुखदायी।

अर्थ

इन सबके ··· ··· ·· ··· ···सहानुभूति नहीं पाती।

प्रस्तुत गद्य-खण्ड विदुषी लेखिका सुश्री महादेवी वर्मा के 'आधुनिक नारी' शीर्षक निबन्ध से लिया गया है। यहाँ वे उन भारतीय नारियों की कठिनाइयों को सुझाने का प्रयास कर रही हैं, जिन्होंने भारतीय समाज की रूढ़िगत परिपाटी का परित्याग करके अपने जीवन का नूतन पथ अकेली अपनाया है, किन्तु उनका समाज पर कोई सामूहिक प्रभाव नहीं पड़ सका है। यद्यपि किन्हीं-किन्हीं विज्ञजनों की सहानुभूति उन्हें मिलती है, किन्तु वह भी हृदय तक ही सीमित रह जाती है, कार्य-क्षेत्र में उतर नहीं पाती। इसी को लेखिका इस प्रकार कह रही हैं—

पहले जिन आधुनिकता से प्रभावित भारतीय नारियों को तीन विभागों में रखा गया है, उस सबके क्रिया-कलाप को अलग-अलग पूर्णतया समझ लेने के बाद ही हम उन नारियों के सम्मुख आनेवाली कठिनाइयों को जान सकेंगे, जो पश्चिम से प्रभावित आजकल की परिस्थिति में रहकर आगे बढ़ी हैं अथवा समाज

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के बन्धन तोड़े हैं। यद्यपि बाहर से देखने पर उनकी दशा उन स्त्रियों से अच्छी ही दिखाई पड़ती है, जो अब भी परम्परा से चली आती हुई मान्यताओं के बन्धन में जकड़ी हुई हैं, तथापि वास्तव में है उनसे किसी प्रकार अच्छी नहीं। पहली चुभनेवाली बात तो यह है कि पुरुष वर्ग, जिन्हें प्राचीनता ही प्रिय है, उन नारियों का तिरस्कार करता है। दूसरी बात जो हृदय को आघात पहुँचाए बिना नहीं रहती, वह यह है कि जो पुरुष आधुनिक सुधारवादी विचार रखते हैं, वे आधुनिक के कार्यों से सहमति प्रकट करते हुए भी व्यवहारात्मक सहायता नहीं दे सकते और इन सुधारवादी विचारधारा वाले पुरुषों में जो अपेक्षाकृत अधिक उग्र हैं वे स्पष्टतया बढ़ावा तो देते हैं किन्तु उन नारियों को अपने साथ सहायक बनकर सबके सम्मुख ले चलने में असमर्थ हो जाते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस नये पथ की ओर उन्मुख नारी वास्तव में सर्वथा निस्सहाय है, बल्कि रूढ़ियों में बँधी हुई नारी को पुरुष की सहायता सहज ही प्राप्त है, अतः उसे यह अकेलापन खलता नहीं। इसका यथार्थ कारण यह है कि आधुनिक नारी अभी समाज में कुछ नया बना नहीं सकी है, यद्यपि सहायता प्राप्त होने पर वह समाज का नव निर्माण कर सकेगी। जिस प्रकार चौक पर देर से खड़ा आदमी जो सहायता के बिना अपने वांछित पथ पर बढ़ नहीं पाता और इधर-उधर से आनेवाले लोगों की दृष्टि को अपनी ओर खींच भर लेता है, उसी प्रकार आधुनिक नारी की ओर देखते सभी लोग हैं, किन्तु उन दर्शकों में से किसी में ऐसा साहस नहीं कि अपने हृदय की सहानुभूति को वह कार्य रूप में परिणत कर सके। यह सबकी दृष्टि का केन्द्र बनना कुछ देर के लिए अच्छा भले ही लगे, किन्तु इसमें स्थायी शांति और सुख का सर्वथा अभाव ही है।

अनुच्छेद १२–१४

शब्दार्थ—जागृति=जागरण। अग्रसर=आगे बढ़ना। उथल-पुथल=परिवर्तन। प्रमाण=सबूत। बलिदान=समर्पण। दुर्बलता=कमजोरी। कोरी=रिक्त, शून्य। छिन्न-भिन्न=तितर-बितर। शक्तिहीनता=दुर्बलता, कोमलता। लांछन=कलंक। आवश्यकतावश=आवश्यकता के कारण, जरूरत होने से।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रमाणित = सिद्ध । गति = वृद्धि, चाल, विकास । अत्याचार=अनर्थकर आचरण । पंगु=हाथ-पैर से हीन । गतिहीन=स्थिर, अचल, अविकसनशील । गतिवान=बढ़नेवाला, विकसित होनेवाला । क्रूरता=निष्ठुरता, अमानुषिकता । प्रगतिशील=विकसित । हित-साधन=लाभ की सिद्धि । मधु=मीठा । क्षार=नमकीन । समाहित=मिश्रित, मिला हुआ । आह्वान=पुकार । वर्ग=श्रेणी, विभाग । नेत्री=पथ-प्रदर्शिका, राह दिखानेवाली । अवकाश=समय, फुर्सत । बौद्धिक=बुद्धि-सम्बन्धी ।

अर्थ

राष्ट्र को प्रगतिशील'.................समाहित हैं ।

यह अवतरण श्रीमती महादेवी वर्मा द्वारा लिखित 'आधुनिक नारी' नामक निबन्ध से लिया गया है । इसमें वे भारत की उन नारियों का महत्व दिखला रही हैं, जिन्होंने भारत के विगत राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया । उस आन्दोलन में उतरकर नारी ने कुछ पाया और साथ ही कुछ खोया भी । इसी सत्य की ओर संकेत करती हुई लेखिका कह रही हैं—

जिन भारतीय शिक्षिता स्त्रियों ने देश की स्वतन्त्रता के संघर्ष में हाथ बटाया, उन्होंने देश का हित करने के साथ ही साथ नारी-वर्ग को भी कुछ लाभ पहुँचाया, इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता ; किन्तु जो लाभ उसे मिला वह नितान्त मधुर ही नहीं था उसमें नमक का कड़वापन भी था । अर्थात् उसने कुछ पाया भी, साथ ही कुछ खो भी दिया । जो लाभ उसे हुआ, वह भी अमूल्य है, साथ ही जिस भारतीय संस्कृति को उसने खो दिया, उसका मिलना सहज नहीं । यह पाने और खोने की बात यद्यपि अचरज में डालनेवाली लगती है, तथापि है विशुद्ध सत्य, इसमें सन्देह नहीं ।

अनुच्छेद १५—१८

शब्दार्थ

कठोरतम=सबसे कड़ा । संयम=निग्रह । एकाङ्गी=एक पक्षीय । उपयोगिता=लाभप्रदता । अवश्यम्भावी = अवश्य होने वाला । उत्तेजना प्रधान=

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जिसमें उग्रता अधिक हो, तीव्र संवेगवाला। समवेदनाप्रधान=भावुक, सहानुभूति रखने वाला। कष्टसाध्य=कठिनता से होने वाला। तात्कालिक=उस काल के लिए, एक निश्चित समय के लिए। रुक्षता=रूखापन। सीमित=बँधा हुआ, सीमा के भीतर रहने वाला। स्पर्श=छूना। आत्म-विज्ञापन=अपनी ख्याति, अपना प्रचार। अनुष्ठान=कार्य, आरम्भ। संग्राम=युद्ध, संघर्ष। पोषक=समर्थक, मानने वाले। सन्दिग्ध=संदेहयुक्त। तरल=द्रवणशील, पिघलने वाला। समावेश=मिश्रण, योग, मेल। सीमातीत = असीम। कृपाण=तलवार। कङ्कण=हाथ का आभूषण, कंगन। अपूर्ण=अधूरा या अधूरी। संघर्ष-विहीन=शान्त, युद्ध-रहित।

अर्थ

यह सत्य है..................सुन्दर बन गया होता।

यह गद्यांश श्रीमती महादेवी वर्मा के लिखे गए 'आधुनिक नारी' नामक निबन्ध से लिया गया है। जिन भारतीय ललनाओं ने प्राचीन सामाजिक बन्धनों को ठुकरा कर भारत के स्वतन्त्रता-संग्राम में सैनिकाएँ बनकर उतर गयीं, उनकी मनोदशा का विश्लेषण करती हुई लेखिका यह बता रही हैं कि उन नारियों ने किस नवीनता को जन्म दिया और किस नारी-सुलभ शाश्वत गुण का परित्याग कर दिया। उनकी समाज को क्या नूतन देन है और उनके द्वारा समाज की क्या क्षति हुई है। इसी की व्याख्या करती हुई विदुषी लेखिका कह रही हैं—

इसमें सन्देह नहीं कि जिन भारतीय स्त्रियों ने देश के स्वातन्त्र्य-युद्ध में भाग लिया, उन्हें सबसे कठिन आत्म-निग्रह की शिक्षा दी गई, किन्तु यह निग्रह केवल युद्ध के लिए ही काम का था, समाज के लिए उपयोगी आत्म-संयम का उसमें अभाव था, अतः यह निग्रह एकपक्षीय ही रह गया। उन सैनिक नारियों की बुद्धि को विकसित करके उन्हें यह नहीं बताया गया कि जो संयम तुम्हें यहाँ आवश्यक है, वही सामाजिक जीवन के निमित्त विघटनकारी हो जायगा। सैनिक समाज की सांस्कृतिक मान्यताओं को सुरक्षित रखने के लिए अपनी जीवन-रक्षा की पर्वाह नहीं करता और समाज में रहनेवाला नागरिक समाज को

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बनाए रखने के लिए अपने जीवन की रक्षा को आवश्यक समझता है। सैनिक जीवन में मृत्यु आकर्षक हो जाती है, और सामाजिक में जीवित रहना ही प्रकाम्य (लुभावना) होता है। यदि सैनिक का आदर्श और नागरिक का आदर्श दोनों समन्वित हो सकते तो शायद मानव-जीवन विशेष रूप से आकर्षण एवं पूर्ण हो जाता।

अर्थ

उनमें जो विचारशील थीं ··· ··· ··· ··· ··· बढ़ती जाती है।

यह गद्यावतरण आधुनिक ख्यात कवियित्री एवं सिद्ध गद्यलेखिका सुश्री महादेवी वर्मा के 'आधुनिक नारी' निबन्ध से गृहीत है। यहाँ लेखिका यह बता रही है कि नारियों के लिए यह आवश्यक है कि वे परिस्थिति के साँचे में अपने हृदय को ढालती चलें तभी उनका जीवन समाज के लिए महत्त्वपूर्ण एवं पूर्ण उपयोगी हो सकता है। इस तथ्य को न जानने या अपनाने के कारण बहुत-सी संग्राम-रत नारियों का पारिवारिक जीवन आदर्श न होकर विघटनकारी सिद्ध हुआ। नारी का हृदय सदा से द्रवणशील रहा है, वह पाषाण के सदृश अपरिवर्तनीय कभी भी नहीं रहा और इसी में समाज का हित भी सन्निहित था, आज इसके अभाव में नारी समाज का अहित अधिक कर रही है, हित बहुत कम। इसी बात को समझाती हुई विवेकिनी लेखिका का कथन है—

भारत के स्वाधीनता-संग्राम में भाग लेने वाली नारियों में जो नारी-जीवन की सार्थकता का परिज्ञान रखने वाली थीं, उन्होंने समय की पुकार पर भारत की प्राचीन वीराङ्गनाओं के समान शस्त्र भी हाथ में लिया, किन्तु ज्यों ही संघर्ष समाप्त हो गया, त्यों ही उन्होंने सैनिक का बाना उतारने के साथ ही अपने हृदय को पुनः ममता, दया, क्षमा, प्रेम, सहानुभूति आदि नारी के आदिकाल से भूषण-स्वरूप हार्दिक गुणों को अपना कर अपने गृहस्थ-जीवन को विच्छिन्न होने से बचा लिया। किन्तु; जिनमें सत् और असत् के विवेक का अभाव था, उन्होने सदा के लिए स्त्री-सुलभ गुणों को तिलाञ्जलि दे दी और उनके जीवन का उद्देश्य सदा के लिए संघर्ष ही हो गया। ऐसी स्त्रियाँ यह नहीं जानतीं कि समाज के लिए कैसा नारी-जीवन उपयोगी है, उन्हें ज्ञान है तो

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

केवल संघर्ष का, विद्रोह का। यह संघर्ष किंवा विद्रोह जीवन का साध्य नहीं, केवल साधन है। संघर्ष को तो साथ लिए हुए मानव जन्म ग्रहण करता, वह उसका सहज गुण है, इसकी शिक्षा के लिए उसे किसी पाठशाला में जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, किन्तु जब से मानव ने इस धरती पर पैर रखा तब से वह निरन्तर यही सीखता रहा है कि जीवन आदर्श रूप में बिताया कैसे जाना चाहिए। संघर्ष जीवन को आदर्श बनाने में सहायक होता है, यह सच है, किन्तु संघर्ष-युद्ध ही स्वयं जीवन का अन्तिम ध्येय नहीं है। जीवन के लिए संघर्ष का त्याग भी भूल है, किन्तु विनाशकारी संघर्ष को छोड़कर सर्जनात्मक संघर्ष ही मानव-जीवन को विकसित करने के लिए अपनाना विवेकशीलता है।

अनुच्छेद १६-२२

शब्दार्थ—हिम=बर्फ। अज्ञात=अनजाना या अनजानी। विविधता=अनेकरूपता। केन्द्र विन्दु=लक्ष्य, ध्येय। कल्याण=मङ्गल, हित। ह्रास=पतन। प्रकृतिस्थ=शान्त, स्वस्थ। जाग्रति-युग=जागरण-काल, आधुनिक संघर्ष-काल। उपासिका=उपासना करने वाली। सन्दिग्ध=सन्देह युक्त। अग्रदूती=प्रथम सन्देश पहुँचाने वाली। सोपान=सीढ़ी। अवरोध=रोकना। गन्तव्य=लक्ष्य, मंजिल। उद्गम=आविर्भाव, उत्पत्ति। अधीनता-सूचक=दासता को प्रकट करने वाला। कर=राजस्व। रूपरेखा=स्वरूप। निर्भर=आधृत। दुरवस्था=(दुः+अवस्था) हीन दशा। विस्मरण=भूलना। स्वप्न=कल्पना। चरम=अन्तिम। स्वार्थपरता=अपने ही हित की भावना। भावी समाज=भविष्य में निर्मित होने वाला मानव-सङ्गठन। पराजय=हार। पर्याय=एकार्थ बोधक। शिथिल=ढीला-ढाला। ध्वजा-धारिणी=झंडा उठाने वाली। स्वस्थ=सुगठित। ध्वंस=विनाश।

अर्थ

जिन शिक्षिताओं ने........................समझा जाएगा।

आज की भारतीय नारी को समाज के लिए मङ्गलमय पथ अपनाने की विवेकपूर्ण शिक्षा प्रदान करने वाली श्रीमती महादेवी वर्मा अपने 'आधुनिक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नारी' शीर्षक निबन्ध में उन शिक्षिता स्त्रियों को सदुपदेश दे रही हैं, जिन्होंने विगत भारत के स्वाधीनता-संग्राम में परिस्थितिवश सैनिकाओं का कार्य किया था अथवा जो उन सैनिकाओं का पदानुसरण करना चाहती हैं। जो संघर्ष जीवन को उत्थान की ओर ले जाता है, वह तो वरेण्य है, क्योंकि वह सर्जनात्मक है, किन्तु जो मानव-जीवन को पतन की ओर ले जाता है, वह त्याज्य है, क्योंकि वह विनाशात्मक है। नारी का पुनीत कर्तव्य यही है कि वह मंगल का समाज में प्रसार करे। यहाँ विदुषी लेखिका का कहना है—

जिन आजकल की पढ़ी-लिखी स्त्रियों ने गृहस्थ-जीवन के भारतीय मंगलमय पथ को त्यागकर सार्वजनिक सामाजिक या राजनीतिक क्षेत्र को अपनाया है, उनके साथ भी वही बात घटित होती है जो कि विगत स्वाधीनता-युद्ध में भाग लेने वाली भारतीय नारियों पर घटित हुई थी। जिन-जिन स्त्रियों ने गृहस्थी के बन्धनों को त्यागकर सार्वजनिक क्षेत्र में प्रवेश किया, वे एक तो समाज में दीर्घकाल के चली आती हुई हानिकर, अस्वास्थ्यप्रद रूढ़ियों से व्याकुल थीं और इसके साथ ही समय की अनुकूलता भी उनके सामने आ उपस्थित हुई। उनके हृदय में उस समय बहुत बड़े त्याग या सर्वस्व-समर्पण की भावना काम नहीं कर रही थी। सच तो यह कि प्राचीन साँचे में ढले हुए नपे-तुले गृहस्थी के बन्धन में ही उनसे सर्वस्व दान की माँग की जा रही थी और उसी से मुक्ति पाने के लिए वे भीत होकर दूसरी ओर चल पड़ी थीं। यदि कोई व्यक्ति अपनी प्रसन्नता से तुच्छातितुच्छ वस्तु किसी को दे देता है, तो उस वस्तु की गणना दान में की जाती है, किन्तु यदि दबाव के कारण अपार धन-राशि भी देनी पड़े तो उससे विवशता या दासता ही प्रकट होगी। यही बात गृह-बन्धन की अवहेलना करने वाली नारियों के प्रति भी अक्षरशः घटित होती है।

अर्थ

भविष्य में......................ध्वंस में नहीं।

भारत का सामाजिक पुनर्गठन कैसा हो, जिसमें नर-नारी सबको विकास का समान अवसर मिले और समाज भी उत्तरोत्तर विकसित होता चले, इसके लिए नारी पर क्या दायित्व है, इसी को समझाती हुई विवेकशीला लेखिका

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीमती महादेवी वर्मा अपने 'आधुनिक नारी' निबन्ध के अन्त में शिक्षिता स्त्रियों को लक्ष्य करके कहती हैं—

आगे चलकर भारत का समाज किस आकार-प्रकार का बने, उसमें नारी का क्या स्थान हो, उनके अधिकार क्या हों, इन सब प्रश्नों का उत्तर खोज निकालने का दायित्व आधुनिक सचेत और शिक्षा-प्राप्त नारियों पर है। उस समाज के निर्माण के समय उन्हें यह ध्यान में रखना होगा कि किन कारणों से विगत भारतीय समाज में नारी की ऐसी हीन स्थिति सम्भव हो सकी; क्योंकि उन कारणों को दूर करने पर ही समाज का भावी-विकास हो सकेगा। इसके साथ ही भारतीय नारी को पुरुष-वर्ग के विगत स्वार्थों को भुला देना होगा; क्योंकि हार्दिक-शुद्धि के बिना दोनों में प्रेममय योग असम्भव हो जायगा। ऐसा होने पर ही जिस आदर्श समाज के निर्माण की हम आज कल्पना कर रहे हैं वह धरती पर उतारा जा सकेगा। किन्तु यदि नारी पुरुष की विगत स्वार्थ-परता को दृष्टि में रखकर सदा उससे विद्रोह करना ही अपना ध्येय बना लेगी और उससे सन्धि का अर्थ अपनी हार समझेगी तब तो समाज का नव-निर्माण अधर में ही लटका रहेगा और उत्तरोत्तर हम अवनति की ही ओर बढ़ते जायेंगे। अतः क्रान्ति को जगानेवाली और स्वतन्त्रता का सर्व प्रथम अह्वान करने वाली नारी का कर्तव्य यही होगा और उसके जीवन की सफलता भी तभी होगी जबकि वह विनाश के पथ को त्यागकर अपने शाश्वत निर्माण के कार्य को अपनाएगी।

अधिकार का रक्षक

ले०—श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'

जीवन परिचय—श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' का जन्म पंजाब प्रान्त के जालन्धर नामक नगर के एक मध्यम श्रेणी के परिवार में सन् १९१० में हुआ था। आपके पिता उसी प्रांत में रेलवे के स्टेशन-मास्टर के पद पर रहे हैं। वे बड़े सरल, उदार तथा स्वतन्त्र विचार के व्यक्ति थे। 'अश्क' की प्रारम्भिक शिक्षा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जालन्धर में हुई थी। पश्चात् आपने लाहौर में अध्ययन किया। आपने बी० ए० तथा एल-एल० बी० की परीक्षाएँ पास की हैं। अतः आपका हिन्दी और अंग्रेजी का ज्ञान अच्छा है। पंजाब के निवासी होने के कारण आपने उर्दू भी पढ़ी। प्रारम्भ में आप पंजाबी भाषा में कविता किया करते थे। इसके अलावा आपने उर्दू में कहानियाँ तथा प्रहसन लिखना प्रारम्भ किया। प्रेमचन्द और सुदर्शन की तरह आप भी उर्दू से हिन्दी के क्षेत्र में आये। आपके पिता ने नाटकों की रचना में प्रारम्भ से ही प्रोत्साहन दिया। उस समय की नाटक-कम्पनियों के अभिनेताओं से उन्होंने पहले परिचय कराया। इस प्रकार आपकी स्वाभाविक रुचि बढ़ती और विकसित होती गयी। आपने पाश्चात्य नाटकों और नाटककारों का विद्यार्थी-जीवन से ही अध्ययन प्रारम्भ किया। कालेज-जीवन में ही आपने कई नाटक और कहानियाँ लिखीं। आपकी सर्वप्रथम कहानी सन् १९३२ में प्रेमचन्द के सम्पादकत्व में हंस में छपी। आपकी 'ताँगेवाला', 'एहोमा', तथा 'बैगन का पौधा' नामक कहानियाँ उन्हें बड़ी पसन्द थीं।

कालेज की शिक्षा के समय आपका विवाह कौशल्या देवी के साथ हुआ। जो एक विदुषी और अच्छी लेखिका हैं। आपने अपने नाटकों के प्रेम तथा प्रतिभा के कारण तीन-चार वर्ष तक फिल्म-क्षेत्र में लेखक के रूप में कार्य किया। इन्हीं दिनों आपने 'गिरती दीवारें' नामक प्रसिद्ध उपन्यास तथा अन्य कई कहानियों की रचना की। पश्चात् यक्ष्मा रोग से पीड़ित होने के कारण आप 'पंचगनी' के सेनेटोरियम में भरती हो गये। वहाँ से स्वास्थ्य-लाभ करने के पश्चात् इलाहाबाद आकर आपने साहित्य को सेवा और व्यवसाय के रूप में अपनाया। आप अच्छे कवि, नाटककार, उपन्यास और कहानी लेखक हैं। आपकी अनेक पुस्तकें और संग्रह निकल चुके हैं। रेडियो-एकाङ्की लिखने में भी आप सिद्धहस्त हैं। आपके नाटक रेडियो पर प्रसारित एवं रंगमंच पर अभिनीत भी होते रहते हैं। आपने 'नीलाभ प्रकाशन' नामक प्रयाग में एक प्रकाशन-संस्था भी खोली है और यहीं से आपकी अधिकांश रचनाएँ प्रकाशित होती रहती हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'अश्क' जी का सर्वप्रथम एकांकी नाटक 'पापी' सन् १९३७ में कलकत्ते के 'विशाल-भारत' नामक पत्र में छपा। आप के अन्य प्रसिद्ध एकांकी 'लक्ष्मी का स्वागत' तथा 'अधिकार का रक्षक' सन् १९३८ में हिन्दी संसार के सामने आये। प्रगतिशील-युग के लेखकों में आप का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आपने हिन्दी के एकांकी-साहित्य को आगे बढ़ाया है।

साहित्य-साधना—आधुनिक हिन्दी साहित्यकारों में जिन्होंने सन् १९३५ के बाद साहित्य की सेवा की है, साहित्य को भाव, भाषा, छन्द और विचारों की दृष्टि से एक नए पथ की प्रेरणा देकर जीवन की वास्तविकता की ओर अग्रसर किया है, उनमें कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार और एकांकी-कार के रूप में उपेन्द्रनाथ 'अश्क' का भी योग रहा है। 'अश्क' जी हिन्दी की सर्वतोमुखी सेवा में निरन्तर रत हैं। यहाँ पर हम उनके विभिन्न रूपों का संक्षेप में विचार करेंगे।

कवि—'अश्क' जी की कविता के दो रूप हैं एक गीत तथा दूसरा खण्ड-काव्य। 'अश्क' के गीतों में प्रणय-भावना, प्रकृति-चित्र तथा वैयक्तिक अनुभूति के साथ-साथ जीवन और जगत के सरस और यथार्थ चित्रण भी हैं। 'चाँदनी-रात और अजगर', 'दीप जलेगा', 'प्रातः प्रदीप' तथा 'उर्मियाँ' नामक संग्रहों के गीत और कविताएँ इसी प्रकार की हैं। छंदों की दृष्टि से 'अश्क' ने छायावादी कविता की गीत शैली तथा नये मुक्त-छन्द दोनों में सरल, सरस और स्वाभाविक काव्य रचना की है। उनके गीतों में स्वाभाविकता तथा पाठकों के लिए सुबो-धता अधिक मात्रा में है। उनके कवि की सफलता का यह द्योतक है। इसके अलावा 'अश्क' ने 'बरगद की बेटी' नामक खण्ड-काव्य की भी रचना की है। इस खण्ड-काव्य में प्राकृतिक वातावरण तथा गहरी अनुभूति और मधुर-भावों के कारण दो प्रेमियों की प्रणय-कथा बड़ी खरी और प्रभावपूर्ण ढंग से व्यंजित हुई है। हिन्दी के खण्ड-काव्य का रचना-कौशल बड़ा ही महत्वपूर्ण है।

कहानीकार—'अश्क' जी का पहला कहानी-संग्रह संवत् २००१ में 'पिंजरा' नाम से प्रकाशित हुआ। बाद में बैगन का पौधा', 'छींटे' 'निशानियाँ', 'दो धारा' आदि अनेक संग्रह प्रकाशित हुए। 'अश्क' जी की कहानियों का

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आधार सामाजिक कुरीतियाँ, आधुनिक सभ्यता का आडम्बर और समाज में पाये जाने वाले साधारण तथा अद्भुत व्यक्ति हैं। अधिकांश कहानियाँ मध्यम वर्ग से सम्बन्धित हैं। चरित्रों में बालक, युवा, नारी सभी का मनोवैज्ञानिक चित्रण मिलता है। यथार्थ चित्रण के साथ-साथ काम का चित्रण बड़ा रोचक और मोहक है। गंभीर कहानियों की रचना में भी आप बड़े कुशल हैं।

उपन्यासकार—इस रूप में 'अश्क' जी की सर्वप्रथम देन 'सितारों के खेल' है। इसमें एक व्यक्ति के माध्यम से जीवन के सुख-दुख का सजीव और मर्मस्पर्शी वर्णन है। अपने प्रथम उपन्यास द्वारा लेखक ने हिन्दी में अच्छी लोकप्रियता प्राप्त की। 'गिरती-दीवारें' नामक दूसरे उपन्यास में 'अश्क' की कला पूर्ण रूप से निखर उठी। इस उपन्यास में प्राचीन रूढ़िवाद का खोखला स्वरूप तथा जीवन, समाज तथा युग की विभीषिका का अच्छा रूप प्रस्तुत हुआ है। उद्देश्य, कथानक, चरित्र, भाषा तथा मार्मिक शैली के कारण यह उपन्यास हिन्दी की एक अनूठी कृति है। 'गर्म राख' नामक उपन्यास में समाज का अधिक यथार्थ रूप उसकी भीषणता तथा सामाजिक आन्दोलन और व्यापक हलचल अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत हुई। इसकी भाषा-शैली में ओज की मात्रा अधिक है। इनके अलावा कुछ अनुवादित उपन्यासों के द्वारा लेखक ने उपन्यास साहित्य की श्री-वृद्धि की है।

नाटककार—'अश्क' जी ने ऐतिहासिक और सामाजिक दोनों प्रकार के नाटकों की सृष्टि की है। ऐतिहासिक नाटकों में 'जय-पराजय' तथा सामाजिक नाटकों में 'स्वर्ग की झलक' 'छठा बेटा', 'कैद और उड़ान' तथा 'पैंतरे' आदि बड़े लोक प्रिय हुए। सामाजिक नाटकों में आधुनिक समस्याओं का बड़ा यथार्थ सुन्दर ढंग से दिखलाया गया है। उसमें हास्य-व्यंग के बड़े सुन्दर-सुन्दर स्थल तथा साथ ही 'अश्क' की कला, भाषा-शैली आदि का अपना मौलिक रूप प्रस्तुत हुआ है। मानव हृदय और उसके मानसिक विश्लेषण एवं द्वंद्व का निखरा हुआ रूप उनमें मिलता है।

एकांकीकार—'अश्क' जी ने हिन्दी एकांकी साहित्य में युगान्तर उपस्थित किया। द्विवेदी-युग के एकांकीकारों का विषय प्रायः सामाजिक व्यंग्य ही था।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पात्रों के अन्तर्भावों तथा अनुभूतियों का सूक्ष्म चित्रण उनमें नहीं था। टेकनिक या शैली अथवा रचना-कौशल की दृष्टि से उसमें यथार्थ एवं स्वाभाविकता कम थी। 'अश्क' जी ने विषय तथा शैली दोनों दृष्टियों से एकांकी साहित्य में नयी और प्रभावशाली देन दी। उनमें कोरी कल्पना नहीं समाज, कुटुम्ब, घर, संस्थाओं तथा मानव के व्यवहारों, कार्य-कलापों और मनोस्थिति का यथार्थ और सूक्ष्म से सूक्ष्म स्वरूप प्रस्तुत हुआ। सच्ची अनुभूतियाँ, सच्चे भाव, सच्ची अभिव्यक्त, सच्ची व्यंजना और सच्ची ईमानदारी उनके एकांकियों में मिलती है। वे विशाल समाज के खरे आलोचक हैं। समाज के क्रिया-कलापों और दूषित प्रवृत्तियों के प्रति तीखा व्यंग्य है। व्यक्ति का सच्चा स्वरूप प्रस्तुत करते हुए भी वे उसे सहानुभूत देते हैं, किन्तु पीड़ितों और असहायों की वेदना और निराशा का स्वर तीव्र हो उठता है। उनकी उस वेदना का उद्देश्य किसी वर्गविशेष के ही लिए नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानव के विचार से उनकी दृष्टि समाज और व्यक्ति की बुराइयों को कुरेद-कुरेद कर प्रस्तुत करती हैं। वे मानवता के कुशल संदेश-वाहक हैं और यथार्थ का दिग्दर्शन करा देना ही उनकी कला है। वे न तो उपदेशक बनकर सामने आते हैं और न समस्याओं का ढेर लगा देना उनका काम है। अपितु समाज और मानव का दर्द ही प्रकट करना, एक संकेत देना, व्यंग्य द्वारा उसके दोषों पर प्रहार करते हुए उसकी भयङ्करता को प्रकट कर देना ही उनका काम है।

'अश्क' जी ने यूजीन ओ नील, मेटर लिंक, जैकब आदि पाश्चात्य एकाकी-कारों की रचना और शैली का अच्छा अध्ययन किया है। उन नाटककारों की शैली के ढङ्ग पर भारतीय समस्याओं और पात्रों के मनोवैज्ञानिक चित्रण की सूक्ष्मातिसूक्ष्म दृष्टि को अपनाकर अपनी एकांकी-शैली का मौलिक निर्माण किया है। वातावरण, वस्तु, स्थान, वेशभूषा, काल-निर्देश आदि का उचित निर्देशन उनके एकांकी में रहता है। कथानक की गठन में कार्य, प्रभाव, उद्देश्य, काल की अन्विति तथा इन चारों के साम्य को प्रदर्शित करने की उनमें अद्भुत क्षमता है। प्रारम्भ, द्वन्द्व तथा अन्त भी विषय के अनुसार सुन्दर ढङ्ग से प्रस्तुत होता है जो उनके उद्देश्य को सफल और सार्थक करता

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है। 'अश्क' के एकांकियों का क्षेत्र समाज और व्यक्ति तथा मध्यम वर्ग का परिवार है। अतः विभिन्न व्यक्तित्वों तथा उनके चरित्रों की विशेषता को प्रदर्शित करने की अच्छी सामग्री उन्हें प्राप्त होती है। व्यंगात्मकता तथा हास्य की प्रधानता होते हुए भी उनकी शैली में गम्भीरता और संयम है। भाषा में सरलता और प्रभावात्मकता है यद्यपि उर्दू और अंग्रेजी शब्दों का वे बरांबर प्रयोग करते हैं।

'अश्क' जी ने मुख्यतः तीन प्रकार के एकांकी लिखे हैं। सामाजिक व्यंग्य प्रधान, सांकेतिक तथा प्रतीकात्मक एवं मनोवैज्ञानिक और हास्य प्रधान प्रहसन।

सामाजिक व्यंग्य प्रधान नाटकों में पापी, अधिकार का रक्षक, लक्ष्मी का स्वागत तथा विवाह के दिन श्रेष्ठ हैं।

सांकेतिक तथा प्रतीकात्मक एकांकियों में चरवाहे, देवताओं की छाया में छटा बेटा और सूखी डाली श्रेष्ठ हैं। इनमें व्यंग्य और सामाजिक बुराइयों के सुन्दर चित्रण के साथ-साथ गठन और विषय के प्रतिपादन एवं प्रदर्शन में 'अश्क' का अच्छा विकाश हुआ है। इन नाटकों में गम्भीरता अधिक है और ये शिक्षित वर्ग के लिए बड़े ही मनोरंजक एवं महत्वपूर्ण है।

मनोवैज्ञानिक एवं हास्य प्रधान प्रहसनों में चरित्रों का सूक्ष्म विश्लेषण एवं चारित्रिक त्रुटियों पर हास्य की सुन्दर सामग्री प्रस्तुत हुई है। अँजो दीदी, पर्दा उठाओ पर्दा गिराओ इसके अच्छे उदाहरण हैं।

'अश्क' के नाटकों में अभिनेयता का पूर्ण उत्कर्ष मिलता है। ये बडी सरलता से रंगमंच पर प्रस्तुत करते हैं। इसके अलावा पढ़ने में मनोरंजन की अच्छी सामग्री सुलभ होती है। 'अश्क' जी के एकांकी रेडियो पर भी सफलतापूर्वक प्रसारित किए जाते हैं।

इस प्रकार 'अश्क' की हिन्दी साहित्य की महती देन है। आधुनिक साहित्यकारों में उनका स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है। वे उच्चकोटि के नवीन लेखकों में यदि सर्वश्रेष्ठ नहीं तो कोई उनके समकक्ष भी नहीं पहुँच पाता। उनकी प्रतिभा सर्वतोमुखी है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भाषा—'अश्क' जी की भाषा सरल और स्वाभाविक है। इसमें बोलचाल के शब्दों का प्रयोग हुआ है। पात्रों के अनुरूप आपके नाटकों और एकांकियों में भाषा का भी स्वाभाविक प्रयोग हुआ है। मध्यम वर्ग के शिक्षितों तथा अंग्रेजी के जानकारों के मुँह से आपने खिचड़ी भाषा का प्रयोग करवाया है, जबकि नौकर-चाकर, ग्रामीण-जन तथा मजदूर पेशे के लोग स्थानीय बोलियों का प्रयोग नाटकों में करते हैं। इस कारण भाषा में सरलता और सुबोधता है। आपने उर्दू तथा अंग्रेजी के शब्दों द्वारा भाषा का शब्द-भण्डार बढ़ाया है, जो हिन्दी की व्यापकता का सूचक है। किन्तु एक ओर जहाँ अंग्रजी के ट्रे, स्टूल, रैक जैसे शब्दों और टेलीफोन का चोंगा जैसे वस्तुवाचक संज्ञा शब्दों का प्रचलित प्रयोग हुआ है तो दूसरी ओर प्रोटेस्ट, ईडियट, रिफार्म, रिपोर्ट, प्रोपेगन्डा शब्दों का अप्रचलित प्रयोग आप बेखटक करते हैं। साधारण जनता की समझ में आने वाले ऐसे अनेक शब्दों का प्रयोग आपने किया है। उर्दू के शब्दों में जहाँ तकल्लुफ, फर्माइये, हिमायत, खौफ, जैसे बहुप्रचलित शब्द आपने रखे हैं वहाँ आपके पात्र करीन, नामाकूल, अहमक, बेजारी जैसे अप्रचलित शब्द आपकी भाषा में पात्रों के मुँह से प्रायः निकलते रहते हैं। इसका एक कारण है कि आप पहले उर्दू के लेखक थे, फिर एक ऐसे प्रांत का प्रभाव भी आप पर है जहाँ की भाषा उर्दू रही है। संक्षेप में उर्दू और अंग्रेजी के अप्रचलित शब्द वांछनीय नहीं और सम्भवतः ऐसे अधिक शब्द मध्यम वर्ग के समाज में बोले भी नहीं जाते, जिनका आप प्रायः प्रयोग करते हैं। इतना होते हुए भी आपकी भाषा में कुछ वास्तविकता और बोलचाल की सरलता, स्वाभाविकता पाई जाती है; जिससे उसका एक महत्त्व और प्रभाव है।

शैली—'अश्क' जी की शैली व्यावहारिक और व्यंग्यात्मक है। प्रसंगानुसार भावों और विचारों के कथन और वार्तालाप में ध्वन्यात्मक प्रभाव है। शब्दों, पदों और वाक्यों का प्रयोग स्वाभाविकता की दृष्टि से उचित हुआ है। कहीं-कहीं पर उर्दू की उक्तियों का समावेश मिलता है जैसे 'अधिकार का रक्षक' नामक एकांकी में 'करीम से चुनी'। हिन्दी में करीम से चुनी नहीं कहा जाता उसके स्थान पर क्रम से रखी, सिलसिलेवार या क्रम से सजाई हुई का प्रयोग

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

होता है और हिन्दी के इन प्रयोगों में अधिक स्वाभाविकता है। मुहावरों आदि का प्रयोग 'अश्क' जी ने बराबर किया है, जिससे शैली में चमत्कार और व्यंग्य उत्पन्न होता है। अश्क की शैली में कहीं-कहीं पर विदग्धता और मर्म पर प्रहार करने वाला चुटीलापन बड़े स्वाभाविक ढंग से उपस्थित होता है। अन्य स्थलों पर व्यंग्य की शैली गम्भीर और संयत भी है। वार्तालाप में अधिक प्रभाव, सादगी और सरलता है। अभिव्यंजना की यथार्थता और सचाई तथा भावों और विचारों की स्पष्टता 'अश्क' जी की शैली का प्रधान गुण है। शैली के ये गुण 'अश्क' जी की सभी रचनाओं में पाये जाते है, चाहे वह उपन्यास हो चाहे कहानी, नाटक हो या एकांकी। 'अश्क' जी की शैली सरल, रोचक और प्रभावशालिनी है। लेखक एक मौलिक शैलीकार और अपनी शैली का निर्माता है।

रचनाएँ—'अश्क' जी ने साहित्य के प्रायः सभी क्षेत्रों में समान रूप से रचना की है। उनकी रचनाएँ इस प्रकार हैं—

काव्य-संग्रह—'बरगदकी बेटी', 'दीप जलेगा', 'चाँदनी रात और अजगर', 'प्रातःप्रदीप', और 'उर्मियाँ'।

कहानी-संग्रह—'पिंजरा', 'छींटे', 'काले साहब', 'बैगन का पौधा', 'जुदाई की शाम का गीत', 'निशानियाँ', और 'दोधारा'।

मौलिक उपन्यास—'सितारों के खेल', 'गिरती दीवारें', 'गर्म राख', 'रंगसाज', 'बड़ी-बड़ी आँखें' और 'चेतन'।

अनुवादित उपन्यास—'ये आदमी ये चूहे' (प्रसिद्ध अमेरिकन उपन्यासकार स्टीन बैक्र का उपन्यास), 'हिज एक्सलेन्सी' (प्रसिद्ध रूसी उपन्यासकार दास्तवस्की का हास्यपूर्ण उपन्यास)।

नाटक—'स्वर्ग की झलक', 'अंजो दीदी', 'आदि मार्ग', 'जय पराजय', 'पैंतरे', 'कैद और उड़ान', 'छठा बेटा' और 'अलग-अलग रास्ते'।

एकाङ्की – 'पर्दा उठाओ पर्दा गिराओ', 'पक्का गाना', 'देवताओं की छाया में', 'चरवाहे' और 'प्रतिनिधि एकाङ्की' (संपादित)।

श्री सेठ के मकान का..............टेलीफोन का चोंगा रख देते हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शब्दार्थ—ड्राइंग रूम=बैठक खाना। करीन से=क्रम से, सिलसिलेवार। चुनी हुई=रखी हुई, सजायी हुई। मध्य=बीच। सुगमता=सरलता। हवा पलट गयी=लोगोंका विचार बदल गया। पक्ष=तरफ, ओर। प्रचार=फैलाना। वास्तव में=सचमुच। समस्त=सारा। पीड़ित=दुखी। पददलित=कुचले हुए, हीन बनाए हुए। ऊपर उठाना=श्रेष्ठ बनना। दशा=हालत। शोचनीय=बुरी। लालन-पालन=पालना-पोसना। अनुचित=गलत। दबाव=प्रभाव, रोब। भीरु=डरपोंक स्वभाव वाला। साँस-फूलना=शारीरिक श्रम के कारण जल्दी-जल्दी साँस लेना। खाल उधेड़ना=बहुत अधिक या बुरी तरह मारना। अहमक=मूर्ख, बेवकूफ। कर्कश=गुस्से के कारण तेज। संयत=काबू में। अत्याचार=अन्याय, कठोर व्यवहार। तत्काल=तुरन्त। निरीह=असमर्थ, लाचार। क्रूर=कठोर। जुल्म का शिकार=कठोर व्यवहार या अत्याचार का पात्र। यूनियन-संघ, संगठन। स्वत्व=अधिकार। धारा सभा=व्यवसायिक सभा। खिसियाना=चिढ़ना। घोषित करना=एलान करना, किसी बात का जोरदार शब्दों में प्रचार। हिमायत करना=पक्ष लेना। हक=बारे में सम्बन्ध में। प्रोपेगेण्डा=प्रचार। अवकाश=समय।

महाराज, कल..................हिं हिं.....हिं हिं...।

प्रस्तुत अवतरण 'अधिकार का रक्षक' नामक पाठ से लिया गया है। इसके प्रसिद्ध लेखक श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' हैं। सेठ घनश्यामदास जी अपने बैठक खाने में बैठे हैं। टेलीफोन की घण्टी बजती है और वे हरिजन सभा के मन्त्री रत्नाराम जी से टेलीफोन पर बातचीत प्रारम्भ करते हैं। प्रस्तुत पंक्तियों में उनकी बातचीत का प्रसंग है।

घनश्यामदास जी रत्नाराम जी से कल की सभा का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि कल की सभा में कैसा मजा आया। किस प्रकार उनका उद्देश्य पूरा हुआ और उनका काम बन गया। आपने जो भाषण दिया उसका कितना प्रभाव और महत्त्व स्थापित हुआ। सब लोगों के विचार बदल गये। हरिजनों में सब के सब मेरी ओर हो गये और मेरे बारे में जनमत फैलाने तथा मुझे समर्थन देने के लिए उन्होंने कार्य करने का निश्चित कर लिया। इतना कहकर वे हिं-हिं करके

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हँसने लगे। फिर घनश्यामदास के मन्त्री रत्नागम के भाषण की कुशलता की प्रशंसा की और कहा कि आपने बड़े अच्छे ढंग से भाषण दिया; आपका भाषण बड़ा प्रभावशाली और लाभदायक था। उनकी हिं-हिं के शब्दों वाली हँसी जारी हो गयी।

वास्तव में मैंने..............बनाया जाता है ! उन्हें...

प्रस्तुत अवतरण उपेन्द्रनाथ 'अश्क' लिखित 'अधिकार का रक्षक' नामक पाठ से लिया गया है। इन पंक्तियों का प्रसङ्ग घनश्यामदास जी की हरिजन-सभा के मन्त्री रत्नागम जी से टेलीफोन पर बातचीत का है। सेठ घनश्यामदास जी आत्म-प्रशंसा में उनसे अपने विचार प्रकट कर रहे हैं और साथ ही साथ अपना बड़प्पन।

घनश्यामदास जी कहते हैं कि मैं हरिजनों का प्रारम्भ से ही बड़ा सच्चा सेवक रहा हूँ। दुखी लोगों, समाज द्वारा कुचले हुए लोगों और ठोकर देकर हेय और निम्न बनाए हुए लोगों की सेवा करने तथा उनको श्रेष्ठ बनाने में मैंने अपने जीवन में सारा समय उन्हीं के लिए लगा दिया है। सचमुच मेरा सारा समय ऐसे ही कार्यों में बीता है। अगर आप हमारे समाज के बच्चों की हालत का विचार करें तो हम लोगों के भारतीय परिवारों की हालत अत्यन्त बुरी और गयी-गुजरी है, जो चिन्ता का विषय है। उनका पालन-पोषण तथा उनके पढ़ाने-लिखाने के ढंग में कोई दम नहीं, कोई फायदा नहीं। उसका कोई उचित लाभ बालकों को नहीं मिलता। न उनका शरीर बलवान होता है और न उन्हें ज्ञान प्राप्त होता है। वह सब ढंग प्राचीन काल में जिस प्रकार का था उसी प्रकार बेढंगा, व्यर्थ और दिखावा से भरा हुआ है। उनकी शारीरिक शक्ति को बढ़ाने के लिए कोई उचित उपाय नहीं होता। उन पर व्यर्थ का डर तथा अंकुश आदि के गलत ढंग का प्रयोग करने से वे बड़े होकर भय खाने वाले तथा कायर और डरपोक स्वभाव के हो जाते हैं। उनमें उत्साह, साहस, वीरता नहीं रहती। कुछ करने से वे डरते हैं।

तो मैं कह रहा था कि.................मैं धारा-सभा में गया तो...

प्रस्तुत गद्यांश 'अधिकार का रक्षक' नामक पाठ से लिया गया है। इसके

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यशस्वी लेखक श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' हैं। सेठ घनश्यामदासजी की मंत्री रद्वारा से टेलीफोन पर बातचीत प्रारंभ है। उनका छोटा लड़का बलराम आकर मेले ले चलने का आग्रह करता है। किन्तु बातचीत में शोर-गुल के कारण विघ्न होने पर वे गुस्से में आकर बालक को मारपीट कर तथा नौकर को झिड़ककर फाटक के बाहर निकाल दरवाजा बंद करने के पश्चात् बातचीत का क्रम शुरू करते हैं। अभी उन्होंने लड़के को जो मारा-पीटा है तथा नौकर के साथ जैसा व्यवहार किया है उसका खंडन तथा असंगति उनकी इस बातचीत में मिलती है। यह बड़ी कुशलता से प्रदर्शित होता है।

घनश्यामदास जी कहते हैं कि मैं यह बतला रहा था कि इस समूचे प्रदेश में बच्चों के प्रति प्रेम, सहानुभूति और सरलता का व्यवहार अन्य कोई करने वाला नहीं है। बच्चों के साथ लोग कठोरता का व्यवहार करते हैं उन्हें घर और पाठशालाओं में मारा-पीटा जाता है। मैंने इसके विरुद्ध आवाज उठाई और आन्दोलन किया ताकि बच्चों के साथ कठोरता का व्यवहार बंद हो जाय। मेरी आवाज उठाने और आन्दोलन करने का प्रभाव यह हुआ कि अब स्कूलों और पाठशालाओं में बच्चों को दण्ड नहीं दिया जाता, उनको छड़ी आदि से नहीं पीटा जाता। इन सब व्यवहारों को तुरन्त बन्द कर देने के लिए मैंने ही जोरदार आन्दोलन तथा प्रयत्न किया। बालकों के इस कार्य के अलावा मैंने असहाय और लाचार नौकरों के लिए भी बड़ा कार्य किया है। बेचारे ये नौकर सीधे-साधे होने के कारण अपने कठोर और निर्दयी मालिकों से मार खाते हैं, डांटे और पीटे जाते हैं। उन पर तरह-तरह का अन्याय होता है। उस व्यवहार को वे नित्य ही लाचार होकर चुपचाप भोगते रहते हैं। ऐसे मालिकों के कठोर व्यवहार और बर्त्ताव को बिलकुल समाप्त कर देने के लिए मैंने नौकरों में संघटन लाकर उनका एक संघ बनाया। इतना ही नहीं मैंने हरिजनों, जिन्हें लोग छूते नहीं, जिनसे दूर रहते हैं उनकी भी सेवा की है। मैं ब्राह्मण हूँ और ब्राह्मण तो हरिजनों की छाया से भी भागते हैं, किन्तु इसका बिना विचार किये मैंने महान् और श्रेष्ठ आदर्श उपस्थित करते हुए अछूतों की तरफ़दारी की है। उनके अधिकारों और हकों को दिलाने, जीवन की समान सुविधा और समाज

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

में बराबर स्थान सुलभ कराने के लिए मैंने ऐसा कठोर परिश्रम और प्रयत्न किया है कि दिन-दिन और रात-रात भर अपनी सुध-बुध भूलकर मैंने उस काम के अलावा और कुछ नहीं किया। ईश्वर की कृपा से यदि मैं व्यवस्थापिका सभा में स्थान पा गया और सदस्य बन गया तो भी हरिजनों के लिए बहुत कुछ करूँगा।

तुझे तो कहा था, इधर ... ... समर्थन किया है।

शब्दार्थ—आई=यह भी। कऊ=कोई। इत्तला=सूचना, खबर। देई=देना। मुदा=परन्तु, लेकिन। विनीत स्वर=नम्र शब्दों में, धीरे। मार्ग=रास्ता। बक-बक करना=व्यर्थ का बोलना। अकड़ना=कड़े शब्दों में बात करना जिससे ढिठाई प्रकट हो। मामला=मुकदमा। अपराध=गल्ती, दंड। आँखों में धूल झोखना=सरासर बेईमानी करना। बलिष्ठ=शक्तिशाली, मजबूत। नख से शिख तक=ऊपर से नीचे तक। मार लेना=किसी का पैसा या धन न देना या दबा बैठना। नामाकूल=नालायक, अयोग्य, फालतू आदमी। वक्तव्य=भाषण। हलचल मचना=लोगों में अधीरता, घबराहट, दौड़-धूप करने का प्रभाव पड़ना। सहानुभूति=प्रेम, अपनेपन का भाव। क्षेत्र=कोई सीमित या निश्चित स्थान। कृतज्ञ=किसी के किये हुए उपकार को मानने वाला। निश्चिन्त=चिन्ता रहित। अवस्था=हालत। बेपरवाह=लापरवाह, असावधान विवश=लाचार, मजबूत। हाथ तङ्ग होना=रुपये पैसे की कमी होना। कारोबार=रोजगार। विरुद्ध=विपक्ष में। सोलहो आने=पूर्णतः। प्रतीत=मालूम, विदित, ज्ञात। प्रवाहिका=एक प्रकार का रोग, किसी वस्तु के जोर से बहने या चलने का। प्रयास=कोशिश, प्रयत्न। तकल्लुफ=दिखावटी शिष्टाचार। जबरजस्ती=बलपूर्वक। फार्माना=कहना। निबटा देना=कोई कार्य समाप्त या पूरा करना। लाख चाहना=हर प्रकार से कोशिश करना। रिपोर्ट=सूचना। प्रतीक्षा=राह देखना। निवेदन=विनती, प्रार्थना। असम्भव=नामुमकिन, जो न हो सके। स्वास्थ्य=शारीरिक शक्ति। सकटड़ी=सेक्रेटरी का बिगड़ा हुआ रूप। मुँह फुलाना=किसी बात के कारण असन्तुष्ट होना।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अधिकार=हक। संघ=समूह, दल, संघटन। हिमायत करना=समर्थन करना।

सच है बाबूजी ... ... नाम पर सहस्रों ...।

यह गद्यांश श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' लिखित 'अधिकार का रक्षक' नामक पाठ से लिया गया है। सेठ घनश्यामदास के पास आकर उनका नौकर अपना बाकी हिसाब बड़ी विनय पूर्वक माँगता है। जिस पर एक रुपया मुश्किल से देते हुए वह अपनी हालत बदलता है तथा वेतन के हिसाब की बात कहता है तो वह उन्हें बक बक करना मालूम होता है। वे क्रोध से भरकर वस्तुओं आदि की खरीद में रुपया बचाने वाला तथा चोर बेईमान बतलाकर जेल भिजवाने की बातें कहते हैं। उसको सुनकर नौकर से रहा नहीं जाता। वह भी इन पंक्तियों में कुछ कहता है। इस अवतरण का यही प्रसङ्ग है।

नौकर भगवती कहता है कि आप मुझे बेईमानी और चोरी का अपराधी कह कलंकित कर रहे हैं। मैं गरीब हूँ और गरीब आदमी चाहे ईमानदारी से सचाई से पूरा-पूरा काम कर अपनी सचाई के व्यवहार का पालन करे, फिर भी वे चोर और डाकू ही समझे और कहे जाते हैं। उनकी ईमानदारी और सचाई की कोई कीमत नहीं। आप भी उन्हें चोर-डाकू कहें और समझें किन्तु यह बतावें कि जो धनवान लोग तरह-तरह की बेईमानी और छल-कपट के द्वारा दूसरों को ठग कर उनका रुपया हड़प लेते हैं। हजारों रुपये इस प्रकार दूसरों के छीन लेते हैं। जनता से चन्दे के रूप में इकट्ठा किया हुआ धन चन्दे के कार्य में ठीक-ठीक खर्च न कर अधिकांश बचा लेते हैं या पूरा ही हजम कर जाते हैं। तथा इस प्रकार धन इकट्ठा कर अमीर बनते हैं, क्या ऐसे लोग वास्तव में चोर और डाकू नहीं। वे भी तो चोर और डाकू हैं।

इस ओर से आप························धारा-सभा में पेश करूँगा।

प्रस्तुत पद्यांश प्रसिद्ध एकांकीकार श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' लिखित 'अधिकार का रक्षक' नामक पाठ से लिया गया है। होजरी यूनियन के मंत्री का टेलीफोन पाकर वे टेलीफोन पर उनसे वोट के सम्बन्ध में पूछते हैं। घनश्यामदास से वे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मंत्री किसी कार्य के लिए कहते हैं। प्रस्तुत अवतरण का यही प्रसङ्ग है। घनश्यामदास उनका उत्तर देते हुए अपनी प्रशंसा और कार्यों की लम्बी भूमिका सुनाते हैं।

घनश्यामदास कहते हैं कि आपका यह कार्य हो जायगा। इसकी आप जरा भी चिन्ता न करें। मैं अपने कथन का पूरा-पूरा पालन करने वाला सच्चा आदमी हूँ। जो कुछ किसी को कह देता हूँ उसके लिए वह अवश्य करता हूँ। मैं व्यर्थ की डींग नहीं हाँकता मेरे कार्य वास्तव में होते हैं और तब मैं उस सम्बन्ध में कुछ कहता हूँ। मैंने चुनाव के सम्बन्ध में अपनी कुछ बातें आप लोगों के लिए समाचार-पत्र में छपवायी है, जा शायद आपने नहीं पढ़ी तो आपको मेरे कार्य और मेरे कथन का पूरा-पूरा विश्वास हो जाता। व्यवस्थापिका का सदस्य बनकर काम संभालते या प्रारंभ करते ही पहला कार्य मैं यह करूंगा जिससे मजदूरों की बुरी हालत सुधरे। यह ही वहाँ पहुँचने पर मेरा पहला कार्य होगा। मजदूरों के सम्बन्ध में उनकी उन्नति करने वाला तथा उनकी आवश्यकता की पूर्तिके लिए उन्होंने जो बातें कही हैं, जो सुविधाएं माँगी हैं मैं एक कानून पास करने के लिए व्यवस्थापिका सभामें रखूंगा, जिससे उनके शरीर और शक्ति की रक्षा होगी। उन्हें शिक्षा की सुविधा मिलेगी और उनकी अन्य जरूरतें भी पूरी हो सकेंगी।

दो लड़के प्रवेश करते हैं....................कहीं नजर न आयेगा।

शब्दार्थ—वक्तव्य=भाषण। बहुमत=अधिक मत, लोगों की अधिक संख्या। प्रतिनिधित्व करना=दूसरे की ओर से नियुक्त होकर उसके भले के लिए कोई कार्य करना। रिफार्म=सुधार। खौफ=डर। कन्नी न कतराना=इधर-उधर भागकर बचना। सर्वेसर्वा=सब कुछ करने की शक्ति संपन्न व्यक्ति जिसके हाथ में किसी संस्था या संघटन का सारा अधिकार हो। प्रोटेस्ट=विरोध। वर्तमान=आजकल के। अपमान-जनक=अनादर करने वाला। वैधानिक=उचित, नियम के अनुसार। प्रयोग=व्यवहार। असन्तोष=अतृप्ति, अपूर्ण या अधूरा सन्तोष। परवाह करना=ध्यान देना। व्यवस्थापक=प्रबन्ध करने वाले। जूँ तक न रेंगना=जरा भी कहने का प्रभाव न होना। अन्यमनस्कता=उदासीनता, लापरवाही। उपस्थित=हाजिर। आफत=संकट।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बगुले की भाँति=उक्त पक्षी की तरह ऊँची गर्दन कर, तन कर चलते हुए। पूर्ववत=पहले की तरह। दृष्टि जमाना=किसी ओर लगातार देखते रहना। दिमाग चाटना=व्यर्थ परेशान करना। तुनक कर=चिढ़कर गुस्से से। ताँता लगा रहना=क्रम जारी रहना। नौबत=हालत, स्थिति। आकाश सिर पर उठा लेना=उपद्रव मचाना। उन्मादी=पागल। तड़ातड़=लगातार पीटना जिससे तड़-तड़ की आवाज होती है। बेजारी=अप्रसन्नता या नाराजी। इडियट्स=मूर्ख। आभारी=कृतज्ञ, ऋणी। उम्मीदवार=चुनाव के लिए खड़े होने वाले लोग। रक्षक=रक्षा करने वाला।

और मैंने गलत ही क्या.....................कभी न कतराये।

प्रस्तुत अवतरण 'अधिकार का रक्षक' नामक पाठ से लिया गया है। इसके प्रसिद्ध लेखक हैं श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क', घनश्यामदास जी अभी संपादक जी की बातों, उनकी मांग सुनने तथा उनको समझाकर काम करने के लिए तैयार करने में ही व्यस्त हैं इसी बीच दो लड़कों के आने की सूचना नौकर देता है। वे प्रवेश करते हैं और उनके आने का कारण बतलाने के पहले ही विद्यार्थियों से सम्बन्धित अपने भाषण के सम्बन्ध को जोड़कर वे उन छात्रों से जो कहते हैं वही इसका प्रसङ्ग है। छात्रों पर भाषण का प्रभाव तथा उनकी ओर बहुमत के एकाएक हो जाने की बात लड़के से सुनकर वे कह उठते हैं।

मैंने अपने भाषण में छात्रों के हित की सच्ची-सच्ची बात ही कही थी जो पत्र में छपी है। जिन लोगों के मन में यौवन की शक्ति और स्फूर्ति नहीं उनसे छात्रों की भलाई के लिए कुछ कार्य करने व उनके नेतापद की नियुक्ति को सफलता के साथ उचित ढंग से निबाहने का कार्य जरा भी नहीं हो सकता। ऐसे लोगों के उच्च पद पर चुने जाने से विद्यार्थियों का कोई लाभ नहीं। युवकों विद्यार्थियों और नवजवानों को ऐसे नेता की आवश्यकता है जो बूढ़ा भले ही हो किन्तु उसके विचारों में ताजगी, स्फूर्ति और यौवन की उग्रता और प्रचण्डता हो। जो स्वतंत्र और नये विचारों को समझ सके और पसन्द करे। ऐसे नये विचारोंसे डरने घबड़ाने या दूर भागकर किसी तरह अपनी जान बचाने वाले नेता की जरूरत विद्यार्थियों को नहीं है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कई बार आवेदन-पत्र.................................उपस्थित हुए हैं।

प्रस्तुत अवतरण 'अधिकार का रक्षक' नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक प्रसिद्ध एकांकीकार श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' हैं। छात्रों के दो प्रतिनिधि सेठ घनश्यामदास के वक्तव्य से प्रभावित होकर छात्रों की कठिनाइयों को उन्हें सुनाने तथा उनसे सहायता प्राप्त करने के उद्देश्य से आये हैं। उनमें से टाईवाला लड़का अपनी कठिनाई और उद्देश्य इन पंक्तियों में स्पष्ट कर रहा है।

टाईवाला, दूसरा लड़का बतलाता है कि छात्रों का प्रिन्सिपल से असन्तोष है। उस असन्तोष की सूचना प्रबन्धकारों से की है। अपनी असुविधाओं और शिकायतों को लिखकर कई प्रार्थनापत्र कालेज की व्यवस्था करनेवाली संस्था के पास हम लोगों ने बराबर भेजे हैं और कठिनाई दूर करने की प्रार्थना की है, किन्तु कमेटी के सदस्यों पर उनका जरा भी असर नहीं पड़ा। उन लोगों ने हमारी परेशानियों की ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया मानों उन्हें कुछ मालूम ही न हो। वे लोग हमारे लिए कुछ भी नहीं करते। हम लोग उनके चुप रहने से हार गये और थक कर हम लोगों ने उनका ध्यान खींचने के लिए हड़ताल प्रारम्भ की है। प्रबन्ध करने वाली संस्था का अत्यन्त प्रभाव है और जो कुछ उसके सदस्य कहते हैं या चाहते हैं उसी के अनुसार अखबार वाले करते हैं। विद्यार्थी समाज तथा उनकी हड़ताल के सम्बन्ध में गलत-गलत और असत्य बातें वह कमेटी अखबारों में छपवाती है। हम लोगों के सम्बन्ध में भ्रम उत्पन्न करने वाली बातें बराबर पत्रों में छप रही हैं, किन्तु सच्ची बातें और समाचार उस कमेटी के प्रभाव के कारण पत्रों में नहीं छापे जाते। आपने दृढ़ निश्चय करके विद्यार्थियों की सहायता तथा उनके हकों के बचाव करने का कार्य प्रारम्भ किया है। हमारा यहाँ आने का उद्देश्य वही आपकी सहायता प्राप्त करना है ताकि सारे विद्यार्थी समाज की कठिनाइयाँ दूर हों। उन्हें जो सुविधाएँ चाहिये वे मिलें।

तुझे कितनी बार कहा है................ ......जबान पर न लायेंगे।

स्तुत अवतरण 'अधिकार का रक्षक' नामक पाठ से लिया गया है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रसिद्ध लेखक श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' का यह एक उत्कृष्ट एकांकी है। सेठ घनश्यामदास ने अपने बालक बलराम को पीट-पाटकर भगा दिया था और दरवाजे बन्द कर वे टेलीफोन पर बात चीत तथा लोगों से भेंट कर रहे हैं। उन्होंने सम्पादक से बातचीत समाप्त भी न की थी कि उनकी पत्नी श्रीमती सेठ ने उस बच्चे के बाजू को पकड़कर तनकर आते हुए सेठ जी को बच्चे को मारने के कारण बुरा-भला कहा श्रीमती सेठ ने सेठजीपर अपना गुस्सा न उतार पाने के कारण चिढ़कर बच्चे को पीटना ही प्रारम्भ किया। साथ ही साथ वे सेठ जी के व्यवहार पर अपना गुस्सा और अपनी चिड़चिड़ाहट एवं खींच प्रकट करने वाले शब्द भी कहती जाती हैं। इन पंक्तियों का यही प्रसङ्ग है।

बालक बलराम को पीटते हुए वे उनसे कहती हैं कि मैंने कई बार तुमको इस कमरे में आने के लिए मना किया है, किन्तु तूने नहीं माना। तू इनको पिता समझकर प्यार से इनके पास आता है। इनके पास वह प्यार नहीं ये तो हृदय में तुम्हारे लिए वैर का भाव रखने वाले दुश्मन हैं। इसी प्रकार का अपने बेटे से व्यवहार इनके पास है। ये दूसरों के लड़कों से प्यार कर सकते हैं, उन दूसरे लोगों के बच्चों के सिर को अपने हाथों से सहलाकर ये प्यार उन बच्चों से प्रकट कर सकते हैं। वे ऐसा नियम उपस्थित कर सकते हैं, उसको स्वीकृत करा सकते हैं जिससे दूसरे के बच्चों का शरीर हृष्ट-पुष्ट हो उनको सुविधाएँ मिलें उस सम्बन्ध में ये जगह-जगह पर लम्बे-चौड़े भाषण दे सकते हैं जिससे बच्चों के स्वास्थ्य के प्रश्न की आवश्यकता का लोग अनुभव करें, किन्तु अपने घर के बच्चों के लिए ये कुछ भी नहीं कर सकते। और बात तो छोड़ दो अपने बच्चों को ये पिता के दुलार से भरकर कभी भी एक बार भी उसे प्यार से नहीं पुकार सकते। फिर भी तू यहाँ इनके पास क्यों आता है।

मैं कहता हूँ, तुम ... ... भी चला जाऊँ ?

प्रस्तुत गद्यांश 'अधिकार का रक्षक' नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक प्रसिद्ध एकांकीकार श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' हैं। बच्चे को मारने के कारण क्षुब्ध होकर सेठ घनश्यामदास की पत्नी उन्हें बुरा-भला कह कर अपना गुस्सा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उतारने व लज्जित करने के लिए उनके पास आती हैं, किन्तु उसका उनके व्यवहार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। श्रीमती सेठ ने यह देखकर बच्चे का सिर तख्त पर मारते हुए उसे खूब पीटना प्रारम्भ किया। इन पंक्तियों का प्रसङ्ग उसी समय का है।

घनश्यामदास बालक को पीटते हुए देखकर पत्नी से कहते हैं कि तुम्हारे होश-हवास उड़ गये हैं, तुम्हारा दिमाग ठिकाने नहीं। अगर तुम बच्चे को मारना चाहती हो, तो अलग ले जाकर उसे मारो। अलग ले जाकर ही उसका सिर पटको या जो चाहो उसका करो, किन्तु मुझे परेशान न करो। तुम्हारी रोज की जली-कटी बातों को न सुनना पड़े इस कारण मैं यहाँ पर अकेले में चुपचाप और शान्त जगह में रहने लगा हूँ। तुम लड़ती-झगड़ती और ऊधम मचाती रहती हो, जिससे मैं थक गया हूँ। किन्तु तुम यहाँ पर भी मुझे शान्ति और चैन से नहीं रहने देती। ऊधम, शोरगुल और झगड़ा मचाना यहाँ भी तुमने प्रारम्भ कर दिया, जिससे बचने के लिए मैं यहाँ तुम लोगों से दूर ही बना रहता हूँ। शायद तुम्हारी यह इच्छा है कि मैं यहाँ न रहने पाऊँ। मेरा यहाँ भी रहना तुम्हें अच्छा नहीं लगता।

मैं आपका अत्यन्त आभारी·················नजर न आयेगा।

प्रस्तुत अवतरण 'अधिकार का रक्षक' नामक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक प्रसिद्ध आधुनिक साहित्यकार श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' हैं। श्रीमती सेठ अपने पति के व्यवहार से तङ्ग आकर और लाचार हो पीहर जाने की बात सुनाकर गुस्से के साथ तेजी से बच्चे को लेकर चली गयी। सेठ जी अखबार पढ़ने में लगे थे कि एक बार व्यर्थ टेलीफोन की घण्टी से परेशान होकर दूसरी ...र घण्टी की आवाज सुनकर उन्होंने टेलीफोन उठाया। टेलीफोन पर महिला समाज की श्रीमती सरला देवी से उन्होंने बड़े मीठे शब्दो में बातचीत करते हुए अपने चुनाव में सहायता देने के सम्बन्ध में पूछा। उनके उत्तर से प्रसन्न होकर उन्होंने फिर जो कुछ कहा वही इन पंक्तियों का विषय है।

सेठ घनश्यामदास कहते हैं कि आपने हमारे चुनाव के लिए जो कार्य किया है, या सहायता देने का जो निश्चय प्रकट किया है, उसके लिए मैं आपका ऋणी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और चिर-कृतज्ञ हूँ। मैं आपके इन उपकारों को कभी नहीं भूल सकता। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ, आप सच मानिये कि स्त्रियों को समाज में उचित स्थान, आदर और स्वतन्त्रता-समानता दिलाने तथा उनके इन हकों को प्राप्त करा कर उनकी रक्षा करने की मैं पूरी-पूरी और अपनी सारी शक्ति लगाकर कोशिश करूँगा। मेरे कारण उनके अधिकारों पर कोई अत्याचार या प्रहार न कर सकेगा। उनके हक और उनकी समान सुविधायें सदा बनी रहेंगी। कोई भी कभी उन्हें छीन न सकेगा। ऐसे तो व्यवस्थापिका-सभा के चुनाव के लिए बहुत से व्यक्ति सदस्य बनने के लिए खड़े हुए हैं और अपने लिए वोट देने को कह रहे हैं। किन्तु मैं ही एक ऐसा व्यक्ति हूँ जो स्त्रियों के अधिकारों की रक्षा करने की योग्यता, शक्ति तथा हृदय में सच्ची कामना और इच्छा रखता हूँ। अन्य किसी में भी वह सामर्थ्य, वह योग्यता या बात नहीं जो मुझमें है। इस बात को आप सत्य समझिये कि अधिकार का रक्षक, मुझ जैसा अन्य कोई न मिलेगा।

प्रश्न—नाटक के कथानक को संक्षेप में लिखें ?

उत्तर—सेठ घनश्याम दास जी अपने सजे-सजाये ड्राइंग-रूम में अखबार पढ़ते हुए बैठे हैं। टेलीफोन की घण्टी बजने पर वे टेलीफोन उठाकर हरिजन-सभा के मन्त्री रत्नाराम जी से नमस्ते आदि के पश्चात् पिछले दिन के उनके भाषण के सम्बन्ध में बातचीत करते हैं। पीड़ितों-पददलितों की सेवा तथा बच्चों के पालन-पोषण सम्बन्धी अपने विचारों का उल्लेख कर आत्म-प्रशंसा का लम्बा प्रसङ्ग छेड़ बैठते हैं। इसी बीच उनका छोटा बालक बलराम आकर मेले में ले चलने की बात कहता है। वे टेलीफोन रखकर क्रोध से बच्चे के कान पकड़ उसे बाहर कर देते हैं और बच्चे को न सँभालने और वहाँ आने से न रोकने के कारण अपने नौकर रामलखन को डाँटते-डपटते व अपशब्द कहते हैं। फिर टेलीफोन उठाकर अपने विचारों का क्रम और लम्बा भाषण जारी रखते हैं। वे बच्चों की शिक्षा आदि में सुधार तथा हरिजनों को जीवन की सुविधा देने के अपने कार्य का उल्लेख करते हैं जो वे धारा-सभा के चुनाव में सफल हो जाने पर सबसे पहले करेंगे। इसी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बीच भङ्गिन की मजूरी माँगने की सूचना उनका नौकर आकर देता है। जिसे वे अगले महीने में आने के लिए कहकर समय न होने से चले जाने के लिए कहते हैं। इसी समय उनका दूसरा नौकर भगवती आकर अपनी गरीबी की हालत और तीन-तीन महीने के बाकी वेतन की माँग प्रकट करता है जिसे वे एक रुपया फेंककर भगा देना चाहते हैं। उस एक रुपये से गुजारा न होने पर जब वह और माँग करता है तो वे उसे चोर-डाकू बतलाकर, बेइमान कह कर चोरी के झूठे अपराध में छः महीने के लिए जेल भिजवा देने का डर दिखलाते हैं। वह चोर-डाकू और बेईमान बनाए जाने से तिलमिलाकर जब अमीरों के वैसे कार्यों का उल्लेख करता है, तो वे अत्यधिक गुस्से में भरकर पहले नौकर को बुलाकर उसको घर से बाहर निकाल देने की आज्ञा देते हैं। किन्तु स्वयं उसे पीटकर बाहर निकाल देते हैं।

सेठ जी घूमकर इधर-उधर चहल-कदमी कर समाचार पत्र में अपने निकले हुए भाषण के बारे में सोच रहे हैं, जो छात्रों के सम्बन्ध में था। इसी बीच होजरी यूनियन के मंत्री से टेलीफोन पर घंटी बजते ही बात प्रारम्भ करते हैं। इनसे भी अपने लिए वोट देने की बात को जानकर और मजदूरों के समर्थन की प्राप्ति सुनकर मजदूरों की हालत पर लम्बा भाषण दे डालते हैं, जिससे उनका उद्देश्य मंत्री को अपने प्रभाव में लाकर वोट के लिए मजदूरों को तैयार करवाना था। मजदूरों के प्रति हमदर्दी और सहानुभूति का लम्बा भाषण समाप्त नहीं होता कि पत्र के सम्पादक आ पहुँचते हैं, जिसके मालिक वे ही थे। सम्पादक जी आकर बड़ी मुश्किल से अपनी आँखों और स्वास्थ्य की खराबी तथा अत्यधिक परिश्रम के कारण एक और व्यक्ति को रखने की प्रार्थना करते हैं। किन्तु पत्र से लाभ न होने के कारण वे अपनी असमर्थता तथा अगले महीने उनके पाँच रुपये बढ़ा देने की उदारता प्रकट करते हैं। इसी बीच नौकर रामलखन दो लड़कों के आने की सूचना देता है जो छात्र थे। इनके पिछले पत्र वाले भाषण से प्रभावित होकर अपनी कठिनाइयों को दूर करने के लिए कालेज के वे छात्र आए थे। उनमें से एक छात्र बतलाता है कि उनके भाषण का इतना प्रभाव छात्रों पर पड़ा है कि वे सेठ जी को तीन चौथाई बहुमत प्राप्त हो

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जायगा। दूसरा छात्र वर्तमान प्रिन्सिपल से असन्तोष, हड़ताल, प्रबन्ध कमेटी के सदस्यों की उदासीनता तथा उनका झूठा प्रचार तथा पत्रपर उनके गहरे प्रभाव की बात कहता है। सेठ जी से वह सहायता के लिए आने का अपना उद्देश्य स्पष्ट करता है। सेठ जी सम्पादक से उनकी मांगें आदि छाप देने के लिए कहकर छात्रों को विदा तो कर देते हैं, किन्तु उनके चले जाने के पश्चात् सम्पादकसे उनके वक्तव्य आदि जरा भी छापनेकी मनाही कर देते हैं क्योंकि प्रिन्सिपल उनके समर्थक और प्रबन्धक कमेटी के सदस्य उनके मित्र थे। छात्रों के चले जाने पर सम्पादक जी अपनी प्रार्थना को फिर दोहराते हैं और सेठ घनश्यामदास जी चुनाव हो जाने के पश्चात् प्रबन्ध कर देने की बात कह सम्पादक जी को विदा करते हैं।

सेठ घनश्यामदास जी अखबार पढ़ना प्रारम्भ करते ही हैं कि उनकी पत्नी उस बच्चे का बाजू पकड़े हुए तेजी के साथ गुस्से से प्रवेश करती हैं, जिसको सेठ जी ने कान पकड़कर बाहर कर दिया था। उनकी पत्नी बच्चों के प्रति रूखे व्यवहार तथा उदासीनता के कारण उन्हें खूब जली-कटी सुनाती हैं जिसका उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अतः चिढ़कर क्रोध से बावली हो वे बच्चे को ही जोरों से पीटने तथा उसका सिर तख्त पर पटकने लगती हैं। इस कार्य के कारण सेठ जी उन्हें पागल बतलाकर दूर अलग जाकर बच्चे को जी भर मारने-पीटने के लिए कहते हैं क्योंकि उनकी शान्ति भंग होती है और पत्नी के शोर-गुल से तंग आकर ही वे एकान्त में रहने की बात कहते हैं। पत्नी के समाज सेवा के उनके कार्यों पर ताना मारने और पश्चात् पीहर चले जाने की बात कहकर तेजी से कमरे से भाग जाने पर वे दरवाजा बन्द कर आराम कुर्सी पर बैठ अखबार पढ़ते हैं कि टेलीफोन की घंटी बज उठती है। वे बड़े मीठे स्वर से टेलीफोन करने वाली महिला समाज की श्रीमती सरला देवी से बातचीत प्रारम्भ करते हैं। उस महिला ने सेठ जी को वोट पाने की आशा दी। जिसके लिए वे अत्यधिक कृतज्ञता प्रकट कर अपने को महिलाओं के अधिकारों का सर्वश्रेष्ठ रक्षक घोषित करते हैं। धारा-सभा के उम्मीदवारों में वे सबसे योग्य अपने को ही बतलाते हैं। उस महिला पर भी वोट दिलाने की आशा में आत्म प्रशंसा द्वारा प्रभाव डालते हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस प्रकार संक्षेप में 'अधिकार का रक्षक' का कथानक एक ऐसे व्यक्ति के चरित्र को प्रस्तुत करता है जो कहते कुछ हैं और करते कुछ और। सेठ घनश्यामदास का अधिकार का रक्षक बनने तथा उसी की तैयारी में उनके चरित्र की खूबी को दिखलाने वाली घटनाओं का चुनाव कथानक में बड़ी खूबी के साथ हुआ है। सामाजिक व्यंग्य तथा चरित्र की हास्यास्पद विशेषता से इस कथानक का कुशल निर्णाण हुआ है।

——:o:——

मुद्रक—आर० एस० धवन, कमर्शियल प्रिंटिंग वर्क्स, गायघाट, बनारस।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मूल्य : २॥)

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi